चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य
कुब्जा सुन्दरी
और अन्य कहानियाँ
सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य
कुब्जा सुन्दरी
और अन्य कहानियाँ
सस्ता साहित्य मंडल
प्रकाशन

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य
कुब्जा
सुन्दरी
और अन्य कहानियाँ
सस्ता साहित्य मंडल
प्रकाशन

कुब्जा सुन्दरी
और
दूसरी कहानियाँ

श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य की सोलह मौलिक कहानियों का संग्रह

●

अनुवादिका
श्री शान्ति भटनागर, एम. ए.

१९५४

सस्ता साहित्य मण्डल-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल
नई दिल्ली

तीसरी बार : १९५४
कुल छपी प्रतियां ८०००
मूल्य
दो रुपये

मुद्रक
उद्योगशाला प्रेस
किंग्सवे दिल्ली-

लेखक की ओर से

ये कहानियां मूलतः तमिल में लिखी गई थीं और विभिन्न तमिल पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई थीं। इनका अंगरेजी अनुवाद मेरे पुत्र स्वर्गीय डाक्टर सी० आर० रामस्वामी ने किया था। उसीके आधार पर श्रीमती शांति भटनागर ने इनका हिंदी-रूपान्तर किया है।

ये कहानियां सन् १९२५ से लेकर अबतक भिन्न-भिन्न अवसरों पर लिखी गई हैं। यहाँ वे तिथि के अनुसार क्रमबद्ध नहीं की गई हैं।

नई दिल्ली,
दिसम्बर, १९४६

—च० राजगोपालाचार्य

सूची

कुब्जा सुन्दरी

: १ :

कुब्जा सुन्दरी

"उन्हें कुछ भी हो ; हमें क्या ? ऐसी बातों में पड़ना खतरनाक होता है। मेरा कहना मानो और ऐसा मत करो।"

खतरे की कोई बात नहीं है, कामू ! वह हमारी लिखावट नहीं पहचानते और अगर उन्हें मालूम भी हो जाय तो क्या ? एक मज़ाक ही सही।"

"अच्छी बात है ; लेकिन तुम खुद लिखो ; मैं अपनी कलम से नहीं लिखूँगी।"

"यही सही; लाओ मुझे दो, मैं लिखूँगी। इसमें मुश्किल ही क्या है ?"

यह बातचीत लड़कियों के वीरेशलिंग होस्टल के एक कमरे में हुई। कमला और कामाक्षी बी० ए० में पढ़ती थीं। उन्होंने मिलकर शरारत से भरा हुआ एक गुमनाम पत्र लिखा—

"गीता-प्रसंग-शिरोमणि नरसिंह शास्त्री को हमारा प्रणाम !

महानुभाव, वीरेशलिंग होस्टल की हम छात्राएँ आपकी सेवा में नम्रतापूर्वक निम्नलिखित प्रार्थना-पत्र भेजती हैं—

हम आपकी उस भावना का आदर करती हैं, जिसके कारण आपने अपने बड़े पद का त्याग किया और ईश्वर-भक्ति से प्रेरित होकर सर्वसाधारण को पुराने शास्त्रों के समझाने का धार्मिक कार्य उठाया।

जैसा प्रतिभाशाली भाषण आपने पिछले रविवार को वसन्त हॉल में दिया था, वैसा हमने आजतक नहीं सुना। अबतक कोई भी व्यक्ति गीता या उपनिषदों के मर्म इतनी सुन्दरता के साथ नहीं समझा पाया है। किंतु क्या कारण है कि जो सत्य आप दूसरों को इतनी अच्छी तरह समझाते हैं उससे खुद लाभ नहीं उठाते?

क्या आपने अपने भाषण में यह बात बहुत ही अच्छे ढंग से नहीं समझाई थी कि विषय-भोग की ओर से हमें अपने विचार उसी प्रकार समेट लेने चाहिएँ जिस प्रकार कछुआ अपनी खोपड़ी के अंदर अपने सारे अंग समेट लेता है? और, क्या आपने यह भी नहीं कहा था कि हमारी पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ पाँच घोड़ों की तरह हैं जिनकी रास कसकर रखनी चाहिए, नहीं तो वे हमारे काबू से बाहर चली जायँगी और हमें ख़तरे में डाल देंगी? फिर आपने अपने उपदेशों का स्वयं पालन क्यों नहीं किया? आपने वहाँ दो घण्टे तक भाषण दिया और इस बीच एक बार भी लड़कियों की ओर आंख उठाकर नहीं देखा। जिन लोगों ने वहां आपको देखा उन्होंने आपको बिना गेरुआ वस्त्रवाला एक संन्यासी समझा। लेकिन पिछले दो दिनों का आपका आचरण इस बात को झूठा सिद्ध करता है। आप पुण्य के मार्ग से बुरी तरह हट रहे हैं और पाप के गड्ढे में गिरने ही वाले हैं। ऐसा मालूम होता है कि आपको अपनी आँखों पर वश नहीं रह गया है। हममें-से कुछ ने तो आपके बारे में प्रिंसिपल साहब से कहने तक का इरादा कर लिया था; लेकिन फिर सोचा कि आपको बदनाम करना ठीक नहीं होगा और इसीलिए यह पत्र लिखा।

जब आपकी पत्नी का देहान्त हो गया था तो आपने प्रचलित प्रथा के अनुसार अपना दूसरा ब्याह क्यों नहीं कर लिया? कृपाकर हमारी सलाह मानिये और गीता का उपदेश देना बन्द कर अपने घर चले जाइये और ब्याह कर लीजिये। आप अभी बहुत बूढ़े नहीं हैं। हमारी समझ में अभी आप करीब पचास वर्ष के ही होंगे। हमने आपके लिए एक लड़की पसन्द की है। रेणिगुण्ट जंकशन से आगे वंकीपुर नाम का स्टेशन

है। वहीं दक्षिणी सड़क पर एक बड़ा-सा मकान है, जिसमें गोविन्दार्य नाम के एक सज्जन रहते हैं। उनके करीब बाईस वर्ष की एक कन्या है। अगर आप तैयार हों तो हम उससे आपका ब्याह तय करा देंगी। हमें बस एक इशारे की ज़रूरत है। अगर आप अपनी छत की रस्सी पर अपनी रेशमी किनारीवाली चादर फैला देंगे और उसपर अपना छाता टांग देंगे तो उन्हें हम यहाँ से देख सकेंगी और समझेंगी कि आप हमारे प्रस्ताव से सहमत हैं। इसके बाद हम सब कुछ स्वयं कर लेंगी और लड़की के घरवालों से मिलकर उन्हें राजी करा लेंगी।

आप अपनी बदनामी मत कराइये और न अपनी नेकनामी पर बट्टा लगाइये। मेहरबानी करके छत पर खड़े होकर हमें घूरा मत कीजिए।

—वीरेशलिंग होस्टल की छात्राएँ।"

२

महादानपुर नरसिंह शास्त्री ने बिना किसी शिकायत का मौक़ा दिये बारह साल तक सब-जजी की। इसके बाद वह एक साल तक जज के पद पर भी रहे। उनकी पत्नी को ब्याह के बाद पन्द्रह वर्ष तक कोई सन्तान नहीं हुई। सोलहवें साल उन्होंने एक कन्या को जन्म दिया। नरसिंह शास्त्री ने चिकित्सा और शुश्रूषा का पहले से ही समुचित प्रबंध कर रखा था। परन्तु डॉक्टरों की लाख चेष्टा करने पर भी प्रसव के सत्तरहवें दिन उनकी पत्नी का प्रसूतिका-ज्वर से देहांत हो गया।

नरसिंह शास्त्री की विधवा बहन, जो उम्र में उनसे बड़ी थी, उनके घर आकर रहने लगी और बड़े प्यार से बच्ची का लालन-पालन करने लगी। उन्होंने अपने छोटे भाई पर दूसरा ब्याह करने के लिए बार-बार ज़ोर डाला; लेकिन उन्होंने ऐसा करने से दृढ़तापूर्वक इंकार कर दिया और एक संन्यासी की तरह जीवन बिताया। उनका सारा समय या तो दफ्तर के काम में बीतता या धार्मिक पुस्तकों के अध्ययन में।

लेकिन उनके दुर्भाग्य का अंत यहीं नहीं हुआ। उनकी बड़ी बहन मना करने पर भी मार्गशीर्ष एकादशी के त्यौहार पर श्रीरंग जाने की ज़िद

करती रहीं। वहाँ जाने पर उन्हें हैज़ा हो गया और वह मर गई। उस वक्त तक बच्ची पूरी दो वर्ष की भी नहीं हो पाई थी।

एक बार फिर शास्त्री के वे सम्बन्धी, जिनके क्वारी कन्याएँ थीं, उनके पास आये। उन्होंने उनपर दबाव डाला कि अगर और किसीके लिए नहीं तो बच्ची की खातिर ही शादी कर लो। परन्तु शास्त्री ने न केवल ब्याह करने से इन्कार कर दिया, बल्कि अपनी नौकरी भी छोड़ दी। चूँकि उन्हें पुराने और नये धार्मिक साहित्य का बहुत अच्छा ज्ञान था, इसलिए वह बहुत जल्दी ही धार्मिक विषयों के एक सुन्दर उपदेशक प्रसिद्ध हो गये। मद्रास में लोग उनका व्याख्यान सुनने के लिए इतनी ही बड़ी संख्या में इकट्ठे होते जितनी कि संगीत-उत्सवों में। हर जाति के स्त्री-पुरुष—पढ़े-लिखे और अनपढ़ दोनों— उनके व्याख्यान बड़ी उत्सुकता से सुनते और उन्हें गीता-प्रसंग-शिरोमणि कहते, जिसका अर्थ था "गीता के उपदेशकों में सबसे बड़े मणि।"

इस तरह कई महीने बीत गये। परन्तु क्या पिछले जन्म का कर्म मिट सकता है? वह व्यक्ति जो इतने समय से संन्यासियों-जैसा जीवन बिताता आया था, उस बुध की रात को मूर्ख बन गया!

वह लड़कियों के वीरेशलिंग होस्टल के पीछे की गली में एक छतदार मकान में रहते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि जिस समय लड़कियाँ अपनी छत पर आकर खड़ी हुईं, करीब-करीब उसी समय वह भी अपनी छत पर आये और उन्होंने लड़कियों की ओर देखने की धृष्टता की। दो या तीन दिन तक ऐसा ही संयोग हुआ। लड़कियों को यह बात अच्छी नहीं लगी और उन्होंने उनके पास ऊपर लिखा गुमनाम पत्र भेजा!

३

डाकिये ने दरवाजे पर खटखट की। शास्त्री ने खुद जाकर चिट्ठी ली। उसे पढ़कर उनका हृदय अचानक लांछन से क्षुब्ध हो उठा और उन्होंने पत्र को जलाकर राख कर देना चाहा। किंतु कुछ सोच-समझकर उन्होंने उसे होशियारी से मोड़कर अपने थैले में रख लिया।

क्षोभ के समुद्र में मानो वह डूब-से गये । उनकी प्रतिज्ञा झूठी पड़ गई थी, उनका ज्ञान निरर्थक सिद्ध हो गया था। उन्हें बहुत ही दुःख हुआ और उनकी समझ में नहीं आया कि वह इस अपमान को कैसे सहन करें।

उन्होंने योंही एक किताब उठा ली और उसे पढ़ने की चेष्टा की, लेकिन मन नहीं लगा । बहुत प्रयत्न करने पर भी वह उस अपमान की बात को चित्त से नहीं हटा सके। "हे भगवन्, क्या मैं सचमुच पापी होता जा रहा हूँ ? सीताराम !" इस तरह गिड़गिड़ाकर उन्होंने अपने मान्य देवता का स्मरण किया और दया की याचना की ।

उस रात उन्हें नींद नहीं आई । उन्हें अपनी मृत पत्नी और बहन की याद आई और उन्होंने मद्रास छोड़कर अपने गांव चले जाने का निश्चय किया। लेकिन एकाएक उन्हें याद आया कि अगले इतवार को चिंताद्रिपेट में कपड़े के बड़े व्यापारी रामनाथ चेट्टियार के मकान पर गीता का उपदेश देना है। "इस वादे को मैं कैसे तोड़ सकता हूँ ? लेकिन मैं भाषण दूँगा कैसे ?" इन्हीं उलझनों में पड़े-पड़े वह सारी रात जागते रहे।

४

शिरोमणि की छत पर छाते या चादर का कोई संकेत न देखकर लड़कियों को बड़ी निराशा हुई । अगले दिन भी कुछ संकेत न मिला । लड़कियों को यह सोचकर बड़ा दुःख हुआ कि उनकी चाल चली नहीं ।

"कामाक्षी, अभी हमें एक दिन और इन्तज़ार करनी चाहिए," कमला ने कहा।

"वह हमारे धोखे में नहीं आ सकता, बड़ा चलता हुआ आदमी है," कामाक्षी ने जवाब दिया।

"कितने की शर्त लगाती हो ?"

"दो रुपये की ।"

"अच्छा, दो दिन का वक्त दो ।"

तीसरे दिन रात को शास्त्री खुली छत पर बैठे-बैठे आकाश की ओर देख रहे थे और उनके मस्तिष्क में घूम रही थीं ये बातें–'इस महान् ब्रह्माण्ड में मैं एक कण के बराबर हूँ। मैं बड़ी तेज़ी से घुमाया जा रहा हूँ, फिर भी मैं किसी तरह अपनी जगह पर टिका हुआ हूँ। मैं किस तरह अपनी क्षुद्रता को पूरी तरह से समझ सकता हूँ और किस तरह उसकी यथेष्ट निंदा कर सकता हूँ? मेरे भगवान्, क्या मेरी चिंता और भय का तुमपर कोई असर नहीं पड़ता? मेरी रक्षा करो, मेरे स्वामी!" यह कहकर वह रोने लगे और बहुत देर तक इस प्रकार चिंता में पड़े रहे। अंत में उन्हें नींद आ गई। सपने में उन्हें अपनी मृत पत्नी दिखाई दीं; एक तश्तरी में शास्त्री को पान-सुपारी देती हुई बोलीं—"निराश मत होओ" और फिर ग़ायब हो गई। इस सपने के बाद शास्त्री का दिमाग़ कुछ हल्का हुआ। सपने में स्त्री का दीखना शुभ लक्षण था। कोई साहस-पूर्ण कार्य करने के लिए यह एक अच्छा शकुन था। उन्होंने अपने मन को यह समझाने की चेष्टा की कि मृत पत्नी ने सपने में आकर सलाह दी है कि मैं दूसरा ब्याह कर लूँ। "लड़कियों ने जो कहा वह ठीक ही है," उन्होंने सोचा। "जबतक अपने में कठोर जीवन बिताने की क्षमता न आ जाय तबतक अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति को दबाने से कोई लाभ नहीं। जब मन ही पवित्र न हो तब सिर्फ़ बाहरी इंद्रियों के दमन से कोई लाभ नहीं। 'अहम्' के वश होकर मैंने शास्त्रों का अनादर किया है। मेरे लिए फिर से ब्याह कर लेना ही ठीक है," शास्त्री ने मन-ही-मन में तय किया! लड़कियों की शरारत में उन्हें ईश्वर का हाथ दिखाई दिया।

अगले दिन सुबह उन्होंने छत की रस्सी पर अपनी रेशमी किनारेवाली चादर डाल दी और छाता भी लटका दिया।

होस्टल में आनन्द की लहर दौड़ गई। कमला और कामू खुशी के मारे नाच उठीं!

कमला ने चिल्लाकर कहा—"लाओ मेरे दो रुपये।"

"अच्छा-अच्छा, अब तुम बंकीपुर के लिए चल दो," कामाक्षी बोली।

५

गोविंदार्य बंकीपर के एक धनी व्यक्ति थे। उनका एक पढ़े-लिखे घराने में जन्म हुआ था और वह खुद भी बड़े विद्वान् थे। उनके कोई पुत्र न था, केवल सुन्दरी नाम की एक कन्या थी जिसको उन्होंने खूब संस्कृत पढ़ाई थी। जब वह बारह साल की थी और गोविंदार्य उसके लिए वर की तलाश में थे, तो उसे बड़ा बुरा बुख़ार आया, जिसके कारण वह लंगड़ी हो गई और उसकी कमर भी झुक गई। इलाज हर तरह का कराया गया; लेकिन कोई फ़ायदा नहीं हुआ। क्वारी पुत्री के इस दुःख से गोविंदार्य की पत्नी का हृदय टूट गया। वह बीमार पड़ गई और कुछ दिनों बाद इस संसार से चल बसी।

गोविंदार्य ने अपनी पुत्री का ब्याह कर शास्त्रों के आदेश का पालन करने की भरपूर चेष्टा की। उन्होंने दहेज में काफ़ी धन देने का भी वादा किया; लेकिन कोई भी उनकी अपाहज और अपंग लड़की से ब्याह करने को राज़ी नहीं हुआ। सुन्दरी साहसी लड़की थी; उसने अपने दुर्भाग्य को शांतिपूर्वक सहन किया और अपने पिता को समझाने की भी पूरी कोशिश की। खुद वह तमिल और संस्कृत साहित्य का अध्ययन करने में मग्न रहती।

अपंग होने पर भी सुन्दरी घर का सारा काम-काज सम्हालती थी। उसका नाम सुन्दरी था, पर उसकी माँ समझ नहीं पाती थी कि किस घड़ी में उसका यह नाम रखा गया कि बाद में वह इतनी कुरूप हो गई। जब उसका यह नाम रखा गया था तब वह सचमुच सुन्दरी थी। उसकी माँ उसे अपने सम्बन्धियों के सब बच्चों से अधिक सुन्दर समझती थी। उसका रंग शायद बहुत काला था, लेकिन इससे क्या? उसकी नाक, उसका माथा, उसकी भौहें तस्वीर के मानिन्द थीं। अगर उसकी टाँगों और पीठ की तरफ़ ध्यान न दिया जाता तो वह भी बहुत-सी दूसरी

लड़कियों के बराबर ही सुन्दरी लगती थी। अपंग होने के कारण उसका नाम तो नहीं बदला जा सकता था, परन्तु बंकीपुर में उसका एक नया अर्थ लगाया जाने लगा था। उसका नाम कुब्जा का पर्यायवाची बन गया था।

कमला, जिसने गुमनाम पत्र लिखा था, बंकीपुर के ही एक धनवान जमींदार की लाड़ली लड़की थी। वह सुन्दरी की सहेली थी और अक्सर गोविन्दार्य के घर आती-जाती रहती थी।

"क्या बात है, कमला? अभी छुट्टियां तो हुई नहीं; फिर तुम घर कैसे चली आईं?" गोविन्दार्य ने कमला के एकाएक आने पर पूछा।

"चाचाजी, मैंने सुन्दरी के लिए एक वर ढूँढ़ा है, बस आप अपनी मंजूरी दे दीजिये," कमला ने जवाब दिया।

गोविन्दार्य ने समझा कि यह मेरी अभागिनी लड़की का मज़ाक उड़ा रही है, इसलिए उन्हें कुछ क्रोध-सा आया। किन्तु कमला ने जो कुछ सोच रखा था और जो कुछ हुआ था सब बता दिया।

गोविन्दार्य ने रंजीदा होते हुए कहा—"कैसी बच्चों की-सी बात करती है, कमला? भला वह सुन्दरी को कैसे अपना सकते हैं? मेरा दुर्भाग्य इतनी आसानी से नहीं टल सकता।"

"नहीं चाचाजी, वह अब हमारी मुट्ठी में हैं, हम उन्हें राजी कर लेंगी," कमला ने कहा।

"कमला, तुम साहसी हो; लेकिन मेरी मदद तो बस भगवान् ही कर सकते हैं," यह कहकर गोविन्दार्य फूट-फूटकर रोने लगे।

इसपर साहसी सुन्दरी ने कहा—"पिताजी, मैं हाथ जोड़ती हूं, आप मेरे कारण दुखी न हों।"

दूसरे दिन उन्होंने अपने घर की ओर आती हुई एक गाड़ी की खड़खड़ाहट सुनी। नरसिंह शास्त्री उसमें से धीरे-से उतरकर बाहर आए। कमला ने उनका स्वागत किया और एक आधुनिक भारतीय कन्या की निर्भीकता के साथ वह उन्हें अन्दर ले गई।

नरसिंह शास्त्री ने दरवाज़े पर कमला को देखकर उसे अपनी प्रस्तावित पत्नी समझा और अपने सौभाग्य पर प्रसन्न होते हुए वह भीतर घुसे। लेकिन जब असली बात का पता चला और उन्होंने सुन्दरी को देखा तो उन्हें बड़ी निराशा हुई। एक क्षण के लिए उन्हें घृणा-सी हुई और उनका यह भाव उनके चेहरे पर आने ही वाला था कि जल्दी से उन्होंने अपने को सम्हाल लिया। उनका ज्ञान उथला नहीं था, उस समय उसीने उनकी सहायता की।

मद्रास से चलते समय भी उनके मन में धार्मिक विरक्ति का भाव था और उन्होंने सोचा था कि मैं भगवान् के आदेश का पालन कर रहा हूं। इसलिए उन्होंने सुन्दरी को देखकर अपने मन में सोचा था—"यह मेरी परीक्षा है, मुझे इसमें सच्चा उतरना चाहिए। मैंने शास्त्रों और विद्या को जो कलंकित किया है उसका यह सही प्रायश्चित्त है। इस लड़की को, जिसके साथ भाग्य ने इतनी निष्ठुरता दिखलाई है, अगर मैं अपने यहाँ शरण दे सकूँ तो मुझे इसे अपने लिए बड़े सौभाग्य की बात समझनी चाहिए।" इस तरह उन्होंने घृणा के पहले आवेश पर विजय पाई।

कमला ने बात यहीं नहीं छोड़ी। उसने बड़ी होशियारी के साथ सुन्दरी के पठन-पाठन, विशेषतः उसके संस्कृत-ज्ञान की विस्तार के साथ चर्चा की। इससे शास्त्री को तसल्ली हुई और जब सुन्दरी ने उनसे बात-चीत की तो उसका शारीरिक रूप मानो लुप्त-सा हो गया और केवल उसकी आत्मा चमकती रही। उन्हें विश्वास हो गया कि यह मेरी पुत्री लक्ष्मी के लिए एक आदर्श मां बन सकेगी। उन्होंने अपने मन में कहा—"मेरी आत्मा पर जो मैल जमी हुई है वह साफ़ हो जायगी और उसकी हालत सुधर जायगी। मुझे अभी तक इस बात का बोध नहीं हुआ कि शरीर और आत्मा अलग-अलग हैं। मैं अबतक अज्ञान और अन्धकार में हूं। मुझे अभी सच्चा बोध प्राप्त करना है। आत्मा की सुन्दरता पर बाह्य शरीर की कुरूपता का असर नहीं पड़ता। आत्मा की एक अलग सत्ता है जो सुन्दर होती है और हमें सुख देती है। हमारे शास्त्र हमें

यही विश्वास दिलाते है।" एक-एक कर शास्त्री को अध्ययन किया हुआ सारा वेदांत-दर्शन याद आने लगा।

बातचीत खतम हुई और ब्याह पक्का हो गया। गोविन्दार्य के हर्ष का ठिकाना न रहा।

"आप मेरे दामाद नहीं, बल्कि एक देवता है और मेरी रक्षा करने आये हैं," उन्होंने शास्त्री से कहा और उनके पैर पकड़ लिये, मानो वह सचमुच कोई महात्मा हों। उन्हें अपनी पत्नी की याद आ गई। वह आंसुओं की बाढ़ रोक नहीं सके और फूट-फूटकर रोने लगे।

तब कमला ने समझाया—"चाचाजी, इस शुभ अवसर पर आपको रोना नहीं चाहिए; यह तो खुशी मनाने का वक्त है।"

"तुम्हारी बड़ी उम्र हो बेटी, तुम हर तरह से सुखी रहो;" गोविन्दार्य ने कमला से कहा और उसे एक तश्तरी में नारियल और पान रख-कर दिया।

कॉलेज में पढ़नेवाली लड़की कमला की आँखों में भी आंसू छल-छला आये।

होस्टल लौटकर उसने अपनी सहेली कामाक्षी से कहा—"कामाक्षी, हमारे गीताशिरोमणि बहुत ही नेक आदमी हैं। हमने तो सिर्फ़ उनका मज़ाक उड़ाना चाहा था और उन्हें उनकी वासना के लिए शर्मिन्दा करना चाहा था; लेकिन नतीजा यह हुआ कि उनका ब्याह सचमुच पक्का हो गया।"

उसने फिर कहा—"ब्याह तिरुपति के मंदिर में होगा और सारे संस्कार एक दिन में ही समाप्त कर दिये जायेंगे। मुझे भी जाना होगा; गोविन्दार्य ने कहा है कि मेरे बिना उसका काम नहीं चलेगा।"

"लेकिन हमें छुट्टी नहीं मिल सकेगी," कामाक्षी ने कहा।

"ज़रूर मिलेगी, हमें ब्याह में जाना ही होगा", कमला ने उत्तर दिया।

"तुम जाओगी तो मैं भी चलूँगी," कामाक्षी ने कहा।

दो और लड़कियां भी उनके साथ चलने को तैयार हो गईं और इस तरह नरसिंह शास्त्री के व्याह में तिरुपति जाने के लिए यह छोटी-सी मज़ेदार टोली बन गई।

"बूढ़े का व्याह होगा शानदार," सब लड़कियों ने एक स्वर से कहा और वे चलने के दिन का इन्तज़ार करने लगीं।

मद्रास में इस खबर के फैलते ही धार्मिक संस्थाओं में हलचल मच गई। किसीने पूछा, "हमने सुना है कि शिरोमणि शास्त्री व्याह कर रहे हैं; लड़की कहां की है और उसकी उम्र क्या है?" किसीने कहा आठ वर्ष की है, किसीने कहा बारह की है और किसीने बताया कि जवान है। क्या बस, क्या ट्राम, जहां सुनिये वहां यही चर्चा थी और समाज-सुधारकों में बड़ी खलबली मची हुई थी।

आल्वारपेट में 'महिला-समानाधिकार सभा' की एक बैठक हुई, जिसमें यह प्रस्ताव बड़े ज़ोरों के साथ पास किया गया कि ४५ वर्ष से अधिक उम्र वाले पुरुषों का व्याह रोका जाय। लेकिन बाद में प्रस्ताव में संशोधन करके उम्र की हद ४५ वर्ष से बढ़ाकर ४६ कर दी गई और सभा इस बात के लिए भी तैयार हो गई कि अगर व्याही जानेवाली स्त्री की उम्र ३५ वर्ष से अधिक होगी तो पुरुष की आयु पर कोई बंधन नहीं होगा।

६

दो साल बीत गये। कावेरी नदी के किनारे एक छोटे-से गाँव की बात है। नरसिंह शास्त्री की छोटी-सी लड़की लक्ष्मी ने अपनी मां से पूछा—"सब लोग कहते है कि तुम सुन्दर नहीं हो। लेकिन तुम तो इतनी सुन्दर हो। फिर वे ऐसा क्यों कहते हैं, मां?"

"बेटी, मेरी कमर को देखो। क्या वह कमान की तरह झुकी हुई नहीं है? औरों की कमर सीधी होती है। मैं ज़मीन पर हाथ टेककर चलती हूं। इसलिये जो भी मुझे देखता है वह मेरी हंसी उड़ाता है," सौतेली मां सुन्दरी ने समझाया।

"क्या तुम्हारी कमर में दुःख होता है, मां?

"नहीं बेटी, दुःख नहीं।

"तो फिर इससे क्या कि तुम झुककर चलती हो? बछिया भी तो तुम्हारी तरह चलती है? क्या वह सुन्दर नहीं लगती?"

"लक्ष्मी क्या कह रही है?" नरसिंह शास्त्री ने घर में घुसते हुए पूछा।

लक्ष्मी कहती है कि मैं बछिया की तरह सुन्दर हूं और लोगों का यह कहना है कि मैं बदसूरत हूं बिलकुल ग़लत है। आपकी क्या राय है?" सुन्दरी ने पूछा।

"मैं उससे सहमत हूं" शास्त्री ने जवाब दिया।

पिता के आ जाने से लक्ष्मी और भी बातें बनाने लगी। वह अपनी मां के सामने खड़ी हो गई और बोली—"देखो, जब मैं तुम्हें देखती हूं तो मुझे तुम्हारा बदन नहीं दिखाई देता।"

"अगर तू आंखें फाड़कर देखे तो तुझे बदन भी दीख जायगा," सुन्दरी ने जवाब दिया।

"नहीं मां," लक्ष्मी ने जवाब दिया, "जब मैं तुम्हारा बदन देखती हूं तो तुम नहीं दिखाई देतीं और जब तुम्हें देखती हूं तो तुम्हारा बदन नहीं दिखाई देता।"

"कुछ समझ में आ रहा है कि यह क्या कह रही है?', शास्त्री ने सुन्दरी से पूछा।

"बकवास कर रही है, जिसका न सिर है न पैर," सुन्दरी ने कहा।

नरसिंह शास्त्री ने लक्ष्मी को छाती से चिपटा लिया और वह असीम आनन्द के सागर में डूब गए; बोले—"सुन्दरी, आज लक्ष्मी की बात सुनकर उपनिषदों के एक श्लोक का अर्थ समझ में आ गया। उपनिषदों में भी ऐसी बच्चों-जैसी बातें कही गई हैं।"

"वह श्लोक क्या है?" सुन्दरी ने पूछा।

"वह श्लोक यह है कि आंखों में जो वस्तु दिखाई देती है वह आत्मा है। जब मैंने तुम्हें पाया तो मैं समझा कि एक प्रकार से मैं उस श्लोक का अर्थ समझ गया। लेकिन आज इस बच्ची की बातों ने उसका मतलब

और भी साफ कर दिया है। जब दो आदमी एक-दूसरे को पूरे प्रेम के साथ देखते हैं तो शरीर उनकी आंखों से ओझल हो जाता है। आत्मा आत्मा को देखती है। यही बात लक्ष्मी की है और यही श्लोक में भी कहा गया है।"

"तुम्हारा मतलब यह है कि आत्मा और शरीर दो अलग-अलग चीजें हैं?" सुन्दरी ने पूछा।

"नहीं, यह बात नहीं," शास्त्री ने कहा, "यह तो उस सत्य का एक अंश मात्र है। इधर देखो, इस समय मैं तुम्हें देख रहा हूँ, तुम्हारे शरीर को नहीं। वह दृष्टि से ओझल हो गया है। तुम्हारी आंखें, नाक, कान, मुँह, सब कुछ ओझल हो गया है। सिर्फ़ तुम रह गई हो। यही वह चीज है जो नेत्रों में दिखाई देती है।"

सुन्दरी ने भी उपनिषद् पढ़े थे। वह बोली—"वे इसका दूसरा मतलब लगाते हैं। जब कोई सन्त या ज्ञानी अपनी आंखें बंदकर गहरी समाधि में होता है तो वह अपनी आत्मा को अपने चित्त की आंखों में देखता है। उपनिषदों का अर्थ बतानेवाले इस श्लोक का यही अर्थ लगाते हैं।"

"इसका यह अर्थ भी है," नरसिंह शास्त्री ने कहा, "लेकिन जो लक्ष्मी कहती है वह ज़्यादा ठीक और व्यावहारिक अर्थ है। मैं न तो साधु हूँ और न संत, फिर भी जब मैं तुम्हें एकाग्र प्यार के साथ देखता हूँ तो तुम्हारा शरीर दिखाई नहीं देता। उस समय तुम्हारी आत्मा दिखाई देती है और उसे देखकर मैं संतुष्ट हो जाता हूं। जब हमारी आंखें एक-दूसरे से मिलती हैं और हम उससे आनन्दित हो उठते हैं तो उस समय केवल तुम्हारा मुँह नहीं बल्कि तुम्हारा पूरा अस्तित्व मेरी आंखों के सामने प्रत्यक्ष हो जाता है। अगर मैं तुम्हारी नाक, माथा या उस-पर लगा हुआ तिलक, या तुम्हारी भौंहें देखता हूं तो तुम्हारा केवल वही हिस्सा दिखाई देता है और तुम नज़रों से ओझल हो जाती हो।"

संक्षेप यह कि शास्त्री और सुन्दरी ने परस्पर प्रेम और सम्मान का व्यवहार रखते हुए सच्चा दार्शनिक और उच्च जीवन बिताया। सच

पूछिये तो सुन्दरता और कुछ नहीं प्रेम है । शरीर की सुन्दरता और कुरूपता तो ब्याह से पहले देखी जाती है । जो स्थायी वस्तु है वह है चरित्र । ब्याह के बाद जब आत्मा से आत्मा का बन्धन हो तो शरीर और रूप ओझल हो जाते हैं । यह बात स्त्री और पुरुष दोनों के लिए सत्य है । उसकी नाक तो देखो, उसके दांत तो देखो, उसका मुँह तो देखो ये सब बातें तो बाहरी आदमी कहते हैं और इन्हीं से उनका वास्ता भी होता है । परन्तु प्रेम के बंधन में बंधे हुए जोड़े के लिए इन बातों का अस्तित्व मिट चुकता है और इनसे उसे न आनन्द मिलता है, न दुःख ।

: २ :

अर्द्धनारी

अर्द्धनारी एक हरिजन का लड़का था। वह सेलम ज़िले के कोक्कलई गाँव में रहता था। हरिजन-सेवक-संघ के मंत्री श्री मलकानी जब दक्षिण भारत आये तो उससे मिलकर बड़े प्रसन्न हुए और उसे अपने साथ दिल्ली ले गये। वहाँ उन्होंने उसे एक स्कूल में भरती करा दिया और उसकी देखरेख की। वहीं उन्होंने कह-सुनकर उसे एक मशहूर व्यापारी कम्पनी के दफ़्तर में ६०) महीने पर नौकरी भी दिलवा दी। अर्द्धनारी ईमानदार और मेहनती था और देखने में जंचता था; इसलिए मालिकों से उसकी अच्छी तरह निभती रही। चौबीस साल की उम्र से पहले-ही-पहले उसे १५०) महीना मिलने लगा और जब कुछ समय बाद बंग्लूर में उसी कम्पनी की एक बड़ी मिल में जगह खाली हुई तो वह वहाँ २००) महीना तनख्वाह पर भेज दिया गया।

अर्द्धनारी ने दो साल बंग्लूर में बड़े आनन्द के साथ बिताये। उसके ऊपर का अफसर गोविन्द राव, जो दो साल तक मैनचेस्टर में काम सीख चुका था, क़रीब-क़रीब उसीकी उम्र का था और उसके स्वभाव और व्यवहार को पसंद करता था; इसलिए दोनों पक्के दोस्त बन गये।

गोविन्द राव के पंकजा नाम की एक बहन थी। दोनों एक-दूसरे से बहुत प्यार करते थे। जब पंकजा दस साल की थी तभी उसके माँ-बाप का देहांत हो गया था। अब वह बीस साल की थी और अभी तक क्वारी

थी। जब कभी गोविन्द राव अर्द्धनारी के घर जाता तो पंकजा भी उसके साथ जाती थी। अर्द्धनारी भी गोविन्द राव से मिलने आया करता था। इस तरह उसे और पंकजा को एक-दूसरे से मिलने का अक्सर मौका मिलता था। गोविंद राव को भी यह देखकर खुशी होती थी कि ये एक-दूसरे को चाहते हैं। वह अक्सर अपने मन में सोचा करता—"क्यों न इन दोनों का व्याह कर दिया जाय और ये यहीं बस जायं?"

एक दिन गोविंद राव ने अपनी बहन से पूछा—"पंकजा, क्या तुमने कभी अपने व्याह के बारे में भी सोचा है?"

"इस बारे में मेरी कोई ख़ास दिलचस्पी नहीं," पंकजा ने उत्तर दिया।

"तो क्यों न तुम्हारा व्याह अर्द्धनारी से कर दिया जाय?"

पंकजा ने इस प्रश्न पर कोई आपत्ति नहीं की, लेकिन उसने इधर-उधर की चर्चा छेड़कर बात टाल दी।

कुछ हफ़्तों बाद जब अकस्मात् यही चर्चा उसके सामने फिर छिड़ी तो उसने अपने भाई से कहा—"तो क्या गोपू, तुम मुझसे ऊब गये हो? क्या मैं तुम्हें भार मालूम होने लगी हूँ?" यह कहकर पहले तो वह हँसी, पर बाद में फूट-फूटकर रोने लगी। लड़कियाँ, खासकर वे जिनकी माँ मर चुकी होती हैं, बड़ी भावुक होती हैं।

"पगली कहीं की! जी ऊबने और भार मालूम होने की क्या बात है? मुझे तो बस इतना बता दो कि तुम व्याह करना चाहती हो या नहीं? अगर तुम नहीं चाहती तो इससे मुझे बड़ी खुशी होगी, क्योंकि उस हालत में तुम हमेशा मेरे साथ रह सकोगी।" यह कहकर गोविंद राव ने पंकजा के आँसू पोछ डाले। कुछ रुककर उसने फिर कहा—"माँ तो अब रही नहीं, पंकजा! इसलिए व्याह के बारे में तुमसे पूछने और तुम्हारे मन की बातों का पता लगानेवाला अब मेरे सिवा और कौन है?"

"जब व्याह का वक़्त आयगा तो कर लूँगी; अभी से बहस करने से क्या फ़ायदा?" पंकजा ने कहा।

"ऐसा लगता है कि तुम दोनों एक-दूसरे को पसन्द करते हो। जब हमने जात-पांत का विचार ही छोड़ दिया है तो क्यों न तुम उसके साथ व्याह कर लो?"

"हां, हमें जात-पांत से तो कुछ नहीं करना है, लेकिन अभी यह तो नहीं पता कि इस बारे में उनका क्या खयाल है।"

"इसकी चिन्ता न करो, तुम-जैसी पत्नी पाकर तो वह अपना अहोभाग्य समझेगा।"

गोविन्द राव को विश्वास था कि इस दुनिया में उसकी बहन की बराबरी करनेवाली और कोई स्त्री नहीं।

"चर्चा जब अर्द्धनारी से छिड़ी तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। लेकिन एक क्षण बाद ही उसका मुंह उतर गया और वह बोला—"यह कैसे हो सकता है, गोविन्द राव?"

"क्यों? अड़चन क्या है?"

"कहां मेरी जाति और कहां तुम्हारी!"

"ओः, जाति का सवाल! वाहियात!" गोविन्द राव ने जोर से हंसकर कहा। "कौन ब्राह्मण है और कौन नहीं? हमने तो ऐसी बातों के बारे में सोचना मुद्दत से छोड़ रखा है। अगर तुम दोनों एक-दूसरे को पसन्द करते हो और व्याह करने का पक्का इरादा रखते हो तो जात-पांत के बारे में चिन्ता करने की कोई ज़रूरत नहीं।"

अर्द्धनारी ने गोविन्द राव और पंकजा से कह रखा था कि मैं कोयमुत्तूर ज़िले का एक शैव मुदलियार हूं। शैव मुदलियार ऊंची जाति के शाकाहारी अब्राह्मण होते हैं। एक बार भयवश अपने को शैव कह चुकने के बाद अर्द्धनारी बात बदल नहीं सका। उसे अपनी जाति के बारे में सच बात बताते हुए लज्जा आती थी। दिल्ली में कुछ लोग उसके बारे में जानते थे, किन्तु बंग्लूर में किसी को पता नहीं था।

"पंकजा की क्या इच्छा है?" अर्द्धनारी ने पूछा।

"मालूम होता है कि वह तुम्हें पसन्द करती है। मेरे सवालों के उसने

जो जवाब दिये उनसे पता चलता है कि वह राज़ी है ।"

"क्या यह अच्छा नहीं होगा कि मैं खुद उससे बातें करके उसका इरादा मालूम कर लूं ?"

"हां, हां, क्यों नहीं ?" गोविन्द राव ने उत्तर दिया ।

इस तरह बात टल गई । अर्द्धनारी ने निश्चय कर लिया कि चाहे कुछ भी हो वह पंकजा को सारी बातें ठीक-ठीक बता देगा; किन्तु बाद में उसका यह निश्चय ढीला पड़ गया ।

"मैं बेकार क्यों उसे ये बातें बताऊं ?" अर्द्धनारी ने मन में सोचा "अगर मैं ऐसा करूंगा तो पंकजा और गोविन्द राव दोनों मुझसे घृणा करने लगेंगे । वे कहते तो ज़रूर हैं कि वे जात-पांत का भेद-भाव नहीं मानते, लेकिन अगर उन्हें मालूम हो जाय कि मैं अछूत हूं तो वे कभी राज़ी नहीं होंगे । इसके अलावा वे मुझे झूठा समझेंगे ।"

अगले दिन उसने इस विषय पर फिर विचार किया और सच्ची बात कह देने के इरादे से वह गोविन्द राव के घर की ओर चल पड़ा । परन्तु रास्ते में उसने अपने मन में फिर सोचा — "जब हम दोनों एक-दूसरे को प्यार करते हैं तो क्यों जात-पांत के चक्कर में पड़ें ? इस सामाजिक अन्याय को हम प्रोत्साहन ही क्यों दें ? जाति किसने बनाई है ? क्या सब ढोंग नहीं है ? मैं क्यों इस बात को इतना महत्व दूं और पंकजा से इस बारे में बातचीत करूँ ? उन्होंने मुझसे साफ़-साफ़ कह दिया है कि उन्हें जात-पांत की चिन्ता नहीं । फिर मैं ही क्यों इसकी चर्चा करूं ?" अन्त में अर्द्धनारी ने सत्य को दबा देने का संकल्प कर लिया ।

"क्या तुम मुझे सचमुच पसन्द करती हो ?" उसने जाकर पंकजा से पूछा । "क्या हम ब्याह कर लें और सुख के साथ रहें ?"

"लेकिन क्या तुम ऐसा चाहते हो" ? पंकजा ने पूछा ।

अर्द्धनारी का पिता मुनियप, उसका भाई रंग और उसकी मा कुप्पयी सब कोक्कलई गाँव में चेरी (अछूतों के मोहल्ले) में रहते थे । अर्द्धनारी पहले दिल्ली से और फिर बंगलूर से उन्हें हर महीने बीस रुपये

भेजा करता था। उनके लिए यह एक राजसी रकम थी और वे बड़ी मौज से गुजारा करते थे। उन्हें यह पता नहीं था कि अर्द्धनारी कितना कमा रहा है, लेकिन हर महीने बीस रुपये पाते रहना, वे अपने लिए बड़े सौभाग्य की बात समझते थे। दुर्भाग्य से मुनियप को शराब पीने की लत थी। जब उसे हर महीने रुपये मिलने लगे तो उसकी यह लत और भी बढ़ गई। रंग इस बात को पसंद नहीं करता था, लेकिन वह बाप को रोकने में असमर्थ था। वह एक गाँव के स्कूल में मास्टर था और अभीतक अविवाहित था। जब उसकी माँ उसे अपने लिए बहू ढूँढ़ने को कहती तो वह यह कहकर कि अभी नहीं कुछ दिन और ठहर जाओ, बात टाल देता।

बंग्लूर में बदली हो जाने के बाद से अर्द्धनारी साल में दो बार अपने मा-बाप से मिलने जाता था। जबसे पता चला कि बाप को शराब पीने की लत पड़ गई है तो उसे बड़ी लज्जा आई। वह अपने घर का कूड़ा-करकट और मैलापन बरदाश्त नहीं कर पाता था, इसलिए जब वहाँ जाता था तो एक या दो दिन ठहरकर जल्दी-से-जल्दी वापस आ जाता था।

अर्द्धनारी जब बंग्लूर लौटने को तैयार होता तो उसका पिता उससे कहता—"अर्द्धनारी, हम भी तुम्हारे साथ चलेंगे।"

इसपर अर्द्धनारी जवाब देता—"हरगिज़ नहीं, अगर वे तुम्हें मेरे साथ देख लेंगे तो मुझे नौकरी से अलग कर देंगे।"

और रंग भी कहता—"हाँ पिताजी, हमें नहीं जाना चाहिए।"

अर्द्धनारी उन्हें बराबर रुपये भेजता रहता था, इसलिए वे उससे ज्यादा बहस नहीं करते थे। कुछ दिनों तक बात ऐसी तरह चलती रही।

अर्द्धनारी ने सोचा कि व्याह हो जाने के बाद मेरे लिए सबसे अच्छा यही होगा कि मैं कहीं दूर उत्तर में चला जाऊँ। वह बराबर अपने मन में कहता— "इसमें तो कोई शक नहीं कि वे मुझपर बड़े दयालु हैं, लेकिन अगर उन्हें यह पता लग गया कि मैं अछूत हूँ तो बात ज़रूरत बिगड़ जायगी। अगर यह मान भी लिया जाय कि वे परवाह नहीं करेंगे तो भी जब वे मेरे पिता और दूसरे सम्बन्धियों की आदतें और रहन-सहन का ढंग

देखेंगे तो ज़रूर पंकजा का जी फट जायगा और उसके बाद शायद वह मेरा मुँह भी नहीं देखेगी।" इस विचार के साथ ही साथ अर्द्धनारी का सत्य को छिपाने का संकल्प भी दृढ़ बनता गया और उसने जल्दी-से-जल्दी ब्याह कर कहीं उत्तर चले जाने का निश्चय किया। उसने अपनी कम्पनी के डाइरेक्टरों को पत्र लिखा और उनसे प्रार्थना की कि उसकी बदली उत्तरी भारत की किसी दूसरी मिल में कर दी जाय।

एक दिन पंकजा ने अचानक कहा—"अर्द्धनारी, मैं तुम्हारी मा से मिलना चाहती हूँ। हमने तय किया है कि तुम एक हफ्ते की छुट्टी ले लो और हमारे साथ कोयमुत्तूर, उटाकमण्ड और दूसरे स्थानों की सैर करने चलो। तुम्हारी क्या राय है?"

गोविंद राव ने भी कहा—"आजकल दफ्तर में काम ज्यादा नहीं है। अगले महीने के पहले हफ्ते में चलना सबके लिए ठीक रहेगा।"

अर्द्धनारी का हृदय धड़कने लगा। उसने कहा—"हाँ, हाँ, हम ऐसा कर सकते, लेकिन मेरे पास आज ही घर से चिट्ठी आई है जिसमें लिखा है कि गाँव में बड़े ज़ोरों से हैज़ा फैल रहा है।"

यह सुनकर पंकजा को बहुत चिंता हुई। "हैज़ा!" उसने घबराहट के साथ कहा। "क्या तुमने अपने संबंधियों को वहाँ से दूसरी जगह जाने को लिख दिया है? उन्हें यहीं आने को क्यों नहीं लिख देते?"

"मैं अभी-अभी यही लिखने की सोच रहा था," अर्द्धनारी ने उत्तर दिया।

तीन दिन बाद अर्द्धनारी को रंग का एक पत्र मिला, जिसमें लिखा था—

छोटे भाई अर्द्धनारी को आशीर्वाद!

यहाँ बड़े ज़ोरों से हैज़ा फैल रहा है। बहुत-से लोग मर चुके हैं और हमें भी घबराहट हो रही है। पिताजी का पहले ही जैसा हाल है; वह हमारी सलाह नहीं मानते। इस महीने तुमने जो रुपया भेजा था वह सब ख़तम हो चुका है। हम सोच रहे हैं कि अगर तुम ३०) और भेज सको तो हम मकान में ताला डालकर जबतक हैज़े का खतरा दूर न हो

जाय तबतक के लिए सेलम चले जायं। तुम्हारा सस्नेह,

रंग

इस पत्र को पढ़कर अर्द्धनारी को बड़ा दुःख और आश्चर्य हुआ। "इसका क्या मतलब ?" उसने सोचा; "जो बात मैं झूठ बोलने के लिए कह रहा था वह सच निकली ? शायद भगवान् मेरी परीक्षा ले रहे हैं।" एकाएक अर्द्धनारी निश्चय न कर सका कि उसे क्या करना चाहिए। बाद में उसने सोचा कि कल रुपये भेज दूंगा।

उस रात अर्द्धनारी को नींद नहीं आई। बुरे-बुरे और लज्जा-जनक विचार उसके मस्तिष्क में चक्कर काटते रहे। जब कभी उसे अपने पिता का ध्यान आता, उसका हृदय ग्लानि से भर उठता। कई बार उसके मन में विचार आता—"बाप हैज़े से मर जाय तो मुसीबत से छुटकारा मिले।" लेकिन दूसरे ही क्षण वह अपने को इस भावना के लिए कोसता। सारी रात वह इसी तरह अपनी खाट पर बेचैनी से करवटें बदलता रहा और सुबह ही ठंडे पानी से नहाया। डाकिया चिट्ठियां लाया और, जैसी कि उसे आशा थी, उसके गांव से एक और पत्र आया। कांपते हुए हाथों से उसने उसे खोला और पढ़ा—

"पिताजी को हैजा हो गया है। हम बहुत घबराये हुए हैं। मारिआयी हमपर दया करे। हमारे पास एक भी पैसा नहीं है। —रंग"

पत्र को पढ़कर अर्द्धनारी का मुँह स्याह पड़ गया। वह बड़ी देर तक अपनी कुरसी पर ही बैठा रहा। उस दिन उसने रुपये नहीं भेजे। दूसरे दिन भी ऐसा ही हुआ।

"तुम्हारे गांव में हैजे का क्या हाल है ?" पंकजा ने पूछा।

"अभी बहुत बुरा है," अर्द्धनारी ने उत्तर दिया।

"क्या काफी में चीनी ठीक है ?" गोविंद राव ने बीच में पूछा।

"हां, कॉफी बहुत अच्छी बनी है," अर्द्धनारी ने उत्तर दिया।

घर लौटकर उसने देखा कि एक और पत्र आया हुआ रखा है। उसमें लिखा था--

"मा को भी हैजे के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। तुमने रुपया नहीं भेजा; हम लाचार हैं। जल्दी आओ।"

अर्धनारी ने उस दिन भी रुपये नहीं भेजे। उसने अपना हृदय पत्थर का बना लिया और सोचा—"मेरे जीवन का यह कलंक अब हमेशा के लिए छूट जायगा। इस छुटकारे में मुझे भगवान् की दया दिखाई देती है। उसकी इच्छा से बढ़कर और कोई भी धर्म या न्याय नहीं। मैं क्यों उसे बदलने की चेष्टा करूँ? यदि मा और पिताजी दोनों मर जायेंगे तो फिर पंकजा के साथ ब्याह होने में कोई भी रुकावट नहीं रह जायगी।"

"दुष्ट, कैसे पाप से भरे हुए विचार हैं तेरे!" मानो किसीने एकाएक अर्द्धनारी को धिक्कारते हुए कहा। उसने पीछे घूमकर देखा तो पंकजा को खड़ा पाया। उसे डर लगा कि कहीं भेद खुल तो नहीं गया। लेकिन शीघ्र ही दिमाग का धुँधलापन दूर हो गया और उसने समझ लिया कि किसीने कुछ नहीं कहा था, सब कुछ उसके चित्त का भ्रम था।

"तुम बिना आवाज दिये अंदर कैसे चली आईं?" उसने पंकजा से पूछा।

इसपर पंकजा हंसी और बोली—"घुसने से पहले मैंने दरवाजे पर तीन बार धक्का दिया। तुम किसी बात से परेशान मालूम होते हो, तभी तुम्हें मेरे आने का पता नहीं चला।"

"मुझे अपने गांव जाना चाहिए। ऐसा मालूम होता है कि वहां बीमारी पहले से बढ़ गई है। मेरे माता-पिता वहीं हैं; मुझे उनके लिए कुछ इंतजाम करना चाहिए," अर्द्धनारी ने कहा।

"बेशक! यह तो बहुत पहले हो जाना चाहिए था। अब अगर तुम वहां जाओ तो बड़ी होशियारी से रहना और जबतक वहां ठहरो कोई चीज खाना-पीना मत," पंकजा ने समझाते हुए कहा।

उसी रात अर्द्धनारी सेलम के लिए चल पड़ा, लेकिन सीधा कोकलई न जाकर उसने रास्ते में देर कर दी और गांव चार दिन बाद पहुँचा। उस समय तक मा मर चुकी थी और बेचारा रंग भी उसका साथ दे चुका था।

अलबत्ता, शराबी बाप मौत के मुंह से निकल आया था और अब चंगा था ।

"मुझे बंग्लूर ले चलो, अब मैं यहां क्या करूँगा ?" मुनियप ने अर्द्धनारी से गिड़गिड़ाकर कहा । परंतु अर्द्धनारी के कान पर जूँ भी नहीं रेंगी, वह पत्थर-सा बना रहा और बोला—"मैं तुम्हें काफ़ी रुपये भेजा करूँगा, तुम यहीं रहो । मेरे साथ चलने के लिए कहना बेकार है, क्योंकि मैं तुम्हें नहीं ले जा सकता ।"

बाप-बेटे के सामने एक असहाय बच्चे की तरह गिड़गिड़ाया । उसने सुबकियां लेते हुए कहा—"मैं यहाँ नहीं ठहर सकता ।"

परन्तु अर्द्धनारी पर इसका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा । उसने सोचा कि मैं पंकजा को कैसे छोड़ सकता हूँ और पिता के रोने-धोने पर कान नहीं दिया । अगले दिन उसके हाथ पर दस रुपये का नोट रख वह सेलम से चल दिया ।

पर उसके मन ने धिक्कारा—"हाय. क्या कर डाला तूने ! तूने अपनी मा और भाई को मार डाला । तूने ऐसा क्यों किया ? क्या तेरे जैसा दुष्ट भी कोई होगा ? तू अपने पिता को इस प्रकार कैसे छोड़ सका ? पंकजा से तू क्या कहेगा ?"

इन विचारों ने उसे गाड़ी में सोने नहीं दिया । बंग्लूर पहुँचकर उसने अपने घर तक का रास्ता पैदल ही तय किया । फिर भीतर से कुँडी बन्द कर वह पड़ रहा । न तो उसने अपने आने की सूचना गोविन्द राव या पंकजा को दी और न वह दफ्तर ही गया ।

उसी रात उसने अपना असबाब फिर बांधा और स्टेशन पर टिकट लेकर वह सेलम की गाड़ी में जा बैठा ।

सेलम में उसने सुना कि कोकलई में एक आदि द्रविड़ (अछूत) ने कुएँ में डूबकर आत्म-हत्या कर ली है । जब वह कोकलई में पहुँचा तो उसे मालूम हुआ कि वह उसका ही पिता था ।

किसीने उसे खबर दी कि मुनियप शराबी के संबंध में पुलिस

चौकी पर जांच की जा रही है । परन्तु वह वहां नहीं गया और छिपकर सेलम चला आया और बंग्लूर की गाड़ी में बैठ गया ।

"पंकजा, तुम मुझे भूल जाने की कोशिश करो," उसने जाकर पंकजा से कहा ।

"वह मैं बाद में करूँगी, पहले मुझे सेलम के हाल बताओ ।"

वे सब मर गये । इसकी वजह यह है कि उसके लिए मुझे जो करना चाहिए था वह मैंने नहीं किया । मुझे अब अपने जीवन में कोई दिलचस्पी नहीं रह गई । मैं अपनी नौकरी से इस्तीफ़ा देने जा रहा हूँ और उसके बाद मैं गांव चला जाऊंगा । मुझे भूल जाओ ।"

पंकजा ने अद्‌र्धनारी की तरफ दो-तीन बार देखा; फिर चिंतित हो वह सब कुछ अपने भाई को बताने भाग गई ।

अद्‌र्धनारी को ज्वर चढ़ आया । पहले डॉक्टर ने टायफ़ॉयड बताया और फिर दिमागी बुखार । क़रीब एक महीने तक वह खाट पर पड़ा रहा । गोविंद राव और पंकजा बिना आराम किये लगातार उसके पास बैठे रहे । चौथे सप्ताह के अंत में बुख़ार टूटे ।

"अब चिंता की कोई बात नहीं," डाक्टर ने कहा और कुछ ही दिनों में अद्‌र्धनारी अपनी खाट पर उठने-बैठने लगा ।

"मैं अछूत हूँ, पापी हूं । मैं सचमुच छूने लायक़ नहीं हूं, मैं झूठा हूं । मैं ब्याह नहीं करूँगा । ईश्वर के लिए मुझे भूल जाओ," अद्‌र्धनारी ने कहा ।

पंकजा ने हंसकर उसे तसल्ली देते हुए कहा;—"इससे क्या कि तुम किस जाति के हो ? हम एक-दूसरे से अलग क्यों हों ?"

परंतु अद्‌र्धनारी नहीं माना । उसने कहा—"मैं जानता हूँ कि तुम्हें मेरी जाति की चिंता नहीं, परंतु मैंने अपने माता-पिता का खून किया है," और फिर उसने अपनी सारी कहानी कह सुनाई ।

जब वह बिलकुल अच्छा हो गया तो उसने अपनी नौकरी से इस्तीफ़ा दे दिया और कोक्कलई वापस चला गया । अब संन्यासी बन गया है और मारिअम्मा के मंदिर में स्कूल चलाता है ।

: ३ :

मनहूस गाड़ी

करुप की गृहस्थी अलग कर दी गई। किसानों में यह प्रथा थी कि बेटे का व्याह हो जाने पर उसके लिए एक अलग झोंपड़ा बना दिया जाता था और उम्मीद की जाती थी कि वह खुद कमा-खायगा। सच-मुच यह एक अच्छी प्रथा थी। करुप के माता-पिता बूढ़े हो गये थे और गाँव में अपने पुरखों के मकान में रहते थे। करुप का बड़ा भाई खेत पर झोंपड़े में रहता था। अब जब करुप अलग रहने लगा तो ज़मीन के तीन हिस्से कर दिये गये और उनमें-से एक करुप को दे दिया गया। बड़ा भाई अपना और अपने पिता का खेत जोतता था। सबने मिलकर करुप के लिए भी एक मिट्टी का झोंपड़ा बना दिया। उन्होंने उसे एक जोड़ी बैल और दो बकरियाँ भी दे दीं। करुप तीस साल का हट्टाकट्टा नौजवान था। उसकी पत्नी पार्वती गाँव की सबसे सुन्दर और काम-काजू लड़की थी। किसान की कन्या होकर भी वह रानी-जैसी लगती थी। चींटी और शहद की मक्खी चाहे कभी सुस्त बन जाय; लेकिन पार्वती कभी खाली नहीं बैठती थी। अब वह अपने नये घर में इस तरह काम करती जैसे वहीं जन्मी और पली हो और बीच-बीच में करुप की ओर देखकर मुसकरा देती तो करुप निहाल हो जाता और सोचता इस दुनिया में मुझे किसी चीज़ की कमी नहीं।

पार्वती अपने मायके से कुछ रुपये लाई थी। उससे उन्होंने एक दुधार भैंस खरीद ली। वर्षा समय पर हुई और करुप ने खूब मेहनत

से काम किया, इसलिए फ़सल भी बहुत अच्छी हुई। पार्वती दिन-भर काम करती और माथे पर बल न लाती। करुप, बैल, भैंस और खेत—इन्हीं में उसकी सारी दुनिया बसी हुई थी। अवकाश के समय वह अपनी मा के घर से लाये हुए चरखे पर सूत कातती। चाँदनी रात में उसकी जिठानी भी उसके पास आ बैठती और दोनों देर तक सूत काततीं और बातें करती रहतीं।

पार्वती की भैंस अच्छी दुधार नस्ल की थी। पार्वती अंधेरे-मुँह उठकर दही बिलोती, मकान झाड़ती-बुहारती और धोती, और फिर जुलाहों की बस्ती में मट्ठा वेचने निकल जाती। पैंठ के दिन मक्खन तपाकर घी बनाती और उसे बेच देती। इस तरह वह हर हफ्ते करीब तीन रुपये कमा लेती।

एक साल बाद करुप ने अपना कारबार बढ़ाने का निश्चय किया, उसने अपनी पत्नी से कहा— "हमारा खेत छोटा है, इसलिए हमारे पास बारहों महीने काम नहीं रहता। क्यों न हम एक बैलगाड़ी खरीद लें और उससे कुछ रुपया कमायें? फिर तो हम बैलों से भी पूरे साल काम ले सकेंगे। चाचा के लड़के राम को देखो, वह अपनी बैलगाड़ी से हर हफ्ते कम-से-कम दो-तीन रुपये कमा लेता है। कभी-कभी तो उसे चार रुपये भी मिल जाते हैं। वीरगाँव छोड़कर उडुमलपेट जा रहा है। अपना कर्ज़ा उतारने के लिए वह अपनी ज़मीन बेच रहा है। शायद अपनी गाड़ी हमें सस्ते दामों में दे दे।"

"नहीं, नहीं; हमें वीर की गाड़ी नहीं चाहिए। हम उस मनहूस गाड़ी को नहीं खरीदेंगे, उसके आने से हमारे ऊपर भी बुरे दिन आ जायेंगे। और फिर, रुपया उधार लेकर बैलगाड़ी खरीदने की ज़रूरत ही क्या है? हमें अब किस बात की कमी है?" पार्वती बोली।

"पगली! वीर तो शराब पीता था और इसी लत ने उसे तबाह किया। उसकी बरबादी से गाड़ी का क्या सरोकार? गाड़ी तो बड़ी अच्छी और मजबूत है। बीस रुपये कर्ज लेने से हमारा कुछ बिगड़ेगा नहीं।

उसे उतार देना नामुमकिन थोड़ो ही है।"

"लेकिन मैं तो अपने रुपयों से कान के बुन्दे खरीदने को सोच रही थी," पार्वती ने कहा।

"ऐसी बेवकूफ़ी की बातें क्यों करती है? तू तो रानी-जैसी सुन्दर है; गहनों से तेरा रूप बिगड़ जायगा," करुप ने कहा।

"औरतें तो जब कोई चीज़ चाहती हैं तो मर्द ऐसी बातें बना देते हैं। खैर, हम औरत व्यापार की बातें क्या जानें? अपने बापू से सलाह करलो और जैसा ठीक समझो, करो। मुझसे क्या पूछना?" पार्वती ने कहा।

करुप गाड़ी खरीदने पर तुला हुआ था। इसलिए जब उसने अपने बाप से पूछा तो उसने भी उसकी मर्ज़ी के खिलाफ़ कुछ नहीं कहा। एक हफ्ते के अंदर-ही-अंदर गाड़ी खरीद ली गई। उसके अपने पास के सारे रुपये खर्च हो गये और गाँव के ज़मींदार से भी चालीस रुपये उधार लेकर लगाने पड़े।

२

करुप अक्सर गाड़ी भाड़े पर बाहर ले जाता था। जब कभी दूर जाना होता तो रात को वह वापस नहीं लौटता और कभी अगले दिन सुबह भी नहीं आता। ऐसे मौक़ों पर उसका चचेरा भाई राम भी गाड़ी में उसके साथ जाता। एक साल के भीतर ही भीतर करुप को ताड़ी की दूकान दिखा दी गई। फिर क्या था! हर फेरे में ताड़ी की दूकान पर जाना उसका नियम हो गया। गाड़ी की कमाई दिन-पर-दिन घटने लगी और बैलों के लिए अच्छा चारा लेना दूभर हो गया। एक दिन जब करुप नशे में घर पहुँचा हो पार्वती सन्न रह गई। उसे कुछ पता नहीं था कि अबतक क्या होता रहा है।

"तुमने मुझे बरबाद कर दिया," उसने रोकर कहा।

"चुप रह, मैंने तेरी कोई चोरी थोड़े ही की है," करुप ने कड़क-कर कहा।

पार्वती को गुस्सा आ गया, बोली—"तुमने ताड़ी पी है?"

"हाँ, पी है ; तुझे इससे क्या ? तेरे बाप की कमाई तो नहीं खर्च की है ! तू पूछनेवाली कौन होती है ?"

"ख़बरदार, जो इस घर में घुसे ; जाओ अपने बाप के घर । मैंने आज रोटी-वोटी नहीं बनाई है," पार्वती ने कहा और गुस्से से उसका मुँह लाल हो गया ।

"चल, मुँहजली कहीं की ; मैं तेरी सड़ी हुई रोटियों के बिना मर नहीं जाऊँगा ।" यह सोचकर, करुप ने पार्वती को पीटने को हाथ उठाया ।

ऐसे झगड़े अक्सर होते और कभी-कभी करुप पार्वती को पीट भी बैठता । तब पार्वती अपने बच्चे को लेकर जिठानी के घर चली जाती और वहाँ करुप की बिगड़ती हुई आदतों पर बातें होतीं । स्थिति दिन-पर-दिन बिगड़ती ही गई ; बैल जल्दी बूढ़े हो गये और उनमें गाड़ी खींचने का बल न रह गया । करुप ने उन्हें घाटे से एक मेले में बेच दिया और उसके पास अब इतना रुपया नहीं था कि नई जोड़ी खरीद लेता ।

उसने पार्वती से कसमें खाकर प्रतिज्ञा की कि अब मैं ताड़ी की दूकान के पास भी नहीं फटकूँगा और इस तरह बातों में फँसाकर उसने उससे वे सारे रुपये ले लिए जो उसने मट्ठा-घी बेचकर और सूत कातकर बचाये थे। फिर कुछ रुपये अपनी बड़ी विधवा बहिन से उधार लेकर वह बैलों की नई जोड़ी खरीद लाया ।

तीन महीने बीत गये । ज़मींदार ने अपने पुराने कर्ज़े के तकाज़े के लिए आदमी भेजा । करुप ने हाथ जोड़कर कुछ दिन और ठहरने को कहा । इस तरह मियाद तीन बार बढ़ाई गई । आख़िरकार ज़मींदार के नौकर उसका एक बैल खोलकर ले गये । करुप ज़मींदार के पास दौड़ा हुआ गया और एक महीना और ठहरने की दुहाई माँगने लगा ।

"नहीं, अब मैं एक दिन भी नहीं ठहरूंगा । इस शराबी को जूतों से पीटो । कर्ज़ चुकाने के लिए तो पैसा नहीं और बैलों की नई जोड़ी ख़रीदने के लिए पैसा आ गया ! किसके कहने से तूने ऐसा किया ?" ज़मींदार ने गुस्से में भरकर कहा ।

"ऐसा मत कहिये, सरकार; आप तो हमारे माई-बाप हैं। एक महीने की मोहलत और दे दीजिये। मैं खुद आऊंगा और आपका रुपया ज़रूर दे जाऊंगा।"

"यह सब बेकार की बात है। मैं अब एक मिनट भी नहीं ठहर सकता। बुध की पैंठ में मैं तुम्हारा बैल बेचने के लिए भेज दूंगा।"

"ऐसा मत करिये मालिक, मेरे बाल-बच्चे तबाह हो जायेंगे," करुप रोता हुआ बोला और अपने बैल के पास जाने लगा।

"बाहर निकाल दो, इसे। बैल मत जाने देना इसका। चोर कहीं का! जा, रुपये लेकर आ, नहीं तो बुध को बैल बिकवाये बिना नहीं रहूंगा," गुस्से में भरे हुए जमींदार ने कहा।

करुप ने फिर खुशामद की— "मैं बदमाश नहीं हूँ सरकार! आप मुझे थोड़ा-सा वक्त और दे दें। आपका रुपया मारा नहीं जायगा।"

"नामुमकिन," जमींदार ने आखिरी फैसला करते हुए कहा।

"मैं आपको ब्याज दूंगा, आप अपना रुपया ब्याज के साथ ले लीजिएगा," करुप बोला।

"कुत्ता कहीं का! इसे जूते से पीटो। ब्याज! ब्याज तो ज़रूर देगा तू! कहाँ से लायगा ब्याज? जा, क़ादिर खां से रुपये उधार लेकर मेरा कर्जा चुका दे। अगर कलतक रुपये नहीं मिले तो मैं बैल को औने-पौने बेच डालूँगा," जमींदार क्रोध से लाल-पीली आँखें दिखाता हुआ बोला और अंदर चला गया।

"और कोई चारा ही नहीं है करुप," जमींदार के कारिन्दे ने कहा। "क़ादिर साहब के पास जा, वही तेरी मदद कर सकते हैं?"

३

करुप ने अपने बाप के पास जाकर खुशामद की कि बड़े भाई से कहकर रुपया उधार दिलवा दो। बूढ़े के कहने से भाई मदद करने को तैयार हो गया, लेकिन उसकी औरत ने मना कर दिया। वह बोली—

"अगर तुमने रुपये उधार दिये तो फिर वापस नहीं मिलेंगे। उसे मुसलमान महाजन से ही लेने दो ; हमें तो अपने ही खाने-पीने के लाले पड़े हुए हैं। इस साल बारिश अच्छी होगी, इसका क्या ठिकाना ? अगर सफ़ल अच्छी नहीं हुई तो हम भूखों मर जायेंगे। उस आड़े वक़्त हमारी कौन मदद करेगा ?"

लाचार हो करुप को क़ादिर खां की शरण लेनी पड़ी। वह क़िस्त पर रुपये उधार दिया करता था और उसे गाँव के हर आदमी, यहाँ तक कि ज़मींदार की भी कच्ची-पक्की की ख़बर रहती थी।

"तुम्हें नहीं मालूम, भाई ! जमींदार ने मुझसे रुपये मांगे हैं," क़ादिर खां ने कहा।

"बड़े आदमियों की मुश्किलें तो किसी तरह दूर हो ही जाती हैं, लेकिन मेरा बैल बिक गया तो मैं कहीं का न रहूँगा। अब तो सिर्फ़ आप ही मुझे उबार सकते हैं।"

"मैं क्या करूँ मेरे पास जितना रुपया था सब मैंने ज़मींदार को देने का वायदा कर लिया है।"

"अरे साहब, ऐसा न कहिए। मैं तो बरबाद हो जाऊँगा। आपको ग़रीबों की मदद करनी चाहिए। मुझसे ज़मींदार की बातें क्यों करते हैं ?"

"यह तो ठीक है कि ग़रीबों की मदद करनी चाहिए, लेकिन मैं तो पहले ही ज़बान दे चुका हूँ।"

बहुत देर तक इसी तरह कहने-सुनने के बाद आख़िर में क़ादिर खां राजी हो गया। पैंतालीस रुपये के लिए करुप को साठ रुपये के दस्तावेज पर दस्तख़त करने पड़े। उसने पाँच रुपये महीने की क़िस्त देकर एक साल में सारा रुपया लौटा देने का वादा किया। सूद नहीं लिया गया लेकिन शर्त यह ठहरी कि अगर किसी महीने कुरुप क़िस्त नहीं अदा कर पायगा तो उसके लिए एक रुपया जुरमाना देना पड़ेगा।

"करुपा, तेरी ईमानदारी और मेहनत पर यक़ीन करके ही मैं रुपये दे रहा हूं। देखना कोई क़िस्त चूकने न पाये। तू एक नेक आदमी है,

शराब पीना छोड़ दे। तेरी स्त्री है, एक बच्चा है और खुदा ने चाहा तो और भी बच्चे होंगे। अगर तू शराब पीता रहा तो बरबाद हो जायगा," क़ादिर खां ने उसे समझाया।

कर्जा चुकाकर करुप बैल अपने घर ले आया। बचा हुआ रुपया उसने पार्वती के हाथ पर रख दिया और कहा—

"सुन, मैं तेरे आगे कसम खाता हूं कि आज के बाद से शराब, ताड़ी या सुलफ़ा छूऊंगा भी नहीं। मैं अपने पास रुपये नहीं रखना चाहता; तू इनका जो चाहे कर। मैं तो जो कमाया करूंगा लाकर तुझे पकड़ा दिया करूंगा।"

पार्वती ने समझा कि भगवान् ने मेरे अच्छे दिन लौटा दिये। वह बहुत खुश हुई और उसके शरीर में नई शक्ति आ गई। वह अपना काम पहले से भी ज्यादा उत्साह से करने लगी।

४

खेत पर अब कोई काम नहीं था और पार्वती से घर पर बिना काम से रहा नहीं जाता था। "मुझे किसी धंधे से लगना चाहिए," उसने सोचा, "जब मेरे पति पर कर्जा है तो मैं बिना कुछ काम किये कैसे रह सकती हूं?"

क़ादिर खां ने अपने पुराने मकान के पास एक नया मकान बनवाना शुरू किया। ईंट पाथनेवाले काम पर जुटे हुए थे। वहीं तीन-चार लड़कियां भी मजदूरी पर काम करती थीं। पार्वती ने भी उनके साथ काम करना शुरू कर दिया।

वह अंधेरे-मुँह उठती, मकान झाड़ती-बुहारती, भैंस और बकरी दुहती, मट्ठा बिलोती और फिर फौरन मट्ठा बेचने गांव में चली जाती। गाहकों से कह-सुनकर यह जल्दी निबट लेती और वे भी उसे देर तक न रोकते, क्योंकि उसका सबसे हेल-मेल था। घर आकर वह लस्सी पीती, बच्चे को दूध पिलाती और उसे जिठानी के पास छोड़कर अपने काम पर चली जाती। दोपहर को उसे बस इतनी-भर छुट्टी मिलती कि किसी

तरह दौड़ी-दौड़ी जाकर लस्सी पी ले, बच्चे को दूध पिला दे और फिर काम पर भाग जाय। ठेकेदार उसे सूरज छिपने के बाद छुट्टी देता, इसलिए जब वह घर लौटकर खाना बनाना शुरू करती तो अंधेरा हो जाता। सब कुछ वह खुशी-खुशी करती। काम बड़ी मेहनत का था और एक दिन में सिर्फ दो आने मजदूरी के मिलते थे; फिर भी मुसीबत के दिनो में यही बहुत था।

पार्वती को इस विश्वास से बड़ा ढाढ़स रहता कि मेरा पति अब शराब नहीं पियेगा और वह सुधर गया है। करुप ने एक-दो महीने तक अपना वचन निभाया भी, लेकिन फिर उसमें वे ही पुरानी आदतें पड़ गई और उसकी सारी कमाई ताड़ी की दूकान में जाने लगी। पार्वती के पल्ले एक पैसा भी नहीं पड़ता। करुप घर से लगातार दो-दो तीन-तीन दिन तक बाहर रहता और लौटता तो ढोरों के लिए थोड़ा-बहुत घास-दाना ले आता और बाकी आमदनी के लिए इधर-उधर की झूठी बातें बना देता। पार्वती सोचती कि भला थोड़े-से रुपयों के लिए वह झूठ क्या बोलेगा। लेकिन कुछ दिनों बाद करुप ने इसकी भी जरूरत नहीं समझी और हारकर पार्वती ने भी उससे पूछना बन्द कर दिया। फिर भी, पैसे कमाने के लिए वह दिन-रात घर पर और घर के बाहर भी काम करती रही।

करुप क़िस्त नहीं चुका पाया। एक दिन कादिर खां ने आकर रुपये का तकाजा किया और बहुत खरी-खोटी सुनाई। यों तो पार्वती को भी मिस्त्री से ऐसी कड़वी बातें सुनने की आदत पड़ गई थी लेकिन कादिर खां की गन्दी बातें उससे सुनी न गईं। भीतर जाकर उसने जोड़े हुए सारे पैसे बटोरे और क़ादिर खां के सामने लाकर पटक दिये। करुप के बार-बार छीनते-झपटते रहने पर भी वह कुछ न कुछ बचाती ही रहती थी।

उस दिन पार्वती की आंखों के आंसू सूखे नहीं। जी ठीक नहीं था; फिर भी अगले दिन वह रोज की तरह काम पर चली गई। कादिर खां की गंदी बातें उसके मन से नहीं उतरीं। अब तक तो वह इस बात की

परवा किये बिना ही कि मैं औरत हूं वह मेहनत के साथ और खुशी-खुशी काम करती रही थी ; लेकिन अब उसमें एकाएक परिवर्तन आ गया। उसे अपने साथ काम करनेवाले मर्दों की बातचीत से डर लगने लगा। जैसे-जैसे उसका यह डर बढ़ता गया वैसे-वैसे लफंगों की बदमाशियां भी बढ़ती गईं। कादिर खां का लड़का काम की देखभाल करता था। अब उसकी आंखों और बातों में पाप झलकने लगा।

जब से पार्वती ने मजदूरी का काम शुरू किया था वह ठीक तरह से अपने बच्चे की देखभाल नहीं कर पा रही थी। नतीजा यह निकला कि बच्चा कमजोर हो गया और एक दिन उसे ज्वर चढ़ आया बीमारों के लिए गांवों में न डाक्टर होते हैं न दवाएं। दो-एक बार बच्चे को गरम लोहा छुआने का टोटका किया गया, लेकिन उससे कोई लाभ नहीं हुआ ; एक हफ्ते बीमार रहकर उसने सदा के लिए आंखें मीच लीं।

करुप औरतों की तरह रोने लगा। उसके पिता ने उसे समझाते हुए कहा—"बेटा, भगवान् ने दिया था उसीने ले लिया।"

"लेकिन चाचा, भगवान् मेरी ऐसी परीक्षा क्यों ले रहा है ? मैंने तो कभी किसीको नहीं सताया," पार्वती ने रोकर ससुर से कहा।

"पगली, रोती क्यों है ? अभी तू बूढ़ी थोड़े ही हुई है ! अभी तो तेरे सात-आठ बच्चे हो सकते हैं। खेत में डाले हुए सारे बीज थोड़े ही फलते हैं और फिर भी हम उनके लिए रोते नहीं।"

"अब मुझे बाल-बच्चे नहीं चाहिए," पार्वती बोली ; "मैंने इस दुनिया में काफ़ी सुख-दुःख देख लियाहै ; अब तो बस यही चाहती हूं कि भगवान् मुझे उठा ले।'-

इस पर बूढ़े ने हंसकर कहा—"अपने आदमी को समझा कि वह जो थोड़ा-बहुत कमाता है उसे ताड़ी में न फूँके। फिर तो तुम जल्दी इस दुःख को भूल जाओगे और तुम्हारे और बच्चे होंगे और तुम सुख के साथ जीवन विताओगे।"

तब करुप ने प्रतिज्ञा की—"मैं अपनी जान की कसम खाकर कहता

हूं कि इस ज़हर को अब छूऊंगा भी नहीं। अगर मैं इसे फिर छूऊं तो गोली से उड़ा देना।

५

पार्वती की मुसीबतें यहीं खतम नहीं हुईं। उसके खोटे दिन चलते रहे। अगले ही बुध को जब करुप रामपुर की ताड़ी की दूकान के पास से गुजरा तो अपनी कसम-वसम सब भूल बैठा। वह अपनी गाड़ी पर कुछ बोरे लादकर तिरुपुर ले गया था। वहां से दूसरे गाड़ीवानों के साथ लौटते हुए वह ताड़ी की दूकान के सामने ठहर गया और चिल्लाकर बोला--"अरे, ताड़ी पीने के लिए कौन उतर रहा है? मुझे तो पीनी नहीं है। मैं तो इस कम्बख्त चीज के पास भी नहीं जाऊंगा।"

"अगर तू नहीं पीना चाहता तो अपना रुपया संतकर रख; गला क्यों फाड़ता है?" दूसरे गाड़ीवान ने जवाब दिया और वह गाड़ी से कूद-कर ताड़ीखाने में घुस गया। थोड़ी देर बाद करुप भी उसके पीछे-पीछे पहुंचा। उसने अपने मन में कहा—"आज और सही। आज के बाद फिर कभी नहीं पियूंगा।"

दूसरे बुध को भी ऐसा ही हुआ। उसने अपने साथी से कहा—"जब हमारे पास पैसा है तो क्यों न बेफ़िक्री से मौज उड़ायें?"

"ऐसी की तैसी पैसे की," उसके साथी ने कहा, "न यह हमारे साथ आया है न मरने के बाद हमारे साथ जायगा। अपने गाढ़े पसीने की कमाई को हम जैसे चाहें खर्च करें। हमें रोकनेवाला कौन है?"

इस पर एक और पियक्कड़, जो इनकी बातें सुन रहा था, फ़िलासफ़ी झाड़ता हुआ बोला--"तुम ठीक कहते हो यार! यह दुनिया दो दिन की है और यहां सब धोखा ही धोखा है। पता नहीं जो आज है वह कल रहे या न रहे। कौन जीता है यहाँ हजार साल तक? जब आंखें बन्द हो जायेंगी तो यह रुपया किसके काम आयगा? मेरे न तुम्हारे।"

"किसीके नहीं, न मेरे न तुम्हारे। यह तो उस आदमी का है जो ताड़ी-खाने में बैठता है," चौथे ने कहा और सब खिल्ली मारकर हंस पड़े।

"तुम सब गधे हो ? कैसी शास्त्रियों-जैसी बातें करते हो ? देखो तो यह चीज हलक़ से नीचे उतरते ही कैसी गरमी भर देती है," दूसरे ने कहा।

"इन बनियों को ठोकर मारनी चाहिए । बदमाश हमें लूट रहे हैं। इन्होंने गाड़ियों का भाड़ा कम कर दिया है," करुप बोला।

अंधेरा होने तक वे इसी तरह को बातें करते रहे और फिर अपनी-अपनी गाड़ियों में बैठकर चलते बने।

क़ादिर खां को दूसरी किस्त देने की तारीख बिलकुल पास आ गई। पार्वती ने करुप से कहा कि उसके तकाजा करने से पहले ही रुपये दे आओ। इस पर करुप बोला—"मरने दो कमबख्त को । अगर उसने अबके आकर बक-बक करी तो मैं उसको खोपड़ी तोड़ दूँगा ।"

शायद दूसरे कामों में लगे रहने की वजह से क़ादर खां बहुत दिनों तक नहीं आया और करुप भी उस बात को भूल गया।

एक दिन क़ादिर खां का बेटा इस्माइल आया, लेकिन रुपये मांगने की बजाय उसने करुप से पूछा—'मिर्चों की कुछ बोरियां रामपुर पहुँचा दोगे ?"

"मुझे कुमार कौंड का भूसा ले जाना है । एक हफ्ते पहिले से ही उसने मुझसे कह रखा है," करुप बोला।

"यह नहीं हो सकता । कुमार कौंड के भूसे की ऐसी जल्दी नहीं, लेकिन अगर हम आज बोरियां न भेज सके तो एक अच्छा सौदा हाथ से निकल जायगा," इस्माइल ने कहा ।

आखिरकार करुप राजी हो गया। जब इस्माइल ने अपने रुपयों का तकाज़ा न करने की कृपा की थी तो वह ही कैसे मना कर सकता था !

उसी शाम को, जब पार्वती अपने घर में अकेली खाना बना रही थी, इस्माइल खां आया। बाहर ही रुककर उसने पूछा—"करुप अभी लौटा या नहीं !"

अभी नहीं," पार्वती ने जवाब दिया।

"ठीक है, वह इतनी जल्दी कैसे आ सकता है, रास्ते में ताड़ीखाना

जो है," यह कहता हुआ इस्माइल खां अंदर चला आया।

"हाँ, ये ताड़ीख़ाने इसलिए चलते हैं कि ग़रीब आदमी बरबाद हो जायं और नरक का दुःख भोगें," पार्वती ने जवाब दिया।

पार्वती से बिना पूछे ही इस्माइल बैठ गया। पार्वती ने सोचा कि यह करुप के आने की इन्तजार कर रहा है, इसलिए उसने कुछ चिन्ता नहीं की और अपने काम में लगी रही।

इस्माइल कहता रहा—"क्या तुम अपने आदमी की आदतों से तंग नहीं आ गई हो?"

"यह कैसे हो सकता है, साहब? अच्छे हों या बुरे, हमें तो अपने आदमियों के साथ निभाव करना ही पड़ता है," मुँह फेरे-फेरे पार्वती ने कहा।

"ठीक है, वह तुम्हारा ब्याहता है; तुम उसे छोड़ कैसे सकती हो?" इस्माइल ने कहा।

कुछ देर बाद उसने दया दिखाते हुए फिर कहा—"यह कैसी बद-नसीबी की बात है कि तुम-जैसी खूबसूरत औरत का एक शराबी से पाला पड़ा है।"

पार्वती ने कोई उत्तर नहीं दिया। थोड़ी देर बाद करुप की इन्तजार किये बिना ही इस्माइल चला गया।

दूसरे दिन इस्माइल ने फिर किसी काम के बहाने करुप को बाहर भेज दिया और शाम को वह पार्वती के घर आया। अपने साथ वह थोड़ा-सा खजूर का गुड़ लेता आया और पार्वती को जबरदस्ती देकर बोला कि यह मूप से एक आसामी ने ऐसे ही भेंट भेज दी थी।

"तुम्हें देखकर मुझे इतनी खुशी होती है कि क्या बताऊं!" इस्माइल बोला।

पार्वती ने मन-ही-मन में सोचा कि पता नहीं इन सब बातों का क्या मतलब है और वह डर गई।

"जब मैं तुम्हारे पास आता हूं तो तुम डर क्यों जाती हो?" इस्माइल

ने कहा। "क्या तुम सोचती हो कि मैं तुमसे रुपयों का तक़ाजा करूंगा ? मुझे रुपयों की परवा नहीं है। बस तुम मुझसे हंस-बोल लिया करो।"

बहुत दिनों तक पार्वती ने अपने को पतन के गड्ढे में गिरने से बचाया, लेकिन जब-जब वह करुप को ताड़ी पिये देखती तब-तब उसकी दृढ़ता कम होती जाती और एक दिन उसमें दुर्बलता आ ही गई।

६

कीरमबूर के ताड़ीखाने के बाहर, दीवाल में बनी हुई छोटी खिड़की के पास, जहांसे ताड़ी मिलती थी, बहुत-से चमारों, कोलियों और दूसरे अछूतों का जमघट लगा हुआ था और वे ऊटपटांग शोर मचा रहे थे। अन्दर भी थूक, धूल और गंदगी के मारे नरक-सा दिखाई देता था। मक्खियां भिनक रही थीं और ताड़ी की बदबू से नाक सड़ी जा रही थी। चारों ओर पियक्कड़ों की टोली की टोली बैठी हुई ऊधम मचा रही थी।

"अगर तूने फिर ऐसी बात मुँह से निकाली तो दांत तोड़ डालूँगा," करुप ने कहा।

"दांत तोड़ डालेगा ! और तू ! तू जो अपनी औरत तक को सीधा नहीं रख सकता ! खूब, जरा इस दांत तोड़नेवाले की सूरत तो देखो," पलनि ने जवाब दिया।

इस पर करुप ने ताड़ी का कुल्हड़ उठाकर तड़ाक से पलनि के मुंह पर दे मारा। पलनि की नाक से खून का फव्वारा छूट पड़ा।

एक ने चिल्लाकर कहा—"उल्लुओं, क्यों ताड़ी का नाश कर रहे हो। अरे, कहीं धोखेबाज औरतों के लिए ऐसी अच्छी चीज बरबाद की जाती है ! तिरिया का क्या विश्वास ; वे तो सबकी सब बेवफ़ा होती है।"

पलनि की नाक से खून बहता रहा। "अरे पलनि मर गया" एक ने कहा और उसके पास जाकर उसके मुँह पर से खून पोंछा। पलनि के ज्यादा चोट नहीं लगी थी। उसने गुस्से में खड़े होकर एक ईंट करुप पर तानकर फेंकी। करुप कतराकर अपने को बचा गया।

दूकानवाले ने चिल्लाकर कहा—"दूकान के अन्दर लड़ाई मत करो।"

करुप बाहर भागा। पलनि भी उसके पीछे दौड़ा, लेकिन चौखट पर ठोकर खाकर गिर पड़ा। करुप गाड़ी में जा बैठा और बैलों को हांककर जोर-जोर से चिल्लाता और गालियां देता हुआ चला गया।

आज करुप घर पर रोज से जल्दी पहुंच गया। दरवाजा अन्दर से बन्द था।

करुप ने चिल्लाकर आवाज दी—"अरी दरवाजा बन्द करके अन्दर क्या कर रही है? मैं बाहर इन्तजार में कब तक खड़ा रहूं? दरवाज़ा खोल और बैलों को पानी पिला।"

अन्दर किसीके चलने की आहट सुनाई दी, लेकिन दरवाजा नहीं खुला। करुप आवाजें देता रहा। कुछ देर बाद पार्वती बाहर आई और करुप के सामने खड़ी होकर बोली—"मेरे साथ आकर जरा भैंस को तो देखो। इसे न जाने क्या हो गया है, लातें मारती है और धार नहीं निकालने देती।"

"भैंस जाय भाड़ में। मुझे प्यास लगी है; थोड़ा पानी ला," यह कहता हुआ करुप अन्दर चला गया।

इस्माइल भीतर था। करुप को आते देख वह दीवाल के सहारे-सहारे भाग निकलने की कोशिश करने लगा, लेकिन करुप की दृष्टि से बच न सका।

"बदमाश कहीं की"! करुप दहाड़ा और पास पड़ी हुई कुदाली उठाकर उसने पार्वती पर फेंकी।

फिर उसने दरांती उठाई और भागते हुए इस्माइल पर पूरी ताकत से तानकर मारी। इस्माइल घायल होकर गिर पड़ा और उसके सिर से खून की धारा बह निकली। इसके बाद करुप पार्वती की ओर झपटा, लेकिन वह भागकर जेठ के घर चली गई। थोड़ी दूर तक करुप ने उसका पीछा किया, लेकिन पड़ोसियों को अपनी ओर आते देख वापस चला गया। उसी वक्त उसने देखा कि इस्माइल फिर उठकर भागने की चेष्टा कर रहा है। वह उसकी ओर पागल की तरह लपका और बोला—"आज

तुझे जान से मारकर ही रहूंगा ।" लेकिन उस समय तक बहुत-से आदमी इकट्ठे हो गये थे ; उन्होंने उसे पकड़कर उसके हाथ से दरांती छीन ली ।

७

करुप और पार्वती रामपुर की पुलिस चौकी पर अलग-अलग कोठरियों में बन्द कर दिये गये ।

बहुत-से सिपाही पार्वती के सींखचों के सामने घूम रहे थे और उसे देख-देखकर मुसकरा रहे थे । वे इस बात की ताक में थे कि किसी तरह पार्वती से बात करने का मौका मिले । लेकिन वह रंज में डूबी हुई थी । उसकी आत्मा को बड़ा कष्ट हो रहा था और उसकी दशा उस जानवर-जैसी हो रही थी जो जंगल की आजादी में पला हो और पकड़कर पहली बार कटघरे में बन्द किया गया हो ।

"सारी बातें सच-सच बता देगा तभी हम तुझे छुड़ाने की तरकीब सोच सकेंगे," दारोगा ने करुप से कहा ।

"छिपाने की क्या बात है ? मुझे तो कुछ खबर ही नहीं । करुमांडूर से मैं शुक्रवार को लौटा," करुप ने जवाब दिया ।

"इस तरह की गड़बड़ बातों से कोई फ़ायदा नहीं, तेरी औरत ने सब बता दिया है ।"

"अच्छा ! चुड़ैल ने सब कुछ कह दिया ? उस कमबख्त की वजह से मैं बरबाद हो गया ।"

"हां ठीक है, औरत ही सारी मुसीबत की जड़ होती है । अच्छा, अब सारा किस्सा बयान कर डालो ।"

"अब मुझे क्या बताना रह गया ; अभी तो आप कह रहे थे कि मेरी औरत ने सब भेद खोल दिया है ।"

"यह तो ठीक है, लेकिन हमें तो तुमसे कबूलवाना है । अगर तुमने ऐसा नहीं किया तो सात साल की सख्त सजा भुगतनी पड़ेगी ; समझे ?"

"भुगतने दो सात साल की सज़ा । मैं कुछ नहीं बताऊंगा ।"

"नरमी से पूछने पर यह गंवार कभी ठीक-ठीक नहीं बतायगा । इससे

तो जबरदस्ती कबूलवाना पड़ेगा," पास खड़े हुए एक सिपाही ने कहा। फिर उसने कुछ ऐसी बातें करने को कहीं जो यहाँ लिखी नहीं जा सकतीं।

"हां, हां, इसकी अच्छी तरह से देखभाल करो," दारोगा ने 'देखभाल' शब्द पर एक विशेष ढंग से जोर देते हुए कहा।

पार्वती से भी पूछताछ हुई।

"देख औरत, तू बेकसूर मालूम होती है। अगर तू सच-सच बता देगी तो बच जायगी। क्या जुम्मे की शाम को कादिर खां अपने बेटे इस्माइल के साथ तेरे घर गया था?" जमादार ने पूछा।

"बाप और बेटा दोनों? नहीं," पार्वती ने कहा।

"हूं! तो इस्माइल अकेला गया था!" जमादार ने कहा और पास खड़े हुए सिपाहियों की तरफ़ आंख मारी।

"सरकार मुझसे ऐसी बातें न करें। मेरे घर मुसलमान का क्या काम? एक औरत से ऐसे गंदे सवाल आप कैसे पूछ सकते हैं? मुझे घर भेज दीजिये, वहाँ मेरे सास-ससुर हैं। अगर आप उनसे पूछेंगे तो वे सब बता देंगे!"

"ओ:, तो तू घर जाना चाहती है! ऐसी जल्दी क्या है! देख अगर तू सच बोलेगी तब तो घर जा सकेगी नहीं तो तुझे यहीं रहना पड़ेगा।"

"ओ मेरे भगवान्!" पार्वती रोकर बोली।

"सीधे-सीधे पूछने से यह कुछ नहीं बतायगी। बड़ी चालाक औरत है। इस कुतिया ने न जाने कितने नौजवानों को बरबाद किया है," जमादार बोला।

"क्या आपके लड़कियाँ नहीं हैं? एक बेगुनाह और गरीब औरत पर तरस खाइये और मुझे अपनी बहन समझिये," पार्वती ने गिड़गिड़ाकर कहा।

"अरे लाना तो गरम लोहा ज़रा," जमादार चिल्लाकर बोला

"हजूर, मेरे आदमी से पूछ लें; वह सब बातें बता देगा। बेकार एक मासूम औरत को क्यों सताते हैं?"

"तो क्या तू सोचती है कि हमने तेरे आदमी से नहीं पूछा ? हम उससे पूछ चुके हैं, उसने सब कुछ बता दिया है," दारोगा ने कहा।

"क्या सचमुच उसने सब कुछ कह दिया है," पार्वती ने दुःखी होकर पूछा।

"हां, हां, सब कुछ बता दिया है। वह कहता है कि सब कुछ तेरी ही बदमाशी की वजह से हुआ है।"

"ओ मेरे राम!" पार्वती हाथ मल-मलकर रोने लगी और पछाड़ खाकर गिर पड़ी।

"देख औरत, रोने-धोने से काम नहीं चलेगा। इन बातों से तू हमें धोखा नहीं दे सकती। तू बनना तो खूब जानती है! सच बता, कितनों को तबाह कर चुकी है तू?"

"ऐसी बातें मत करिये, सरकार! आप सब तो मेरे भाई के बराबर हैं। उस आदमी ने मुझसे अपना रुपया मांगा था।"

"अच्छा तो अब आई ठीक रास्ते पर," जमादार ने कहा।

"मैंने आपसे कहा न था, दारोग़ा साहब?" वह दारोगा की ओर मुड़ता हुआ बोला और फिर पार्वती की तरफ देखकर कहने लगा—"ऐ औरत, इधर सुन; अगर तू सच बता देगी तो हम वादा करते हैं कि तुझे छोड़ देंगे और तेरा आदमी भी थोड़ी-सी सज़ा पाकर छूट जायगा। हम औरत जात को जेल भेजना नहीं चाहते।"

"हजूर मुझे आज रात घर जाने दीजिये, फिर मैं सब कुछ बता दूँगी," पार्वतीने कहा।

"अच्छी बात है, इसे घर जाने दो; ऐसा मालूम होता है कि यह सच्ची बातें बताने को तैयार है," दारोगा ने कहा।

"अगर यह घर चली गई तो फिर सच बात कभी नहीं बतायगी," जमादार ने दारोग़ा को सावधान करते हुए कहा।

इस पर दारोग़ा ने सिपाही के कान में कहा—"हमने इसे गिरफ्तार नहीं किया है, सारी रात हवालात में कैसे रख सकते हैं?"

"बहुत अच्छा, तो हम इसे पहरे में घर भेज देते हैं और कल फिर पहरे में ही बुला लेंगे," सिपाही बोला।

८

करुप के बाप ने अपने बड़े बेटे से एक वकील करने को कहा। खर्च के लिए उन्होंने करुप की गाड़ी बेच दी और उन रुपयों के निबट जाने पर दूसरे गाँव में किसी सम्बन्धी के पास उसकी भैंस गिरवी रखकर कुछ और रुपया उधार ले लिया। पार्वती को उन्होंने जी भरकर कोसा। उनकी समझ में वही सब मुसीबतों की जड़ थी।

करुप के वकील ने मजिस्ट्रेट के सामने गवाही पेशकर यह साबित करने की कोशिश की कि दुर्घटना के समय करुप करुमांड्डर में था। उसने पूरे तीन घंटे तक जिरह की जिसे सुनकर करुप के भाई-बाप को बड़ी खुशी हुई।

क़ादिर खां ने भी हलफ उठाकर गवाही दी। उसने बयान में कहा—"मैं अपने बेटे के साथ करुप के घर रुपये का तक़ाजा करने गया था, वहां करुप ने मुझे गालियां दीं और जब हमने अपने रुपयों के लिए ज्यादा जोर दिया तो करुप ने हंसिया निकालकर मुझपर हमला किया, लेकिन मेरा लड़का इस्माइल बीच में आ गया और चोट उसको लगी। तकदीर से उसकी खोपड़ी बच गई और सिर्फ दाहिना कान ही कटकर रह गया, नहीं तो वह वहीं ढेर हो जाता।"

पार्वती की भी गवाही ली गई। वकील के सिखाने के मुताबिक उसने हर बात से इंकार कर दिया और कहा कि मैंने जो बयान पुलिस के सामने दिया था वह मुझसे जबरदस्ती दिलवाया गया था।

मजिस्ट्रेट ने मुकदमा सेशन के सिपुर्द कर दिया।

अब करुप के बैल भी बेच डाले गये और सेशन की अदालत के लिए नया वकील किया गया। मुकदमा खतम होने तक के लिए पार्वती भाई के पास रहने पीहर चली गई।

पार्वती का भाई बहुत ही गरीब था। खाने-पीने तक का गुजारा

मुश्किल से होता था। उसकी स्त्री नल्लायी पार्वती को अपने साथ आकर रहते देख जल-भुनकर राख हो गई। एक दिन जब पार्वती दरवाजे के पास खड़ी हुई अपने भाई से रो-रोकर बातें कर रही थी, नल्लायी बाहर आई और चिल्लाकर बोली--"हम ऐरे-गैरे को अपने घर में नहीं ठहरा सकते ; यहां तो अपनी ही रोटी के लाले पड़ रहे हैं।"

फिर बाहर से दरवाजा बन्द कर वह खेत पर चली गई।

"पार्वती, गाय के छप्पर में से गोबर इकट्ठा कर ले और खेत पर ले जा," उसके भाई ने कहा। पार्वती मुफ्त रोटियां नहीं तोड़ती थी। दिन-रात कड़ी मेहनत कर वह घर के काम में भावज का हाथ बटाने की कोशिश करती थी, फिर भी भावज का हृदय नहीं पसीजता था। वह सदा पार्वती का अपमान करती रहती थी और बेचारी पार्वती सब कुछ सब्र के साथ सह लेती थी।

एक दिन सुबह ही सुबह एक सिपाही आया। सेशन की कचहरी में करुप का मुकद्दमा पेश होनेवाला था इसलिए उसने पार्वती से गवाही देने चलने के लिए कहा। पार्वती भावज के ताने-तिशनों से इतनी दुःखी हो गई थी कि इस सम्मन तक से उसे कुछ तसल्ली हुई। सिपाही लम्बे कद का बड़ी-बड़ी मूंछों वाला एक बूढ़ा मुसलमान था। देखने में वह बड़ा भयानक लगता था, लेकिन उसकी बातों में बाप की-सी ममता थी।

वे ईरोड को तरफ़, जहां उन्हें ट्रेन पकड़नी थी, पैदल जा रहे थे। सिपाही ने पार्वती से कहा—"बहिन, सारी बातें सच-सच बता देना ; मुमकिन है कि इससे साहब को तुमपर रहम आजाय और वह तुम्हारे आदमी को रिहा कर दें।

"मैं सच बात कैसे बता सकती हूं, सिपाहीजी ? बड़ी बेइज्जती होगी।"

"बेइज्जती की क्या बात है ? आदमी से तो भूल-चूक होती ही रहती है। ऐसा तो शायद ही कोई हो जिसने एक दफ़ा भी इस तरह धोखा न खाया हो। खुदा हम सब पर निगाह रखता है, फिर भी वह कभी-कभी हमें गुनाह करने ही देता है। यह सब उसीकी मर्जी से होता है।"

"तो तुम्हारी राय है कि मुझे सब कुछ बता देना चाहिए ? मैं बिरादरी से निकाल दी जाऊंगी और मेरा आदमी मुझे अपने घर में नहीं घुसने देगा। तब मैं क्या करूंगी ?"

"अगर तुम सच बोल दोगी तो तुम्हारा आदमी छः महीने की ही सजा पाकर छूट जायगा ; नहीं तो छः साल के लिए जायगा। बिलकुल इसी तरह का मुकदमा पहले हो चुका है। अगर इस वक्त तुम अपने आदमी की मदद करोगी तो वह तुम्हारा एहसान मानेगा और मंदिर में कुछ भेंट-पूजा चढ़ाकर तुम्हें फिर जाति में मिला लेगा। चाहे जो कुछ हो, सच बोलना हमेशा अच्छा होता है।"

पार्वती चुप हो गई। आत्मा ने कहा कि सच बोल देना चाहिए ; लेकिन दूसरे क्षण उसके मस्तिष्क में कुछ और विचार उठे जिन्होंने इस सद्भावना को दबा दिया। भय और घबराहट से उसका दिमाग चकराने लगा और वह मन-ही-मन में भगवान् को याद करने लगी।

ईरोड पहुँचकर सिपाही ने उसे रेल के डिब्बे में बैठा दिया। पार्वती के लिए रेल में सफ़र करने का यह पहला अवसर था। स्टेशन की भीड़ और ट्रेन की रफ़तार से वह डर-सी गई। धीरे-धीरे सब बातें उसके विचारों की उलझन में मिल गई और उसे हर चीज घूमती-सी दिखाई देने लगी।

ट्रेन तेजी से चल रही थी। एकाएक मुसकराता हुआ एक छोकरा न मालूम कहांसे आ खड़ा हुआ और गाने लगा। उसकी दोनों आंखें अन्धी थीं। चिथड़ा पहने हुए एक दूसरा लड़का भी उसके साथ ही खड़ा होकर गाने लगा।

"बदमाशो, कहां छिपे हुए थे अब तक ?" सिपाही बोला। छोकरे बिना उत्तर दिये मुस्काराते और गाते रहे। वे बड़े प्रेम से गा रहे थे और उसके गाने में भावों की एक ऐसी सुकुमारता थी जो बड़े-बड़े संगीत-विद्यालयों में नहीं बल्कि गलियों में सीखी जाती है। गाना खतम

हो जाने पर अन्धे लड़के ने अपना हाथ फैलाया और दूसरे ने उसे पकड़कर गाड़ी में चारों तरफ़ घुमाया। सब लोगों ने उन्हें कुछ-न-कुछ दिया। पार्वती ने भी अपनी धोती के छोर से एक पैसा खोलकर उसे दे दिया। सारे दिन वह गीत उसके कानों में गूँजता रहा। उसके गूढ़ अर्थ को वह समझ तो न सकी; लेकिन कुछ कड़ियां और छोकरे की वेदना भरी आवाज उसे बार-बार याद आती रही।

गाने का अर्थ था—"मा और सगे-सम्बन्धियों से छिपकर मैंने क्या-क्या पाप नहीं किये? क्या मैंने मारकर खाया नहीं और खाकर मारा नहीं? फिर भी क्या मैं इच्छा को रोकना सीख सकी? वह इच्छा, जो दिन-दिन अधिकाधिक उस वस्तु को चाहती है जिसके लिए कभी इच्छा की ही नहीं जानी चाहिए। क्या जाति और धर्म का विरोध करके मेरे जन मुझे स्वीकार करेंगे? क्या धर्मवाले मुझे अंगीकार करेंगे?—मुझे, जिसने ओ मेरी बहन, निर्लज्जता के साथ धूर्ततापूर्ण जीवन बिताया है!"

६

सेलम पहुंचकर सिपाही पार्वती को एक गरीबों के ढाबे में ले गया और ढाबेवाली से पार्वती को 'आधी खूराक' देने के लिए कहा। 'आधी खूराक' ढाबों का एक विशेष शब्द होता है।

ढाबेवाली ने पार्वती से सेलम आने का कारण पूछा और जब पार्वती ने यह बताया कि मैं एक सेशन के मुकदमे में गवाही देने आई हूं, तो उसके चारों तरफ़ भीड़ इकट्ठी हो गई। वे सब आदमी लंका में चाय के बगीचों में काम करने के लिए ले जाये जा रहे थे।

उस दिन अदालत में खून का एक पुराना मुकदमा चल रहा था, इसलिए करुप का मुकदमा पेश नहीं हुआ। दूसरे दिन जब मुकदमे की सुनवाई हुई तो पार्वती गवाही देने के लिए नहीं बुलाई गई। सरकारी वकील ने कहा कि मुझे उसकी आवश्यकता नहीं है।

लेकिन करुप के वकील ने कहा कि मैं उससे मुजरिम के बारे में गवाही दिलवाना चाहता हूँ, इसलिए उसे रोक लिया जाय। शाम को

करुप का बड़ा भाई पार्वती को अपने वकील के पास ले गया। वकील ने भी उससे सब बातें सच-सच कह देने के लिए कहा; जैसा कि रास्ते में सिपाही ने कहा था।

पार्वती अपने पति को बचाना तो अवश्य चाहती थी लेकिन अपने अपराध को स्वीकार करने के विचार से कांप उठती थी।

अन्त में उसने कहा—"भगवान् जैसा कहलायगा वैसा कहूंगी।"

"कमबख्त, तू भी भगवान् का नाम ले सकती है? मारो इसे पुरानी जूतियों से," करुप के बड़े भाई ने डपटकर कहा।

इसपर पार्वती डर के मारे काँप उठी और बोली—"अच्छा तो जैसा तुम कहोगे वैसा ही करूँगी। एक औरत कर ही क्या सकती है?

वकील यही चाहता था। उसने सबको चले जाने के लिए कहा और थोड़ी देर तक करुप के भाई से अकेले में बातचीत की।

दूसरे दिन पार्वती बहुत काफ़ी देर तक और आदमियों के साथ अदालत के सामने एक वृक्ष के नीचे प्रतीक्षा करती रही। एकाएक किसी ने ज़ोर से उसका नाम लेकर पुकारा। पार्वती चौंक पड़ी। तभी तक चपरासी ने आकर हाकिमाना ढंग से कहा "इधर आओ," और वह उसे गवाहों के कटघरे में ले गया। वहाँ उसने जो कुछ भी देखा उससे उसका माथा चकरा गया। कमरे के पच्छिमी कोने में उसका पति सींखचों के पीछे एक जंगली जानवर की तरह खड़ा हुआ उसकी ओर घूर रहा था। उसके सिर के बाल और दाढ़ी-मूँछ बहुत बढ़ रही थी और वह इतना डरावना दिखाई पड़ता था कि पार्वती उसे पहचान भी मुश्किल से पाई। जब एक ग़रीब किसान कैदखाने में बन्द कर दिया जाता है और दो-तीन महीने तक उसे नहाने-धोने और हजामत बनाने नहीं दिया जाता तो कुछ ही दिनों में वह हत्यारा-सा दिखाई देने लगता है।

"हाय, इस मुसीबत की जड़ मैं ही हूँ," पार्वती ने मन-ही-मन में कहा और उसे भयंकर मानसिक पीड़ा हुई। अपने सामने के सीखचों को पकड़कर वह बड़ी चेष्टा के साथ सीधी खड़ी रह सकी और जब

पेशकार ने चिल्लाकर हलफ़ उठाने को कहा तो उसके सिर में चक्कर आ गया।

"मैं भगवान् को साक्षी देकर कहती हूँ कि मैं सच कह रही हूँ। उस शाम को जब मैं खाना बना रही थी......"

जज ने सरकारी वकील की तरफ़ देखा और कहा—"मालूम होता है कि इसने सारी बातें अच्छी तरह रट रखी हैं।" पैरवी के गवाहों के साथ ये हमेशा ऐसा ही व्यवहार करते हैं।

"कोई बात नहीं, अभी सब कुछ भूल जायगी," जज ने फिर कहा।

जज के इस व्यंग्य पर इजलास में बैठे हुए लोगों ने खूब कहकहा लगाया। सरकारी वकील की हँसी सबसे तेज़ थी। दूसरे वकीलों ने भी ज़रा देर बाद उसका साथ दिया। करुप का वकील भी धीरे से मुसकराया।

"जो मैं कहूँ उसे दुहराती चलो," पेशकार ने कठोरता के साथ कहा। इससे पार्वती की घबराहट और भी बढ़ गई। उसने सोचा—"तो क्या जो बात वकील और जेठजी ने सिखाई थी वह अब किसी काम नहीं आयेगी? क्या अब वही कहना पड़ेगा जो पेशकार कहेगा?"

हलफ़ उठाने के बाद जिरह शुरू हुई। कभी-कभी तो पार्वती अपने से पूछे गये सवाल समझ भी नहीं पाती। "जब मैं खाना बना रही थी तो इस्माइल आया और मुझसे अनुचित प्रस्ताव करने लगा। मैं मना कर ही रही थी कि अचानक मेरा आदमी आ गया और उसने मुझपर कुदाली फेंककर मारी। मैं डरकर बाहर भाग गई और फिर क्या हुआ इसकी मुझे बिलकुल याद नहीं, सिवा इसके कि मैंने इस्माइल के सिर से खून की धारा बहते देखी।" यह थी वह कहानी जो वकील ने पार्वती को बयान में बताने के लिए सिखाई थी।

"चुड़ैल," करुप अपने कटघरे में-से चिल्लाया। उसे अभी तक यही उम्मीद थी कि उसके आदमी गवाही दिलाकर यह सिद्ध करा देंगे कि अपराध के समय वह करुमांड्डर में था। उसके वकील ने उसके पास जाकर कान में कुछ कहा जिससे उसे कुछ ढाढ़स-सा बंधा। जिरह के ख़तम हो

जाने पर असेसरों ने राय दी कि गवाही से यह साबित नहीं हो सका कि मुजरिम का इरादा खून करने का था ; उसने अधिक उत्तेजित किये जाने के कारण ही इस्माइल को गहरी चोट पहुँचाई थी।

जज ने कार्रवाई अगले दिन के लिए मुल्तवी कर दी। दूसरे दिन फैसला सुना दिया गया। जज ने असेसरों की राय ठीक नहीं समझी और कहा कि मुजरिम का खून करने का इरादा साबित हो गया है। उसने कादिर खां और इस्माइल के इस बयान को सच मान लिया कि हम दोनों करुप के यहाँ अपना रुपया माँगने गये थे, जबकि मुजरिम ने शराब के नशे में हमपर घातक हथियार से हमला किया ; लेकिन हम भाग्यवश बच गये और बाद में गली में भीड़ इकट्ठी हो जाने से हमारी जान बच गई। जज ने यह भी कहा कि करुप की औरत का बयान विश्वसनीय नहीं है ? क्योंकि एक तो वह स्वाभावतः अपने पति को बचाना चाहती है और दूसरे उसके पुलिस और मजिस्ट्रेट के सामने दिये हुए बयान एक-दूसरे से नहीं मिलते। इसलिए उसने करुप को छः साल सख्त कैद की सज़ा दी और सरकारी वकील से यह भी कहा कि आप पार्वती पर झूठी गवाही देने के लिए मुकदमा चलाने का बन्दोबस्त करें।

करुप फैसला सुनकर चिल्ला उठा-- "इस चंडालिन ने मुझे धोखा दिया है। आप ही बताइये सरकार कि जब अपनी औरत ही धोखा दे जाय तो कोई कैसे चुप बैठ सकता है।"

"ले जाओ इसको," जज ने कहा और सिपाही उसे लेकर चल दिये। उन्होंने उसे ढाढ़स बंधाने के लिए कहा—"तुम जो कुछ कहना चाहते हो लिखकर हाईकोर्ट में अपील करो।"

१०

मुकद्मा खतम हो गया। पार्वती के किसी भी रिश्तेदार ने उसकी खोज-खबर नहीं ली। बड़ी कठिनाई से बेचारी रामपुर तक पहुँची। वही पुराना सिपाही जो उसे सेलम लाया था उसे वापस भी ले गया।

"तुम्हें शुरू से ही सच बोलना चाहिए था," सिपाही ने कहा।

चूँकि तुम पहली अदालत में सच नहीं बोली थीं, इसलिए जज ने तुम्हारी बात का यकीन नहीं किया। सारी सच्ची बात तो तुमने यहाँ भी नहीं कही।"

ये शब्द पार्वती के कानों में पड़े अवश्य, लेकिन जैसे उसकी कुछ समझ में नहीं आया। काफी रात हो जाने पर वे रामपुर पहुँचे। मुसलमान सिपाही ने कहा कि आज रात यहीं मेरे बरामदे में सो जाओ, कल सवेरे अपने भाई के घर चली जाना।

उसके कहने से वह पड़ तो गई लेकिन उसे नींद नहीं आई। "हाय अब भाभी को मैं कैसे मुँह दिखाऊँगी," उसने सोचा। उसकी सारी आशाएँ टूट चुकी थीं। भगवान् तक ने उसे भुला दिया था। उसे अब अपने कष्टमय जीवन का अंत करने के अलावा कोई चारा नहीं रह गया था। भगवान् को धन्यवाद कि अब भी एक ऐसी युक्ति थी जिससे सारे दुःखों का अंत हो सकता था। इस युक्ति को पार्वती से कोई दूसरा नहीं छीन सकता था।

बहुत देर तक जागते रहने के बाद सुबह होते थकावट के कारण पार्वती को नींद आ गई। मुसलमान सिपाही जब सुबह छः बजे बाहर निकला तो उसने पार्वती को गहरी नींद में सोते पाया। "अपने आदमी को जेल में भिजवाकर कैसे मजे में सो रही है," उसने सोचा। "इन बेवफ़ा औरतों का यकीन करना कितनी बेवक़ूफ़ी है!"

पार्वती एक बच्चे के रोने की आवाज़ सुनकर उठ बैठी। वह सपना देख रही थी कि मेरा बच्चा रो रहा है। नींद खुलने पर भी उसे कुछ देर बाद तक यह ख़याल नहीं आया कि मेरे बच्चे को मरे एक ज़माना हो गया है और अब मैं एक असहाय औरत हूँ, जिसका पति और घर-द्वार सब कुछ छिन चुका है।

जब वह उठकर बैठी तो उसने अपने सामने एक काले-कलूटे लड़के को देखा। उसने दोनों हाथों से अपना मुँह ढक रखा था और कभी वह बच्चे के रोने की-सी आवाज़ निकालता था तो कभी मा की-सी। पार्वती के बैठते ही वह चुप हो गया और पैसा माँगने लगा।

"घर कहाँ है?" पार्वती ने पूछा।

"माँ मुझे एक पैसा दे दो," लड़के ने चिल्लाकर कहा ।

"तेरा बाप कौन है?" पार्वती ने फिर पूछा ।

"मैं नहीं जानता," लड़के ने जवाब दिया ।

"क्या तेरे मा भी नहीं है!"

"माँ तो है, लेकिन वह मुझे सूअरवाले के यहाँ छोड़ गई है ।"

"तुझे खाना कौन देता है?"

"मैं खुद कमाता हूँ । जितने पैसे मुझे मिलते हैं मैं सूअरवाले को दे देता हूँ और वह मुझे खाना खिला देता है । कभी-कभी वह मुझे खाना खिला देता है और बाद में जब मेरे पास पैसे बचते हैं तो मैं उसे दे देता हूं ।

"ये अजीब तरह की आवाजें बनानी तूने कहां से सीखी?"

"इन्हें मैंने तजावूर में सीखा था । मा मुझे कुछ दे दो, मुझे सूअरवाले के पास जाना है ।

इतने में एक सिपाही बाहर आ गया और उसने लड़के को धमकाकर भगा दिया । "ये सब बदमाश होते हैं । इस तरह दिन में आकर सब भेद ले जाते हैं और रात को चोरों को लाकर चोरी करा देते हैं । रात को तुम अच्छी तरह सोई मालूम होती हो?" सिपाही ने पूछा ।

"भगवान् तुम्हारा भला करेगा । तुमने मेरे साथ बाप-जैसा बर्ताव किया है ।" यह कहकर पार्वती फूट-फूटकर रोने लगी ।

उस आदमी के मन में अब पार्वती के लिए दया नहीं थी । उसने सोचा कि यह बन रही है । वह बोला—"तुम अब अपने भाई के घर जा सकती हो । अगर अभी चल दोगी तो दोपहर होने से पहले ही वहां पहुंच जाओगी ।"

भूखी-प्यासी और बेहद थकी हुई पार्वती दोपहर को अपने भाई के घर पहुंची । उसे आशा थी कि उसके भाई का हृदय कुछ पिघल गया होगा । परन्तु उसके आने से पहले ही उसकी खबर गाँव में पहुंच चुकी थी । भाई खेत पर चला गया था और भाभी द्वार पर खड़ी थी; पार्वती

को आते देखकर बोली—"तू फिर आ गई ! यहां अपना काला मुँह मत दिखा। यहां ऐसी औरतों के लिए जगह नहीं है जो अपने आदमी का सत्यानाश करके मुसलमानों के साथ भाग जाती हैं ! अब तू चाहती है कि मेरे घर में बैठकर मेरे आदमी का खून चूसे ? मेरे बाल-बच्चे हैं और मेरे ज़िम्मे उनकी निगरानी है। मैं नहीं चाहती कि तेरा उनका साथ हो। उसी आदमी के पास जा जिसके लिए तूने अपने आदमी को धोखा दिया। यहां तेरे लिए जगह नहीं है।',

"भइया, भइया," पार्वती ने रोकर पुकारा। वह समझी कि भाई अन्दर है।

"क्या तुम मुझसे बोलोगे नहीं ? क्या तुमने भी मुझे छोड़ दिया ? हे भगवन्, अब तू ही रक्षा कर," पार्वती ने सिसकते हुए कहा और भूखी-प्यासी, थकी-मांदी वह रोती हुई वहांसे चल दी।

सूरज तप रहा था, परन्तु पार्वती को अब न गरमी सता रही थी, न भूख। उसका गला और उसके होंठ प्यास के मारे सूख रहे थे और जिन-जिन देवी-देवताओं के नाम वह जानती थी उन्हें वह बड़ी कठिनाई से याद कर पा रही थी। दूसरे गाँव में पहाड़ी पर एक मंदिर था। वह उसी ओर मुड़ गई।

पहाड़ी पर थोड़ी ही दूर चढ़ने के बाद उसे लगा कि मैं अब एक पग भी आगे नहीं रख सकती। उसे मूर्छा-सी आने लगी और वह एक चट्टान की छाया में बैठ गई।

कुछ देर बाद वह उठी और फिर पहाड़ी पर चढ़ने लगी। वह मन्दिर तक पहुंच गई, परन्तु भीतर नहीं गई। बाहर खड़े-खड़े ही उसने प्रार्थना की। फिर वह मन्दिर से भी ऊंची एक चट्टान पर पहुंची और उसकी चोटी पर चढ़ने लगी ! रास्ता मुश्किल था, लेकिन पार्वती में एक नई शक्ति आ गई थी। चोटी पर पहुंचकर वह उसके पच्छिमी छोर पर गई और वहाँसे नीचे की तरफ झांकने लगी। नीचे से लेकर चोटी तक पहाड़ सीधा खड़ा था। उसे चक्कर आ गया और वह बैठ

गई। लेकिन वह फिर उठी और "काली माई, मेरे पापों को क्षमा करके मुझे अपनी गोद में शरण दो" कहती हुई वह नीचे कूद पड़ी।

अहा, एक ही क्षण में कितना सुख और आनन्द! पृथ्वी और आकाश घूम उठे। कितना शीतल! कितना सुखकर! कितना आनंदमय! तब उसे अपने सिर में एक इतनी जोर का धमाका मालूम हुआ जैसा उसने पहले कभी नहीं सुना था और वह सदा के लिए अनन्त शान्ति में लीन हो गई। उसकी आत्मा अपने दुःख के पिंजरे को छोड़ कर उड़ गई।

: ४ :

पुनर्जन्म

जब बालक और बन्दर मिल जायं तो फिर खेल-तमाशे की क्या कमी ? वेलमपल्ली गांव के सब लड़के इमली की बगिया में इकट्ठे हो गये थे। कभी वे दरख्तों पर चढ़ते थे, कभी नीचे कूदते थे और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर डालों पर बैठे हुए बन्दरों को भगाने की कोशिश करते थे। कभी-कभी बन्दर बाजी मार लेते थे। जब उनमें-से सबसे बड़ा बन्दर खड़ा होकर गुस्से से खों-खों करता था तो छोटे-छोटे लड़के सारी छकड़ी भूल जाते थे और कुछ-कुछ डर भी जाते थे। हां, बन्दरों के छोटे-छोटे बच्चे जरूर बुरी तरह डरे हुए थे और उन्हें यह तमाशा बिलकुल अच्छा नहीं लग रहा था। लड़कों से बचने के लिए वे एक डाल से दूसरी डाल पर कूद रहे थे। लेकिन लड़कों को इसमें बड़ा मज़ा आ रहा था। उनकी चिल्ल-पों और बन्दरों की किलकिलाहट गांव तक में सुनाई दे रही थी।

एकाएक बगिया के पूर्वी किनारे से एक लड़के के जोर से चीखने की आवाज सुनाई दी। सबके सब उधर भागे। उन्होंने देखा कि एक बन्दरिया ने मुकुन्द पर हमला कर रखा है और वह उसे नाखूनों से खसोट और उसकी गर्दन पर काट रही है और मुकुन्द के बड़े जोरों से खून बह रहा है। मुकुन्द ने बन्दरिया के बच्चे को खदेड़ा था और वह उससे बचकर भागने की कोशिश करते वक्त डाल पर से फिसलकर गिर पड़ा था। मुकुन्द उसे उठाकर भाग खड़ा हुआ। इसपर बन्दरिया उस

पर झपटी और उसे गिराकर बुरी तरह काटने-खसोटने लगी। मुकुन्द घबरा गया और उसकी समझ में नहीं आया कि क्या करूं। घबराहट में उसने बच्चे को और भी कसकर पकड़ लिया। इससे बन्दरिया और भी चिढ़ गई और मुकुन्द को और भी बुरी तरह से काटने लगी। लड़कों ने चिल्लाकर कहा—"बच्चे को छोड़ दे, बच्चे को छोड़ दे;" लेकिन मुकुन्द की समझ में नहीं आया कि ये क्या कह रहे हैं। बन्दरिया बहुत बड़ी थी और क्रोध में भर रही थी, इसलिए किसी लड़के को उसके पास जाने का साहस नहीं हुआ।

मारि नाम का एक छोटा लड़का दूर खड़ा-खड़ा सब-कुछ देख रहा था। "अरे यह मर जायगा" चिल्लाता हुआ वह दौड़कर मुकुन्द के पास गया और बन्दरिया के बच्चे को छीनकर भाग खड़ा हुआ। बन्दरिया मुकुन्द को छोड़कर मारि के ऊपर झपटी। मारि ने बच्चे को नीचे फेंक दिया और पास ही पड़ी हुई एक छड़ी उठाकर वह क्रोध में भरी बन्दरिया का सामना करने को खड़ा हो गया। बन्दरिया अपने बच्चे को भागते देखकर उसकी ओर दौड़ी। बच्चा मा से चिपट गया और दोनों पास के एक वृक्ष की सबसे ऊंची टहनी पर चढ़कर शान्ति के साथ बैठ गये, मानो कुछ हुआ ही न हो।

मुकुन्द पृथ्वी पर बेहोश पड़ा था। लड़के यह चिल्लाते हुए कि मुकुन्द मर गया, उसे बन्दरिया ने मार डाला, गांव की ओर भागे। लेकिन मारि चिन्ना के साथ वहीं रह गया। उसने कहा—"चिन्ना, जा मा से मांगकर एक बर्तन में जल्दी से पानी ले आ" और मुकुन्द के पास बैठकर उसका मुँह पोंछा और उसे आराम पहुंचाया। चिन्ना भागकर मोहल्ले में-से एक मिट्टी के बर्तन में पानी ले आया। मारि ने पानी लेकर मुकुन्द के मुँह पर छिड़का। इससे उसे होश तो आ गया लेकिन उसके घावों से खून बहता रहा।

"चिन्ना, इसे एक ओर से तू पकड़ और दूसरी ओर से मैं पकड़ता हूं; इसे इसके घर ले चलना चाहिए," मारि ने कहा और दोनों ने

मिलकर उसे उठा लिया । मारि और चिन्ना थे तो अभी छोटे लेकिन गरीब होने के कारण मेहनत के काम से घबराते नहीं थे ।

२

मुकुन्द की मा विधवा थी और ईश्वर से डरती थी। उसने कभी हिम्मत नहीं हारी और बड़े अच्छे ढंग से अपने बेटे का लालन-पालन किया । उसने अपने पति के देनदारों से सारा कर्ज़ा वसूल किया और चार एकड़ सूखी ज़मीन, जो वह छोड़कर मरा था, एक किसान को लगान पर उठा दी । उससे जो कुछ भी आमदनी होती उससे वह अपनी गृहस्थी का काम चलाती थी । मुकुन्द को उसने गाँव के छोटे-से स्कूल में दाखिल करा दिया था और घर पर वह उसे रामायण, महाभारत और भागवत की कहानियाँ सुनाया करती थी । इस तरह बाहर से वह साहसी तो दिखाई देती लेकिन अन्दर से उसके जीवन में थकावट आ गई थी । फिर भी परमेश्वर में विश्वास रखने और परम्परा के अनुसार जीवन बिताने से उसके दिन कटते रहे ।

स्नान और दैनिक पूजा-पाठ के बाद वह चौके में खाना बना रही थी कि मारि और चिन्ना "माजी, माजी" चिल्लाते हुए अन्दर आये और खून से लथपथ मुकुन्द को उन्होंने उसके सामने लिटा दिया । "मेरे बच्चे", कहकर घबराई हुई मा उसकी तरफ़ झपटी और उसका सिर पकड़कर चीख उठी—"अरे शैतानो, तुमने मेरे बच्चे को क्या कर दिया ?" उस समय उसका व्यवहार ठीक वैसा ही था जैसा बगिया की उस बन्दरिया का जिसने समझा था कि उसका बच्चा खतरे में है । बन्दरिया हो या सीता, मा का हृदय एक-सा ही होता है ।

मारि ने सारा किस्सा कह सुनाया । सुनकर सीता का हृदय कृतज्ञता से भर उठा । उसने उन बच्चों की ओर, जो मुकुन्द को घर लाये थे, प्यार से मुसकराकर देखा और पूछा --"तुम कौन हो, बच्चो ?"

"हम अछूत के लड़के हैं, माजी," मारि ने कहा ।

सुनते ही सीता का चेहरा उतर गया और वह चिल्लाकर बोली—

"अरे तुम अछूत के लड़के हो! दुष्ट कहीं के! मेरे घर में घुस आये! अरे राम, अब मैं क्या करूँ? अरे, तुम तो मेरी रसोई के पास आ गये, कमीनो!" वह सब कुछ भूल गई और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाते हुए उसने एक चैला उठाकर बड़े ज़ोर से चिन्ना पर फेंका। मारि बीच में आ गया और लकड़ी उसकी टाँग में लगी। चोट खाकर वह जमीन पर गिर पड़ा। चिन्ना चिल्लाता हुआ गली में भाग गया।

"मेरे घर में अछूत घुस आया," सीता ने चिल्लाते हुए कहा। "हाय मेरा जीवन नष्ट हो गया और उसे इतने पर भी सब्र न आया और अब वह सारे गाँव में मेरा नाम लेता फिर रहा है।"

मारि, जो गिर गया था, उठकर बैठा और अपनी घायल टाँग को धीरे-धीरे सहलाते हुए बोला—"मा जी, मैंने तो तुम्हारे बेटे को बन्दरिया से बचाया और तुमने उसका बदला मेरी टाँग तोड़कर चुकाया।" ग़रीबों के बच्चे बातें करने में बड़े चतुर होते हैं।

"भाड़ में पड़े तू और तेरी बन्दरिया," सीता ने चिल्लाकर कहा। "इस पाप से मेरा कैसे छुटकारा होगा? अछूतों की तो परछाईं से पाप लगता है और ये तो मेरे घर में पूजा की जगह चले आये! हे भगवान्, मेरे ऊपर दया करो, मेरी रक्षा करो।"

मारि अब भी वहीं खड़ा-खड़ा अपनी टाँग सहला रहा था। "चंडाल कहीं का, भाग यहाँ से," मुकुन्द की मा ने कहा और गुस्से में भर-कर उसपर दूसरी लकड़ी फेंककर मारी। इससे उसे पहले से भी अधिक चोट आई। दर्द सह न सकने के कारण वह बिलबिलाता हुआ बाहर भाग गया।

गली में भीड़ इकट्ठी हो गई थी कोई पूछ रहा था "अरे क्या बात है" और कोई उसका जवाब दे रहा था। बड़ा हो-हल्ला मचा हुआ था। अछूतों के पुरवे से मारि और चिन्ना की मा भी आकर गली के मोड़ पर खड़ी हो गई थी और शोर मचा रही थी।

३

इस घटना को दो साल बीत गये । मुकुन्द अब बड़ा हो गया था और कमलापुर के हाईस्कूल में पढ़ता था । उसे रोज दो मील जाना और दो मील आना पड़ता था ; लेकिन चूंकि उसके साथ दो लड़के और जाते-आते थे इसलिए उसे चलना अखरता नहीं था । बन्दरवाली दुर्घटना सब भूल चुके थे; सिर्फ मुकुन्द के माथे पर का बड़ा निशान उसकी यादगार-सा रह गया था ।

लेकिन मारि की मा कुप्पायी के हृदय में शान्ति नहीं थी। "हम लोग ब्राह्मण के घर में कैसे पैर रख सकते हैं ? यह पाप जरूर हमें खाकर रहेगा । तुम दूसरे लड़कों के साथ खेलने गये क्यों ? भगवान् हमें माफ़ नहीं करेगा । इसीलिए तो आजकल हमें इतनी मुसीबत उठानी पड़ रही है । अबके तो पानी भी नहीं पड़ा है और हम सब भूखों मर रहे हैं । यह सब उस ब्राह्मणी के श्राप का फल है ।" इसी तरह वह अक्सर अपने लड़के के मत्थे दोष मढ़ा करती और अपनी सारी कठिनाइयों का कारण उसी दुर्घटना को समझती । गांव के मन्दिर में जाकर वह देवी के सामने हाथ जोड़कर कहती—"देवी मैया, मेरे बच्चे का कसूर माफ करो, वह नासमझ थी ।" उसने पोंगल के लगातार तीन त्यौहारों पर मुर्गा चढ़ाया । लेकिन उसके इतनी श्रद्धा के साथ विनय करने और बलि चढ़ाने पर भी मारिअम्मा (देवी) प्रसन्न होती दिखाई नहीं दीं । मुसीबतें एक के बाद दूसरी आती ही गईं । पहले उसका पति केवल पैठ के दिन ही ताड़ीखाने जाया करता था, लेकिन अब वह रोज जाने लगा । नशे से चूर होकर वह घर लौटता और डपटकर खाना मांगता । कुप्पायी जब कहती, "खाना कहांसे आये, सारे पैसे तो तुमने ताड़ी में बहा दिये," तो उसकी लात-घूसों से मरम्मत करता । बेचारी सारे दिन जंगल से मेहनत कर कुछ लकड़ियां बटोरती और उन्हें बेचकर दो आने पैसे लेकर घर आती, लेकिन उसका आदमी लड़-झगड़कर पैसे छीन लेता और ताड़ीखाने चला जता । इस तरह जब जीवन

का भार असह्य हो उठता तो कुप्पायी अपने लड़कों को दोष देती और कहती—"यह सब ब्राह्मणी के श्राप का फल है।" इसी तरह जब उसका पति नशे में घर आता और उसे पीटता तो वह चुपचाप मार सह लेती और कहती—"रोओ मत बच्चे ! हम इस मनहूस घर और गांव को छोड़कर कहीं चले जायेंगे। मरे यह आदमी इसी ताड़ी-खाने में।"

उस साल एक बूंद भी पानी नहीं पड़ा। सारे खेत सूख गये और मजदूरों की कहीं मांग नहीं रह गई। जब खुद छोटे किसानों की हालत खराब थी तो मजदूरी पर काम करनेवालों की दशा का दयनीय होना स्वाभाविक ही था। अछूतों और चमारों की हालत तो बयान से बाहर थी।

इसीलिए जब एजेन्ट लंका के लिए कुलियों की भरती करने आया तो सबने उसका ऐसा स्वागत किया मानो कोई देवता उन्हें दुःख से छुड़ाने आया हो। इसपर गांव के बड़े किसानों ने कहा—"एजेन्ट गरीबों को धोखा दे रहा है और उनकी नासमझी से फायदा उठाकर उन्हें बहकाकर ले जा रहा है। अफसोस कि कोई इस अन्याय को रोकनेवाला नहीं।" लेकिन अछूतों और चमारों ने सोचा कि जितना कष्ट हम यहां उठा रहे हैं उससे तो, कहीं भी रहेंगे, कम ही उठाना पड़ेगा। वे गांव छोड़कर एजेन्ट के साथ लंका चले गये। कुप्पायी ने भी सोचा कि कष्ट से छुटकारा पाने का बस यही एक उपाय रह गया है और अपना नाम उन लोगों में लिखवा दिया जो अपने बच्चों के साथ जाने को तैयार थे। उसके पति ने पहले तो जाने को मना किया और कुप्पायी ने तय किया कि इसका जहां जी करे वहां जाय, लेकिन बाद में वह बोला—"मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगा; यहां मुझे खाना कौन देगा ?" और वह साथ ले चलने के लिए गिड़गिड़ाया। अन्त में वे सब चले गये।

४

तीन वर्ष और बीत गये। स्कूल में मुकुन्द बड़ी मेहनत के साथ पढ़ता

था, अन्तिम परीक्षा में वह प्रथम श्रेणी में पास हुआ । स्कूल में नतीजा सुनते ही मुकुन्द को फौरन घर जाकर मा को खबर सुनाने की उत्सुकता हुई, लेकिन उसके स्कूल के साथियों ने उसे अपने साथ मन्दिरवाली पहाड़ी पर चलने के लिए आग्रह करते हुए कहा—"चलो, पहाड़ी पर चलें; वहाँ थोड़ी देर मेला देखकर आयेंगे ।"

"पहाड़ी से तो लौटने में देर हो जायगी और मा इंतजार में बैठी रहेंगी," मुकुन्द ने जवाब दिया ।

"बेवकूफी की बातें मत करो, तुम लड़की थोड़े ही हो । अरे, देर हो जायगी तो मैं तुम्हें तुम्हारे घर छोड़ आऊँगा ; चिंता क्यों करते हो ? क्लास में अव्वल आने का घमंड हो गया है क्या ? तुम्हें हमारे साथ चलना ही पड़ेगा," एक दबंग-से बड़े लड़के ने हठ करते हुए कहा । "हाँ, हाँ चलना ही पड़ेगा," चारों ओर से लड़कों ने घेरकर कहा । मुकुन्द को सब पसन्द करते थे ।

मुकुन्द को कहना मानना ही पड़ा । बड़ा ही सुन्दर दृश्य था ! भीड़-की-भीड़ मेले की ओर जा रही थी । लड़कों को बड़ा मजा आया । वे मन्दिर में चक्कर काटते फिरे और बाजार में जी भरकर घूमे । उनमें से एक लड़का लाड़-प्यार से पला हुआ एक अमीर का बेटा था । उसके पिता ने उसे अपनी इच्छा के अनुसार खर्च करने के लिए पाँच रुपये दिये थे । वे एक मिठाई की दूकान पर गये । वहाँ उन्होंने बहुत-सी मिठाई खरीदी और सबने मिल-जुलकर खाया । फिर वे सारे दिन धूप में घूमते फिरे और शाम को घर लौटने के लिए नीचे उतरे । अभी वे आधी दूर भी नहीं गये थे कि मुकुन्द ने कहा— "रामकिशन, मुझे बड़े जोर की प्यास लगी है ।"

"यहाँ पानी कहाँ, घर पहुँचने तक इंतजार करनी पड़ेगी" दूसरे लड़कों ने जवाब दिया ।

"मूर्खो, तुम्हें इतना भी नहीं पता कि यहाँ हनुमान-कुण्ड है?" अगुआ लड़के ने कहा । वह उन्हें एक पगडण्डी के रास्ते ले गया और एक बड़ी

चट्टान के पीछे जाकर, जिसपर हनुमानजी की मूर्ति खुदी हुई थी, उसने एक कुण्ड दिखलाया। मुकुन्द ने नीचे उतरकर खूब छककर पानी पिया और फिर "कितना मीठा पानी है!" कहता हुआ वह ऊपर आया। प्यासे मनुष्य को गंदा पानी भी मीठा लगता है।

कमलापुर लौटते-लौटते बहुत अंधेरा हो गया और जिस समय मुकुन्द ने घर पहुँचकर द्वार पर धक्का देते हुए मा को पुकारा, उस समय बहुत रात हो चुकी थी।

"मुकुन्द बेटे, तुम्हें इतनी देर कैसे हो गई? मैं तो बहुत घबरा रही थी। तुमने तो कहा कि नतीजा सुनते ही लौट आऊँगा," मा ने कहा।

"हम सब मन्दिरवाली पहाड़ी पर चले गये थे, मा! मैंने तो जाने को मना किया था लेकिन लड़के माने नहीं। हमने मेला देखा, बड़ा शानदार था।"

"खैर, अच्छा है कि तुम राजी-खुशी आ गये। पास हुए या नहीं?"

"मैं अपने क्लास में अव्वल आया हूँ।"

"यह तो बड़ी खुशी की खबर है बेटे! मुझे तुमपर बड़ा अभिमान है।" यह कहकर सीता ने मुकुन्द को हृदय से लगा लिया और उसकी आँखों से आँसू बरस पड़े। उसके इस रुदन में उस नारी के हृदय की करुणा भरी हुई थी, जिसने अपने पति को खोकर पुत्र को बड़े स्नेह और सावधानी से पाला था।

५

अभी चार दिन भी नहीं बीते थे हृदय को हर्ष और अभिमान से भर देनेवाले इस समाचार को सुने। लेकिन कैसा संसार है यह! एका-एक मुकुन्द का घर उजाड़ हो गया। जिस रात को वह पहाड़ी से लौटा उसके पेट में बड़े जोरों का दर्द उठा और उसे दस्त आने लगे। किसी की समझ में नहीं आया कि इसे हैजा हो गया है। सबको यह खयाल हुआ कि मेले की दूकान से खरीदी हुई मिठाई खाने से अपच हो गया है।

मुकुन्द को बड़ा सख्त दर्द था। जब किसी ग़रीब देहाती के घर में किसीको हैजा या छूत की कोई दूसरी बीमारी हो जाती है तो उस घर में एक भी ऐसा आदमी नहीं मिलता जिसे उसे रोकने या फैलने न देने का उपाय मालूम हो और अगर किसीको मालूम भी होता है तो न पास पैसा होता है न साधन। सिद्धांत की बातें बतानेवालों की कमी नहीं होती और किताबें भी बहुत-सी मिल जाती हैं। लेकिन इस तरह की कही या लिखी बातों का हमारे दरिद्र गांवों में अनुकरण नहीं हो सकता।

मुकुन्द बच गया जैसे किसीने कोई कमाल कर दिखाया हो। लेकिन बेटे की छूत मा को लग गई। दो दिन तक वह अपनी बीमारी छिपाये-मुकुन्द की देखभाल करती रही, लेकिन जब बदन बिलकुल न चला तो पड़ गई। "पता नहीं, मेरा लड़का अब भी खतरे से बाहर हुआ या नहीं। मैं तो अब मर रही हूँ, उसकी देखभाल कौन करेगा?" वह बड़े दुःख के साथ बोली और उठकर बैठ गई। लेकिन वह बैठी न रह सकी और गिरकर बेहोश हो गई। उसके बाद उसे होश नहीं आया। हाथ-पैरों में कुछ अकड़न-सी हुई और फिर प्राण-पखेरू उड़ गये।

६

पन्द्रह वर्ष बीत गये? अब सारी चीजें बदल गई थी। वेलमपाली में ब्राह्मणों के सारे घर खंडहर बन गये थे। केवल मन्दिर का पुरोहित कृष्णभट्ट अपने घर में रह गया था। दूसरे नौकरी की तलाश में गाँव छोड़कर शहर चले गये थे। अछूतों के मोहल्ले में भी बिलकुल सुनसान हो गया था। मज़दूरी करने के लिए कुछ लोग कंडी, कुछ पेनैंग, कुछ शेरवराय पहाड़ी, कुछ बंग्लूर और कुछ दूसरी जगह चले गये थे। हाँ, किसानों के मोहल्ले में अभी उतनी सुनसान नहीं थी। अपने खेतों और ढोर-डंगरों को न छोड़ सकने के कारण अनेक कठिनाइयों के होते हुए भी वे वहीं रह गये थे।

मारि और चिन्ना अपनी मा के साथ लंका के चाय के बाग में

काम कर रहे थे। उसके बाप ने वहाँ पहुँचते ही ताड़ीखाने में जाना शुरू कर दिया था। वह अपना काम ठीक-ठीक नहीं करता था। इसलिए उसके मालिकों ने उसे काहिल शराबी समझकर थोड़े ही दिनों में नौकरी से अलग कर दिया। उसने चाय के एक दूसरे बाग में काम किया, लेकिन वहाँ भी उसकी यही दशा हुई। इसके बाद वह जगह-जगह मारा-मारा फिरता, भीख माँगता और ताड़ी पीता रहा। थोड़े दिनों बाद वह लापता हो गया और किसीको पता न चला कि उसका या हुआ।

मारि और चिन्ना बागों में काम करते थे और हाथ रोककर खर्च करते थे। मारि अब पच्चीस साल का हो गया था। जिस बाग में वह काम करता उसीके कुलियों के क्वाटरों में एक लड़की थी। उसका वहीं जन्म हुआ था और वहीं वह पली थी। एक दिन मारि की मा ने कहा—मारि, तुझे अपने गाँव में इससे अच्छी लड़की नहीं मिलेगी, तू इसी से ब्याह कर ले।" मारि ने उसका कहना मान लिया।

ब्याह से कुछ दिनों बाद मारि ने गांव वापस जाकर बसने का विचार किया। वह मा से बोला—"मा, यहाँ रहते हमें पन्द्रह साल हो चुके हैं। बाबू अब तक वापस नहीं आये। उनकी इन्तजार करने से कोई फायदा नहीं। अब हमारे गांव लौट चलने में क्या रुकावट है? ठेकेदार के पास हमारे करीब दो सौ रुपये हैं। चलो इन्हें लेकर हम वेलमपट्टी चलें और एक जोड़ी बैल और गाड़ी खरीदकर इज्जत के साथ जिंदगी बितावें। यह जगह तो मुझे बिलकुल अच्छी नहीं लगती। यहाँ हम गुलामों की तरह रहते हैं और हमसे जानवरों को तरह व्यवहार किया जाता है। यहाँ कोई देवी-देवता नहीं मानता और किसीको अपनी औरत पर ज़ोर नहीं। हम यहां और क्यों ठहरें?"

हाँ, बेटा, मैं भी यही चाहती हूँ कि वेलमपट्टी वापस चली जाऊं और वहीं तेरे बाप की झोंपड़ी में मेरी मिट्टी सकरे," कुप्पायी ने कहा।

सबके सब वेलमपट्टी लौट आये। मारि और चिन्ना अछूतों के मेले

में जाकर एक जोड़ी बैल खरीद लाये। इसके बाद वे सेलम गये और वहां से गाड़ी भी खरीद लाये । मारि अब आनन्द के साथ जीवन बिताने लगा। किसानों को उससे ईर्ष्या होने लगी और वे आपस में कहने लगे--"इस कंडी के चमार को देखो, गाड़ी और बैल खरीदकर कैसे मजे में है !"

लेकिन खुशी के दिन ज्यादा नहीं ठहरे । भाग्य ने पलटा खाया । एकाएक बैल लंगड़ा हो गया । कारण कुछ समझ में नहीं आया और बहुत दौड़-धूप करने पर भी वह अच्छा न हो सका । मारि ने कौंडलपट्टी के एक डाक्टर को पाँच रुपये दिये । पहले उसने बैल के पैर में दवाएँ लगाईं, फिर झाड़-फूँक की और आखिर में लोहे से दागा भी, लेकिन कुछ फायदा नहीं हुआ और बैल मर गया। मारि ने एक किसान के पास अपनी गाड़ी गिरवी रखकर चालीस रुपये उधार लिये । उनमें अपने बचाये हुए कुछ और रुपये जोड़कर उसने दूसरा बैल खरीद लिया और कुछ दिन तक उसका काम चलता रहा ।

एकाएक आसपास के गांवों में मवेशियों की एक छूत की बीमारी फैली और सैकड़ों मवेशी मर गये। मारि के नये बैल को भी बीमारी हुई और वह एक ही दिन में मर गया।

दोनों भाई एक किसान के पास रोजाना मजदूरी पर काम करने लगे। उनका मालिक उनसे कसकर काम लेता था और मजदूरी बहुत कम देता था। इतने से वे खुद अपना पेट नहीं भर पाते थे, इसलिए बूढ़ी और कमजोर मा को पालना कठिन होने लगा। इसके अलावा, चिन्ना मारि से झगड़ा भी करने लगा । इन्हीं दिनों पेनैंग से एक एजेण्ट कुलियों की भरती करने आया। चिन्ना अपने बड़े भाई से कुछ कहे बिना ही उसके साथ चला गया। नेगापट पहुंचकर उसने किसीसे मारि को एक पत्र लिखवाया—"भइया, तुमसे बिना कहे चले आकर मैंने बड़ा पाप किया है। यह काम मैंने अपने को भूख से बचाने के लिए किया है । भूख सही नहीं जाती थी, इसलिए मैंने सोचा कि चलूँ बाहर चलकर कुछ कमा लाऊं । मैं

तुमसे माफी की भीख मांगता हूं और यहीं से अम्मा और बड़े भाई के चरण छूता हूं और प्रणाम करता हूं।" किसीको विश्वास नहीं हुआ कि ये सब बातें चिन्ना ने लिखी होंगी। असल में यह उस आदमी के लिखने की खूबी थी जिससे चिन्ना ने चिट्ठी लिखवाई थी। फिर भी यह एक बड़ी बात थी कि चिन्ना ने दो आने पैसे खर्च किये और किसीसे कह-सुनकर अपने भाई को आदर का पत्र लिखवाया। एक गरीब अनपढ़ आदमी इससे ज्यादा और क्या कर सकता है?

बुढ़िया कुप्पाई दिन-रात रोती रहती और आप ही आप बड़बड़ाया करती—"अरे, यह सब इनके ब्राह्मणी की रसोई के पास जाने का फल है। अभी वह श्राप मिटा नहीं है। मारिआयी, तुम्हारा क्रोध कब शान्त होगा? हमारे ये दुःख के दिन कब टलेंगे? हमारे पास फूटी कौड़ी भी नहीं है। अगर मेरे पास पैसा होता तो अगले त्योहार पर मैं तुम्हें मुर्गा चढ़ाती। हे वेलमपट्टी की देवी माता, मुझे मौत दे दो तो मैं अपने कष्टों से छूट जाऊँ। बस मेरे बेटे को उम्र लगाओ और उसे अपना आशीर्वाद दो। उसे और उसकी बहू को सुखी रखो।"

मारि की स्त्री पूवायी थी तो पन्द्रह साल की, लेकिन बड़ी फुर्तीली और मेहनती थी। वह जंगल में बेधड़क चली जाती और लकड़ियाँ बटोरकर घर ले आती। वह एक मिनट भी बेकार नहीं बैठती। जब घर का काम निबट जाता और वह खाली होती तो घास काटने चली जाती या कहीं हाथ-पैर जोड़कर कुछ मजदूरी कर लेती और जो पैसे मिलते घर ले आती। वह जहाँ कहीं भी घास या लकड़ी बेचती उसे औरों से अधिक पैसे मिलते। इस तरह वह हर हफ्ते कम-से-कम दो या तीन दिन में एक-एक दुअन्नी कमा लेती और उसे लाकर मुसकराते हुए, अपने पति को दे देती।

उस साल एक बूंद भी बारिश नहीं हुई। वैसे तो पिछले चार वर्ष से पानी कम गिरा था, लेकिन उस साल जैसा सूखा पड़ा वैसा पहले कभी नहीं पड़ा था। सारे कुएं सूख गये। कहीं हरे घास की एक पत्ती

भी दिखाई नहीं देती थी । पीने तक को पानी मिलना मुश्किल होगया था। इसलिए बहुत-से और आदमी भी उस खंडहर गांव को छोड़कर चले गये।

मारि ने भी सोचा कि कहीं और चलकर पेट पाला जाय, लेकिन उसकी मा ने कहा—"हम यहीं मर मिट जायेंगे । कहीं भी रहें बात तो एक ही है ; जो भगवान् और जगह है वही हमारी यहां भी रक्षा करेगा।" बूढ़ी मा की इच्छा का विरोध करना उचित न समझ मारि चुप हो गया।

अछूतों के मोहल्ले में अब सिर्फ पांच घर आबाद थे । बाकी लोग अपना-अपना घर छोड़कर पहले ही कहीं चले गये थे । जिस तालाब से अछूत पीने को पानी लेते थे वह कभी का सूख गया था । उससे मिली हुई जमीन कुट्टि कौंड की थी। उसमें एक कुआं था जिसमें अब भी थोड़ा पानी था। कुट्टि कौंड अपनी फसल के कुछ हिस्से को इसी कुएं से पानी दे देकर सूखने से बचा सका था। जब वह अपने खेतों में पानी दे लेता और बैलों को खोलकर नहला लेता तो खेत की ओर बहती हुई नली में से अछूतों को पानी लेने देता । उन्हें कुएं में अपना बर्तन डालने की छूट नहीं थी, क्योंकि ऐसा करने से कुआं अपवित्र हो जाता ; इसलिए वे बेचारे नाली से ही पानी लेते थे । दूसरे किसान तो उन-पर इतनी भी दया नहीं दिखाते थे । सूखे के कारण पानी वेलम-पट्टी में एक अनमोल वस्तु बन गया था ; इसलिए इसमें ताज्जुब ही क्या कि किसान एक बूंद भी पानी अपने खेतों से बाहर नहीं जाने देना चाहते थे । लेकिन कुट्टि कौंड दयालु था ; उसने यह सोचकर कि बेचारे अछूत पानी बिना तड़प रहे हैं उन्हें अपनी नाली से पानी लेने की छूट दे दी।

औरतें वहां सुबह से ही प्रतीक्षा में खड़ी हो जातीं और इस बात पर झगड़तीं कि पहले अपना बर्तन मैं भरूंगी । नाली गहरी नहीं थी, इसलिए उसमें खुदे हुए गड़हों में बहुत ही कम पानी ठहरता था । कभी-

कभी तो उनके झगड़ने से सारा पानी गदला हो जाता था और तब वे एक-दूसरी की शिकायत करती हुई किसान से कहती थीं—"इसे देखिये सरकार, इसने मिट्टी घचोलकर सारा पानी गदला कर दिया।" किसान जो खड़े-खड़े यह दुःखद दृश्य देखा करते, कहते—"ये गधे अछूत होते ही ऐसे हैं।" तब औरतें अपना-अपना घड़ा गदले पानी से ही भरकर चली जातीं। थोड़ी देर बाद जब बर्तन में मिट्टी नीचे बैठ जाती तो पानी साफ हो जाता और वे उसे पीने के काम में लातीं।

७

कुट्टि कौंड रोज की तरह अपने खेत के छप्पर में अपने बेटों के साथ सो रहा था। खेत में कोई फसल रखाने को नहीं थी; मगर चार बैल और चार-पांच बकरियाँ थीं जो बहुत दिनों से कम चारा मिलने के कारण हड्डियों का ढांचा भर रह गई थीं। रस्सी और चमड़े का डोल भी था। अकाल के दिनों में तो जो हाथ लग जाता है लोग वही चुरा लेते हैं। इसलिए रात के समय खेत के छप्पर में कोई न कोई सोता अवश्य था।

पूर्णिमा की रात थी। रीते खेत चांदनी में सफेद दूध-जैसे चमक रहे थे। अकाल की क्रूर वास्तविकता दिन के समय दिखाई पड़ती थी। रात में तो प्रत्येक वस्तु थकी और सोती रहती। अकाल तक सोता जान पड़ता था। इस भूतल पर मनुष्य को जो विपदाएं भुगतनी पड़ती हैं उन्हें देखते हुए यह कहा जा सकता है कि नींद में थोड़ी देर के लिए भी सारी बातों को भूल सकना मनुष्य के लिए एक वरदान है।

एकाएक एक कुत्ते के भूँकने ने आधी रात की निस्तब्धता भंग कर दी। दूसरे कुत्तों ने भी भूँकना शुरू किया। "कौन है? चोर! चोर!" कुट्टि कौंड का छोटा लड़का चिल्लाया और उठकर बैठ गया। उसे ऐसा दिखाई दिया जैसे कोई आदमी चमड़े का डोल लिए चुपके-चुपके पीले फूलोंवाले दरख्त की छाया में कुएं के किनारे-किनारे बचकर निकलना चाह रहा है।

"भइया उठो, उठो ; चोर हमारा चमड़े का डोल लिए भागा जा रहा है ।" शेन्गोड उठ बैठा और आंखें मलकर अपने चाचा और पड़ोस के दूसरे आदमियों को पुकारता हुआ चोर की तरफ लपका ।

उस समय तक कुत्ते जोर-जोर से भूँकने लगे थे और बड़ा शोर मच रहा था । चारों तरफ से लोग चिल्ला रहे थे—"खेत में चोर है ; पकड़ो, पकड़ो उसे !" आसपास के छप्परों में से उठकर लोग उधर की ओर भागे और आखिरकार चोर पकड़ लिया गया । वह एक औरत थी उसके हाथ में अपनी एक रस्सी और अपना ही एक मिट्टी का बर्तन था । उसने चोरी केवल पानी की की थी । उसने अपना बर्तन कुएं में डालकर पानी खींच लिया था । "एक अछूत औरत ने हमारे कुएं में अपना बर्तन डाल दिया," लोग चारों ओर से चिल्लाये और फिर 'मारो इसे," "ठोकरें लगाओ,, "मार डालो," "बर्तन फोड़ दो " की आवाजें आने लगीं । उसका बर्तन फोड़ दिया गया और उसे इतना पीटा गया और इतनी ठोकरें लगाई गईं कि वह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ी ।

"अरे, मर गई । अब मत मारो इसे," राकिया कौंड ने कहा ।

"गड़हा खोदकर कुतिया को यहीं दबा दो," दूसरा बोला ।

"और क्या ! हम एक बला से बच जायेंगे," तीसरे ने कहा ।

जब गड़हा खोदने और दबाने की बातें कही जाने लगीं तो लोग कुछ शान्त हुए । कोई किसीको कब तक पीट सकता है ? कभी तो उसका अंत होता ही है !

"देखो तो, यह है कौन ? कोई पहचानता है क्या ?" एक बूढ़े आदमी ने पूछा ।

"यह तो कंडी मारि की औरत है । अरे, अरे ! यह तो बड़ी अच्छी औरत थी, इसने ऐसा काम क्यों किया !" कुट्टि कौंड के बड़े लड़के ने कहा ।

"कल मैंने इसे पानी लिये बिना ही भगा दिया था, इसीलिए इसने ऐसा किया है," छोटा भाई बोला ।

"इस अकाल में भला कौन जाति और धर्म की परवा करता है! आजकल तो सारी बातें गड़बड़ और बेढंगी हो गई हैं; भले बुरे तक की कोई पहचान नहीं रह गई," एक लम्बे-से किसान ने जमीन पर पड़ी हुई औरत की ओर देखते हुए कहा।

"अरे, यह मरी नहीं है; मक्कारी साधे पड़ी है। इसे ठोकर लगाओ, फिर देखो कैसी उठकर घर भागती है," एक दूसरे आदमी ने कहा और पूवायी को दो ठोकरें जमाईं भी। औरों ने भी ऐसा ही किया। लेकिन वह थोड़ी-सी हिलकर ही रह गई, न उठी और न बोली।

"भाइयो, चलो इस कुतिया को उठा ले चलें और अछूतों के पुरवे में गाड़ आयें" राकिया कौंड ने कहा। वह कुछ-कुछ अनुभवी था, सेशन की अदालत में एक मुकदमा देख चुका था और जानता था कि हत्या करने पर क्या-क्या परेशानियां उठानी पड़ती हैं।

उसकी सलाह को मानकर तीन-चार आदमी पूवायी को उठाकर अछूतों के मोहल्ले की ओर ले चले।

८

अगर असहाय अनाथों की सारी बातें सच-सच लिखी जायं तो उनसे सबको लाभ हो। हम चाहे अनाथ हों या न हों, उनके अनुभवों से बहुत-सी बातें सीख सकते हैं और उनसे लाभ ही उठा सकते हैं। मुकुन्द के अनुभव भी ऐसे ही थे। जबसे उसकी मा ने उसे इस दुनिया में बिलकुल असहाय छोड़ा अगर तबसे अबतक की उसके इधर-उधर भटकने और जीवन से लड़ने की कथा लिखी जाय तो पूरी महाभारत तैयार हो जाय। उसने अपने अनुभव लिखे नहीं और उन्हें सुन-सुनाकर लिखने में कोई मजा नहीं।

अनाथ को चाहे और कोई लाभ हो या न हो, उन्हें अक्सर दूर-दूर तक सफर करने का लाभ अवश्य होता है। भूगोल का ज्ञान वे अपने निजी अनुभव से प्राप्त करते हैं। मुकुन्द सारे भारत में मारा-मारा फिरा, उसने बड़े-बड़े कष्ट उठाये और अंत में किसी-न-किसी तरह अपने लिए जीवन-

निर्वाह का एक अच्छा रास्ता निकाल ही लिया। उसने डॉक्टरी की परीक्षा पास की और एक-दो जगह डॉक्टर रहने के बाद वह अपने ही गाँव के अस्पताल में आ गया।

कमलापुर के अस्पताल में डॉक्टर मुकुन्द हिसाब जाँच रहे थे और सालाना लेखा तैयार करने के लिए अपने सामने की मेज पर पड़ी हुई माल-बही देख रहे थे। उसी समय चार आदमी एक बान की खाट लिए हुए आये और उसे जमीन पर रखकर अपनी आदत के मुताबिक गला फाड़कर चिल्लाये—"मालिक !"

डॉक्टर मुकुन्द ने कम्पाउण्डर से कहा—"अछूत मालूम होते हैं। मैं समझता हूँ कि कोई खून का मामला है; जाकर देखो तो।"

गाँव के स्कूल के हेडमास्टर उनके पास बैठे थे। वह रोज सवेरे घूमने निकलते, अस्पताल के डॉक्टर से आध घंटे गप्प लड़ाते और फिर चले जाते।

"यहाँ तो हर हफ्ते एक-न-एक खून होता रहता है और मुझे मुर्दे की चीर-फाड़ कर परीक्षा करनी पड़ती है। यह बड़ी बुरी जगह मालूम होती है। ऐसी हालत मैंने किसी भी दूसरे अस्पताल में नहीं देखी," मुकुन्द ने कहा।

"यहाँ सब अनपढ़ आदमी रहते हैं। इस जिले के लोग जरा-जरा-सी बात पर लड़ने लगते हैं। उनमें जब कभी कहा-सुनी होती है तो बढ़ते-बढ़ते अक्सर मार-पीट और खून तक की नौबत आ जाती है। शिक्षा के फैलने से ये बातें ठीक हो जायंगी," हेडमास्टर ने कहा।

इतने में कम्पाउण्डर ने लौटकर कहा—"मुर्दा नहीं है, साहब! एक लड़की है जिसे लोगों ने बुरी तरह पीटा है और उसे ही खाट पर लादकर लाये हैं।"

"उसकी क्या उम्र है?" हेडमास्टर ने पूछा।

मुकुन्द ने इस सवाल पर ध्यान न देते हुए कहा—"उसे अन्दर लाने को कहो और मेज पर लिटाओ।"

"यह कोई प्रेम का मामला मालूम होता है," हेडमास्टर बोले और जाने के लिए उठकर खड़े हो गये।

"बहुत मुमकिन है, चलिए देखें," मुकुन्द ने कहा। उठकर वह मेज़ के पास चले गये और जो आदमी उस औरत को लाये थे उन्होंने उसे धीरे-से खाट पर से उठाकर मेज पर लिटा दिया।

मुकुन्द ने उसके घावों को देखकर कहा–"लोगों ने इसे बहुत बुरी तरह पीटा है।" ध्यानपूर्वक परीक्षा करने के बाद पता चला कि उसकी बांहों की दो हड्डियां टूट गई हैं और बाकी चोटें साधारण और ऊपरी हैं।

उसे लानेवाले लोगों में एक मारि भी था। उसने पूछा—"यह बच जायगी न, मालिक ?"

"क्या तुम्हारी कोई रिश्तेदार है ?"

"मेरी औरत है, सरकार ! बच जायगी न ?" उसकी आंखों में आंसू भर रहे थे।

"हां, हां, फिक्र न करो, अच्छी हो जायगी। लेकिन इसे यहां एक महीना रखना पड़ेगा।"

यह सुनकर मारि रोने लगा—"हाय, मैं खाने को कहाँ से लाऊँगा ?"

"बेवकूफ कहीं के ! हम खाना भी देंगे और इसकी देखभाल भी करेंगे," मुकुन्द ने कहा।

इस पर एक दूसरे आदमी ने कहा—"तुम्हें नहीं पता मारि, यह हमारे पुराने मालिक के लड़के हैं, वही मालिक जो नीम के पेड़वाले मकान में रहते थे। यह जरूर हमारी रक्षा करेंगे और इसे अच्छा कर देंगे।"

तीसरा बोला—"अरे यह इसे तो रोटी देंगे और चंगा कर ही देंगे, साथ ही साथ तेरा भी पेट पालेंगे। रोता क्यों है ?"

"हमारे मालिक हैं, हमारी रक्षा करेंगे," सबने मिलकर कहा।

"हां, हां," मुकुन्द ने घायल औरत के टूटे हुए हाथों की परीक्षा जारी रखते हुए कहा।

"अच्छा, मैं तो चला डॉक्टर !" हेडमास्टर ने नमस्ते करते हुए कहा।

"अच्छा, नमस्कार" मुकुन्द ने हेडमास्टर से कहा और मारि की ओर घूमते हुए पूछा—"किस बात पर झगड़ा हुआ था ? इसे इतनी चोट कैसे आई ? मुझे बताओ तो, भाई !"

जो कुछ हुआ था उन्होंने कह सुनाया, लेकिन सबके एक साथ बोलने के कारण मुकुन्द सारी बातें ठीक से समझ न सका ।

६

"मुत्तु पिल्लै, क्या तुमने यहां कुछ फूल रखे हैं ? डॉक्टर मुकुन्द ने पूछा ।

"नहीं साहब, फूल कहां से आते, सारे पौदे तो मुरझा गये," कम्पा-उण्डर बोला ।

"अजीब बात है," मुकुन्द ने मन में कहा, "जब मैं इस औरत के पास जाता हूं तो मुझे चमेली के फूलों की महक आती है, बिलकुल वैसे ही फूलों की महक जिन्हें इकट्ठा करने का मा को इतना शौक था ।" इस तरह मरी हुई मा का ध्यान करते हुए मुकुन्द ने पूवायी के घावों पर धीरे-धीरे दवा लगाई । फिर उन्होंने टूटी हुई हड्डियों पर तख्तियां बैठाई और पट्टी बांधी ।

"अब कैसा जी है ?" उन्होंने पूवायी से पूछा ।

"अब तो दर्द कुछ कम है, मालिक ! भगवान् आपको बढ़ती दे और हमेशा खुश रखे," पूवायी ने आह भरते हुए कहा ।

इन शब्दों के मुख से निकलते समय उसकी दृष्टि और मुसकराहट में उस मा का-सा भाव था जो अपने बच्चेको प्रेमपूर्वक खेलाते समय वात्सल्य-सुख का अमृत पिया करती है । मुकुन्द को अपनी मा की और भी अधिक याद आने लगी ।

"पता नहीं क्यों, जब मैं इस इस औरत के पास जाता हूँ तो मुझे अपनी मा की याद आये बिना नहीं रहती," मन में यह सोचते हुए डॉक्टर मुकुन्द हाथ धोने चले गये । वह जहां भी जाते उन्हें ऐसा लगता जैसे चमेली की सुगन्ध बस रही है । पति के मरने के बाद उनकी मा फूल पहन

तो सकती नहीं थीं, लेकिन वह प्रतिदिन कहीं-न-कहीं से फूल लाकर देवी को अवश्य चढ़ाती थीं ! उन फूलों की सुगन्ध से सारा घर भर जाता था। वही सुगन्ध अब मुकुन्द को एक बार फिर आई।

यह अक्सर होता है कि कभी एकाएक और अनायास ही बचपन की सुनी हुई किसी गीत की धुन या किसी फूल की सुगन्ध याद आ जाती है और उसके साथ-ही-साथ उस समय की किसी घटना का भी स्मरण हो आता है। कभी-कभी तो ऐसा लगता है जैसे हमने इस गीत की धुन कभी सुनी है या इस फूल की सुगन्ध कभी सूंघी है, लेकिन यह नहीं याद आता कि कब और कैसे ? कुछ लोग इसे पिछले जन्म की याद बताते हैं। उस दिन मुकुन्द के मस्तिष्क में भी उन आनन्दमय दिनों की याद नदी की तरह उमड़ आई, जो उन्होंने वेलमपट्टी में अपनी मा के साथ बिताये थे।

"कितने आश्चर्य की बात है ! यह सुगन्ध तो मेरे दिमाग में से निकलती ही नहीं। कहते हैं कि मरे हुए आदमी फिर से जन्म लेते हैं। शायद मेरी मा ने इस स्त्री के रूप में फिर से जन्म लिया है। कौन कह सकता है कि यह बात सत्य नहीं हो सकती ?" यह सोचकर डॉक्टर मुकुन्द एक बार फिर पूवायी की खाट के पास गये। पूवायी ने आँखें खोलकर उनकी ओर देखा। उसकी दृष्टि ने उन्हें फिर अपनी मा की याद दिला दी और उन्हें ऐसा मालूम हुआ जैसे चमेली की महक का एक झोंका-सा आ गया हो।

१०

मुकुन्द बिस्तर पर पड़ते ही सो जाया करते थे। यह युक्ति उन्होंने एक योगी से उत्तर में सीखी थी जहाँ वह कभी घूमते-घामते पहुँच गये थे। लेटने के बाद करीब-करीब सभी लोग इधर-उधर की बातें सोचते और जागते रहते हैं। लेकिन मुकुन्द ने अपने को ऐसा साध लिया था कि वह उस तरह के विचारों को हटाकर अपने चित्त को वश में कर लेते थे और लेटते ही सो जाते थे। लेकिन आज वह तरकीब काम न दे

सकी। उन्होंने कोशिश बहुत की, लेकिन नींद न आई। थोड़ी देर तक बिस्तर पर करवटें बदलते रहने के बाद वह उठकर बैठकर गये और लैंप जलाकर एक किताब पढ़ने लगे। वह भगवद्-गीता थी जो उन्हें एक मित्र ने दी थी। उनकी आँखें दूसरे अध्याय के २२वें श्लोक पर ठहर गई। उन्हें अपनी मा की याद आई और वह सोचने लगे—"यह तो ठीक है, लेकिन पहला शरीर त्यागने के बाद जीवात्मा किस तरह नये शरीर में प्रवेश करेगी? क्या वह जिस शरीर में चाहे उसीमें प्रवेश कर सकता है? नहीं, यह तो सम्भव नहीं; यह तो पिछले जन्म में किये गये अच्छे-बुरे कर्मों पर निर्भर है। हम अक्सर किसी मनुष्य या पशु को कष्ट में देखते हैं। हो सकता है कि उस शरीर में हमारी मा, बाप, भाई या किसी मित्र की आत्मा हो जो हमें दुःख के सागर में छोड़कर चल बसा है। इसलिए हमें चाहिए कि हम प्रत्येक दुःखी मनुष्य और पशु के प्रति दया का भाव रखें और उसे सहारा या आराम देने की चेष्टा करें। हम अक्सर लोगों को सुखी और समृद्धिशाली देखकर उनसे ईर्ष्या करते हैं। कितनी मूर्खता की बात है यह! कौन जाने कि हमारे किसी प्यारे ने, जिसकी अकाल मृत्यु हुई हो, उस शरीर में फिर से जन्म लिया हो और अपने पिछले कर्मों के फलस्वरूप वह अब अधिकार और ऐश्वर्य का भोग कर रहा हो! कैसी मूढ़ता है ईर्ष्या करना!"

मुकुन्द इस श्लोक को पहले भी कई बार पढ़ चुके थे। हम जो कविता या गीत पढ़ चुके होते हैं उसकी पंक्तियाँ कभी-कभी अचानक शीशे की तरह साफ हो जाती हैं और उनमें हमें एक ऐसा अर्थ दिखाई दे जाता है जो पहले कभी नहीं दिखाई दिया था। गीता की इन पंक्तियों में भी उस दिन मुकुन्द को कुछ नई और ताजी बात जान पड़ी।

मुकुन्द ने सोचा—"शरीर बीमारी या आयु के कारण नष्ट हो, जाता है, परन्तु आत्मा की न कोई आयु है न उसे कोई बीमारी होती है; इसलिए वह कभी मरती नहीं। मेरी मा का शरीर तो नष्ट हो चुका है, परन्तु उसकी आत्मा ने निश्चय ही किसी दूसरे शरीर में जन्म ले लिया होगा।"

इसी भांति वह सोचते और पढ़ते रहे।

११

"मुकुन्द, मेरे बेटे! उठो, आकर खाना खा लो," मा ने रसोई में से पुकारा। निस्संदेह, यह उसीकी आवाज है। लेकिन कितने आश्चर्य की बात है! मैं तो बराबर यह सोचता रहा हूँ कि मा मर चुकी। अरे, यह तो उसीकी आवाज है यह तो यही है! मेरा जगह-जगह भटकते फिरना और कष्ट उठाना केवल सपना था। मेरी मा मरी नहीं है, वह तो जिंदा है। अब स्कूल जाने का समय है। अब मैं कभी गंदा पानी नहीं छूऊँगा और अगर मुझे हैजा हो ही गया तो मैं मा को अपने पास नहीं आने दूँगा। मैं उसे छूत नहीं लगने दूँगा। ओह, कैसे हर्ष की बात है यह! मेरी मा जिंदा और भली-चंगी है! मा, मेरे पास आओ।

"वह हाथ में घड़ा लिए कहीं जल्दी-जल्दी जा रही है और ऐसा मालूम होता है कि मुझे अपने पीछे-पीछे आने का संकेत कर रही है। ठहरो मा, ठहरो! तुम दौड़ क्यों रही हो? अरे, वह तो अछूतों के मोहल्ले में घुस रही है। अछूतों ने उसे घेर लिया है। वे उसे पीट रहे हैं और कह रहे हैं—"तू यहाँ क्यों आई? एक ब्राह्मणी का यहाँ क्या काम? वे उसपर जंगली जानवरों की तरह टूटे पड़ रहे हैं; लकड़ी से मार-मारकर उसकी हड्डियाँ तोड़ रहे हैं। वे उसे खाट पर डालकर अस्पताल ले आये हैं। हाय, बेचारी मा! उसे हैजा हो गया है और पेट में बड़े जोर का दर्द है। अरे, लोग तो उसे लिये जा रहे हैं और कह रहे हैं "मर गई।" अफसोस, मैं उठकर उन्हें रोक भी नहीं सकता! क्या वह मर गई? क्या वह चली गई? अब मैं क्या करूँ?"

सपने से चौंककर मुकुन्द जाग गये। वह कुरसी पर बैठे-बैठे ही सो गये थे और भगवद्गीता उनके हाथों से छूटकर पृथ्वी पर गिर गई थी। नींद टूटने पर उन्हें ध्यान आया कि मैं इसी कमलापुर के अस्पताल में हूँ और शेष सब कुछ सपना था। वह कुरसी से उठकर बिस्तर पर आ लेटे और जल्दी ही गहरी नींद में सो गये।

१२

मुकुन्द पूवायी के घावों की मरहमपट्टी बड़े प्रेम और सावधानी के साथ करते थे। घावों के भरने और हड्डियों के जुड़ने में एक महीने से भी अधिक लग गया।

एक दिन उन्होंने मारि से कहा—"भाई, मैं तुमसे एक बात कहना चाहता हूँ, मानोगे ?"

"कहिए, मालिक !"

"जब मैं छोटा था तब तुमने मुझे बंदरिया के हाथों से मरने से बचाया था और बदले में मेरी मा ने तुम्हें पीटा था और घर से बाहर निकाल दिया था। ठीक है न ?"

"इन बातों को एक जमाना बीत गया। मालिक, आपने मेरी औरत की जान बचाकर मेरे जीवन में प्रकाश भर दिया है।"

"मारि, तुम जानते हो कि मरे हुए आदमी अपने पिछले जन्म के अच्छे या बुरे कर्मों का फल भोगने के लिए फिर से जन्म लेते हैं।"

"हाँ, मालिक, कहते तो ऐसा ही हैं। भगवान् सबको देखता है और किसीको दण्ड दिये बिना नहीं छोड़ता। उससे बड़ा कोई नहीं।"

"मेरी मा ने तुम्हारे साथ बड़ी बुराई की थी। मुझे विश्वास है कि उसने फिर से जन्म लिया है और वह अपने पापों के कारण कष्ट उठा रही है। मैं उसके लिए प्रायश्चित्त करना चाहता हूं," मुकुन्द ने कहा।

"मैं आपकी बातें समझ नहीं पाया, मालिक।"

"तुम लोग आजकल जबरदस्त अकाल के चंगुल में हो और बड़ी तकलीफें उठा रहे हो। तुम अपनी औरत के साथ मेरे घर में आकर रहो। मेरे कोई संबंधी नहीं है। तुम और पूवायी मेरे घर में मेरे भाई-बहिन की तरह रह सकते हो।"

मारि सचमुच कुछ नहीं समझ सका और बोला—"यह कैसे हो सकता है ? यह बिलकुल नामुमकिन है, साहब।"

मुकुन्द ने समझाया—"मारि, तुम लोगों को ऐसा दुःखी जीवन

बिताने देना पाप है। मैं इस बात के लिए भी प्रायश्चित्त करना चाहता हूँ। तुम मना मत करो।"

"ओह, मालिक!" आश्चर्य से भरे हुए अछूतों ने यंत्र की भांति कहा।

"मैंने तुमसे कहा था कि मृत्यु के बाद फिर जन्म होता है। मैं नहीं जानता क्यों, लेकिन जब से मैंने तुम्हारी औरत को देखा है मुझे ऐसा लगता है कि वह मेरी मा है।"

"मालिक, आप क्या कह रहे हैं, मेरी बिलकुल समझ में नहीं आ रहा है।"

"कोई बात नहीं, भाई। तुम्हारा समझ में नहीं आता न सही। मैं जो कह रहा हूँ उसे मना मत करो। तुम्हें मेरे साथ रहना पड़ेगा।"

"मेरी मा नहीं मानेगी।"

"उसे मैं राजी कर लूँगा।"

"अगर वह मान जाय तो ठीक है।"

मुकुन्द ने कह-सुनकर कुप्पायी को राजी कर लिया। उस दिन से वह वहाँ के लोगों की नजरों में अछूत बन गये, परन्तु उनके हृदय को शान्ति मिल गई।

: ५ :

स्पर्धा

किसी समय सवेश की कॉफी का सारे देश में नाम था। अंगरेज तक उसे पसंद करते थे ; फिर हम लोगों का तो कहना ही क्या ! मद्रासी समाज के ऊंचे घराने की स्त्रियाँ कहती थीं कि बीज चाहे कितने ही अच्छे क्यों न हों और उन्हें चाहे कितनी ही सावधानी से क्यों न भूना जाय, घर पर तैयार की हुई कॉफी सवेश की टीनबंद कॉफी की बराबरी नहीं कर सकती।

सवेश ने काफी का कारबार सन् १९२५ में आरम्भ किया । दो वर्ष तक उसके जीवन में शायद ही ऐसी कोई घड़ी आई हो जो सुख और चैन से कटी हो । लेकिन सन् १९२८ में सुब्बु कुट्टि उसके यहां क्लर्क होकर आया और तबसे सवेश का भाग्य-सूर्य दिन पर दिन ऊंचा उठता गया। छः महीने के भीतर ही भीतर उसका व्यापार तिगुना हो गया और बाद में भी इसी तरह तेजी से बढ़ता रहा। स्वयं सवेश को इस पर आश्चर्य होता था । वह समझता था कि सुब्बु कुट्टि भाग्यवान् है और इसलिए उसके साथ बड़े स्नेह का बरताव करता था। उसके बिना कहे ही वह उसे हर तरह की सहायता देता था। उसने उसकी बहिन का ब्याह एक अच्छे और धनी परिवार में करा दिया था और सारा खर्चा भी अपने पास से किया था । वह सुब्बु कुट्टि को अपना क्लर्क ही नहीं बल्कि साझीदार भी मानता था।

सुब्बु कुट्टि की मा ने उसे कॉफी का एक ऐसा गुप्त ढंग सिखा दिया

था कि उससे कॉफी में एक विशेष सुगन्ध आ जाती थी। जब सुब्बु कुट्टि सवेश की कम्पनी में क्लर्क हुआ तो एक दिन सवेश को उसके घर बनी हुई कॉफी का एक प्याला पीने का मौक़ा पड़ा। "इतनी अच्छी कॉफी मैंने कभी नहीं पी," उसने कहा और सुब्बु कुट्टि की मा से ढेर-सारे सवाल पूछ डाले। "क्या इसके पीसने का कोई खास तरीका है? या, इसके बीज में कोई विशेषता है? या, इसे साफ करने की कोई खूबी है?" आदि, आदि। सुब्बु कुट्टि की मा ने कुछ और न बताकर सिर्फ इतना कहा—"इसका रहस्य सुब्बु कुट्टि से पूछिए।"

इस पर सवेश बोला—"कुछ भी सही; क्या यह बात हमारी कम्पनी में कॉफी पीसते समय नहीं की जा सकती?"

"हां, हां, क्यों नहीं?" सुब्बु कुट्टि को मा ने उत्तर दिया।

उसके बाद जब बीज पीसे जाते तो सवेश कुट्टि को कारखाने भेज देता। वहां वह जो कुछ करता सबसे छिपाकर करता, यहां तक कि सवेश भी भेद न जान पाया। उसे सिर्फ इतना ही पता था कि सुब्बु कुट्टि अपने घर से टीन में कोई चीज लाता है और पीसते समय बीजों में मिला देता है। यह बात निजी तौर पर पहले ही तय होली थी कि इस रहस्य के बारे में सवेश उससे कुछ पूछेगा नहीं।

कारबार खूब बढ़ा और बड़ा लाभ हुआ। सवेश मद्रास के व्यापारी राजकुमारों में गिना जाने लगा। वह बहुत-से व्यापार-मंडलों और क्लबों का मेम्बर भी चुन लिया गया।

दो-चार बार सवेश ने सुब्बु कुट्टि से जानने की चेष्टा की, लेकिन उसकी मा ने उनसे शपथ ले ली थी कि वह किसीको, यहाँ तक कि सवेश को भी, अपना भेद नहीं बतायेगा। सवेश ने भी बाद में ज़िद नहीं की।

सन् १६३६ में सवेश को चौबीस हजार रुपये की बचत हुई। सुब्बु कुट्टि को ढाई सौ रुपये तनख्वाह मिलती थी। वह हर रोज सवेश की मोटर में घर जाया करता था। इससे उसके वे मित्र, जो पहले

बड़ा स्नेह दिखाते थे, अब ईर्ष्या करने लगे। उन्हें उसमें ऐसी बुराइयाँ दिखाई देने लगीं जैसी पहले कभी नहीं दिखाई दी थीं और वे उसकी सवेश से शत्रुता कराने की चेष्टा करने लगे। लेकिन वे सफल नहीं हो सके; उलटा उन दोनों का एक-दूसरे के प्रति विश्वास और स्नेह बढ़ता गया ?

इसी प्रकार दो वर्ष बीत गये। एक दिन सवेश लकड़ी के एक व्यापारी से बातें कर रहा था।

"तुम्हारा कारबार अच्छा चल रहा है; लेकिन सुना है कि तुम्हारा मैनेजर सुब्बु कुट्टि ऐयर कॉफी का अपना अलग काम शुरू करने जा रहा है," लकड़ी के व्यापारी ने कहा।

"ऐसी तो कोई बात नहीं है। तुमसे किसने कहा ?" सवेश ने पूछा।

"मुझे पता है; इसके बारे में वह खुद कुछ आदमियों से बातें कर रहा था," लकड़ी का व्यापारी जयराम नाडार बोला।

"मुझे इस बात का यकीन है कि तुम्हें गलत खबर मिली है। अगर ऐसी कोई बात होती तो वह मुझे जरूर बताता।

"मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि यह कोरी अफवाह नहीं है। तुम खुद सब कुछ सुन लोगे।"

कुछ ही दिनों बाद एक दूसरे मित्र ने सवेश से कहा—"सुनते हैं कि सुब्बु कुट्टि विश्वानाथ साहूकार से कॉफी पीसनेवाली मशीनों की बाबत पूछ-ताछ कर रहा है।" इससे सवेश की शंका पक्की हो गई। किन्तु उसने सोचा—"व्यापार की उन्नति और मेरी अपनी मर्यादा और प्रतिष्ठा सब कुछ सुब्बु कुट्टि के हाथ में है। कॉफी के चूर्ण का भेद भी वही जानता है। इस विषय में मैं कर क्या सकता हूँ ?" उसी समय से उसके मन में सुब्बु कुट्टि के प्रति घृणा और क्रोध का भाव उत्पन्न हो गया और वह भाव दिन-पर-दिन बढ़ता गया। उसे ऐसा मालूम होने लगा कि मेरे सब नौकर-चाकर सुब्बु कुट्टि को ही अपना मालिक समझते हैं और

मेरा ठीक से अदब नहीं करते। इस तरह मालिक को अपने क्लर्क से ईर्ष्या होने लगी।

"देखो, सुब्बु कुट्टि ! अगर कारीगरों को कुछ कहना हुआ करे तो उन्हें मुझसे कहना चाहिए, तुमसे नहीं। ऐसे मामलों में मैं तुम्हारी सिफारिशें नहीं मान सकता।" यह बात सवेश ने सुब्बु कुट्टि से उस समय कही, जब वह उसके पास एक मजदूर की शिकायत के बारे में बातचीत करने आया।

इस तरह की कई बातें कई बार हुई।

एक दिन सुब्बु कुट्टि ने सवेश से कहा—"मैं एक महीने की छुट्टी लेने को सोच रहा हूँ। अप्पुस्वामी ऐयर ने मुझे अपने साथ तिरुवारूर में रहने के लिए बुलाया है। मेहरबानी करके छुट्टी दे दीजिए।"

"छुट्टी नहीं मिल सकती," सवेश ने कहा।

सुब्बु कुट्टि की समझ में न आया कि जो व्यक्ति मुझपर अबतक इतना दयालु रहा है वह अकारण ही मुझसे इतनी कठोरता और शुष्कता का व्यवहार कैसे करने लगा। यह सोचकर कि यह किसी बुरे ग्रह के कारण हो रहा है यह अपना काम तो पहले की ही भांति अच्छी तरह करता रहा, लेकिन अब उसके हृदय में शांति नहीं थी। धीरे-धीरे उसका स्वास्थ्य गिरने लगा; दवाओं से कोई लाभ न हुआ और डॉक्टरों ने उसे दो महीने तक आराम करने की सलाह दी। लेकिन सवेश ने साफ-साफ कह दिया कि जबतक कॉफी का पाउडर बनाने का भेद नहीं बता दिया जायगा तबतक छुट्टी नहीं मिलेगी।

"नौकरी छोड़ दो, बेटा। अबतक हमारे दिन अच्छे थे। जब वे दिन फिर वापस आयेंगे तब हम अपना एक छोटा-सा व्यापार अलग चला लेंगे। भगवान् जो चाहता है वही होता।" सुब्बु कुट्टि की मा ने अपने बेटे से कहा और उसे सवेश से भेद न खोलने की सलाह दी। सवेश ने सुब्बु कुट्टि का इस्तीफा मंजूर कर लिया और उसे नौकरी से हटा दिया।

इस घटनाचक्र के कारण कुछ समय तक सवेश के कारबार को हानि

नहीं पहुँची। टीन पर नटराज की सुन्दर मूर्ति, सब तरह की कॉफी के प्राकृतिक गुण और सवेश की पुरानी ख्याति के कारण व्यापार चलता रहा। लेकिन फिर समय ने पलटा खाया। किसीने कहा—"आज की कॉफी उतनी अच्छी नहीं।"

"ऐसा मालूम होता है कि डब्बा खराब था या कॉफी का टीन खुला रह गया था, इसीलिए उसकी सुगन्ध उड़ गई है," घर के लोगों ने कहा।

"सुब्बु यह काम पुराने मालिक के विरुद्ध प्रचार करने के लिए कर रहा है। एक क्लर्क के हटा दिये जाने से कॉफी में खराबी नहीं आ सकती," सवेश के मित्र बोले।

लेकिन दूसरे ग्राहक यह कहकर कि घर की बनी कॉफी का मुकाबला कोई नहीं कर सकता घर पर भूनने के लिए कॉफी के बीज खरीदने लगे। संक्षेप यह है कि सुब्बु कुट्टि के हटाने जाने के पाँच-छः महीने के भीतर-ही-भीतर सवेश का कारबार घटने लगा।

सुब्बु कुट्टि के मित्र विश्वनाथ साहुकार ने उससे अपने साथ साझे में काम करने को कहा। "सारा रुपया मैं लगाऊँगा और मुनाफे का आधा तुम ले लेना," वह बोला। पहले तो सुब्बु कुट्टि दो एक महीने तक इस प्रतीक्षा में रहा कि शायद सवेश मुझे फिर बुला ले, लेकिन बाद में उसने विश्वनाथ की योजना मान ली और काम शुरू कर दिया।

सुब्बु कुट्टि में अब फिर से उत्साह आ गया। उससे सिर पर सवेश को मजा चखाने का भूत सवार हुआ। उसने अपनी तैयारी की हुई कॉफी का नाम नटेश रखा, जो सवेश से मिलता-जुलता था। जो वस्तु सवेश की कॉफी में छिपाकर मिलाई जाती थी उसकी मात्रा डेढ़ गुनी कर दी गई। लेबिल पर छपे हुए नटराज के चित्र में टांगों का ढंग उलट दिया गया। नई कॉफी बाजार में आई। मेहनती एजेन्ट नियुक्त किये गये और बिक्री एकदम बढ़ने लगी। विश्वनाथ ने खूब रुपया खर्च करके इश्तहारबाज़ी की। उसने सुब्बु कुट्टि की उमंग को खूब

बढ़ावा दिया और सवेश के प्रति उसके क्रोध को हर प्रकार के उपायों से जाग्रत रखा।

सवेश ने हाईकोर्ट में मुकदमा दायर कर दिया कि सुब्बु कुट्टि ने अपनी कॉफी के टीन का आकार, और लेबिल मेरी कॉफी के टीन से मिलता-जुलता रखा है, जिससे ग्राहकों को धोखा हो जाता है और मेरे व्यापार में घाटा हो रहा है। मुकदमा एक साल तक चलता रहा और अन्त में सवेश की जीत हुई।

जिस दिन अदालत में फैसला सुनाया गया सवेश को तेज़ बुखार था। फैसला सुनकर वह हर्ष से फूला न समाया और खाट से उठकर, शोफर के न होने के कारण, स्वयं मोटर ले अपने वकील के घर जा पहुँचा। उसने हुक्म दिया कि सुब्बु कुट्टि के कारखाने के माल को जब्त करने और बेचने का इंतजाम फौरन किया जाय। चिदम्बर के बड़े मन्दिर में उसने विशेष रूप से प्रसाद चढ़ाने का भी प्रबंध किया।

सुब्बु कुट्टि की मा के दुःख का पारावार न रहा ; उसे ऐसा लगा मानो प्रलय हो रहा है। "भगवान्, क्या तुम सवेश को दण्ड नहीं दोगे ? उसने मेरे बेटे के साथ जो अन्याय किया है उसका फल क्या उसे नहीं मिलेगा ?" इस प्रकार उसने अपने देवता से प्रार्थना की और मानो उसकी प्रार्थना के में फैसले के आठवें दिन डॉक्टरों की आशाओं के विपरीत सवेश हृदय की गति बन्द हो जाने के कारण इस संसार से चल बसा।

सवेश की मृत्यु के बाद हाईकोर्ट की डिग्री बेकार हो गई। विश्वनाथ के वकीलों ने उसे कानून समझाते हुए सलाह दी कि तुम्हारी कम्पनी अब बिना किसी रुकावट के अपनी कॉफी बेच सकती है। उन्होंने यह भी कहा कि यदि नटराज के चित्र के बदले काले नाग पर नाचते हुए कृष्ण की तस्वीर बना दी जाय तो किसी भी आपत्ति की सम्भावना नहीं रह जायगी।

सवेश का भूत हवा में विरोध कर रहा था—"हाय, हाय, मेरे अनुकूल डिग्री मिल जाने का कुछ भी लाभ नहीं हुआ।" घृणा और बुरी नीयत

का हठ ऐसा ही होता है ।

"दुःख करने से कोई लाभ नहीं," एक साधु की आत्मा ने कहा और यह गीत गाया :—

उसने अपनी स्त्री से कहा—"मैं बढ़िया भोजन चाहता हूं।"
स्त्री ने परोसा और उसने बड़े स्वाद से खाया।
अपनी प्रेमिका के संग वह सोने चला गया।
'मेरी बाईं ओर कुछ दर्द है,, उसने कहा।
यह बात कहकर वह खाट पर लेट गया।
परन्तु वह वहां सदा के लिए लेटा रहा, क्योंकि वह मर गया था, मर गया था।"

वकील की सलाह ने विश्वनाथ और कुट्टि में फिर से स्फूर्ति भर दी। उन्हें लगा मानो उन्होंने फिर से संसार पर विजय प्राप्त कर ली है, परन्तु दुर्भाग्यवश कॉफी के चूर्ण का भेद खुल चुका था।

सारे नगर में चर्चा होने लगी—"इस कॉफी के चूर्ण में रीठे का मेल होता है।" किसी-किसीने कहा— "कॉफी के टीन में एक चौथाई हिस्सा रीठे का चूरा होता है।" और तब सवेश नटेश दोनों की कॉफियों से लोगों को अरुचि हो गई। जो लोग इन दोनों में से एक भी कॉफी पीते थे उन्हें अपने स्वास्थ्य में गड़बड़ी मालूम होने लगी। किसीको कब्ज हो गया, किसीको दस्त आने लगे और किसी-किसीको तो उसे पीने के बाद उलटी तक होने लगी। फल यह हुआ कि सभी बड़े आदमी अपनी कॉफी आप भूनने लगे। सुब्बु कुट्टि सचमुच अपनी कॉफी में रीठे का चूर्ण एक टीन में एक चाय के चम्मच के हिसाब से मिलाया करता था। वे ही लोग, जिन्हें पहले उसकी कॉफी को पीने में मजा आता था, अब उसे असह्य रूप से बुरा समझने लगे।

: ६ :

भविष्यवाणी

श्री स्वामीनाथ ऐयर टोएडामएडल हाईस्कूल में बारह साल हेडमास्टर थे। उनका और उनकी पत्नी अखिला का दाम्पत्य-जीवन बड़ा सुखपूर्ण था। लेकिन अखिला को एक रंज था। उसके कोई बच्चा नहीं हुआ था।

"तो क्या बात है, अखिला! स्कूल में दो सौ लड़के हैं। वे सब भी तो मेरे बच्चे हैं," हेडमास्टर कहते।

"तुम्हारे लिए कोई बात न हो। तुम उन्हें अपने बच्चे समझ सकते हो, लेकिन मैं तो घर में सारे दिन अकेली पड़ी रहती हूँ। एक स्त्री के लिए बिना अपने बच्चे के जीवन बिताना बड़ा मुश्किल होता है," उसकी पत्नी उत्तर देती।

समय के साथ-साथ अपनी पत्नी की पुत्र-लालसा को बढ़ते देखकर स्वामीनाथ ऐयर ने तीर्थयात्रा करने का निश्चय किया। उन्होंने दो महीने की छुट्टी ले ली और दक्षिण में पलनि और रामेश्वर-जैसे पवित्र स्थानों की यात्रा करते वह मैसूर पहुँचे। वहाँ उन्होंने पवित्र मन से एक-दो अश्वत्थ (पीपल) वृक्षों की परिक्रमा की, जो बांझ स्त्रियों को पुत्र का सौभाग्य प्रदान करने के लिए प्रसिद्ध थे। इसके बाद वह घर लौट आये और, जैसी कि अखिला की जन्मपत्री बनानेवाले एक तेलगू ज्योतिषी ने भविष्यवाणी की थी, वह समयानुसार गर्भवती हो गई।

"ज्योतिष गलत नहीं हो सकती," स्वामीनाथ ऐयर ने हर्ष से फूलकर कहा। अखिला ने कहा कि यह अश्वत्थ वृक्षों की भक्तिपूर्वक पूजा करने का फल है। जो कुछ भी हो, उन्होंने निश्चय किया कि बच्चा होने के बाद हम एक बार फिर पलनि चलेंगे। उन्होंने अपना समय यह अनुमान करने में भी लगाया कि वह शुभ अवसर कब आगा।

स्वामीनाथ ऐयर के कुछ मित्रों ने उन्हें सलाह दी कि चूँकि शादी के बहुत साल बाद गर्भ रहा है इसलिए आपकी पत्नी की विशेष रूप से देख-भाल होने चाहिए। उन्होंने अपनी पत्नी को ऐगमोर जच्चा-अस्पताल में भरती कराने की भी सलाह दी। अखिला की मा बहुत पहले मर चुकी थीं और औरतों में सिर्फ उसकी बुआ बची थी। उम्मीद थी कि वह अखिला की देखभाल करने के लिए आ जायंगी। लेकिन किसी कारण से वह न आ सकीं। तब यही तय हुआ कि घर पर बच्चा कराने के बजाय अखिला को अस्पताल में भरती करा दिया जाय।

प्रसव में कोई कष्ट नहीं हुआ। स्वामीनाथ की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उन्होंने अस्पताल के डॉक्टर और नर्सों को बड़े-बड़े उपहार देने का विचार किया।

बच्चा रात को नौ बजे हुआ था। नियमानुसार नर्स उसे फौरन नहला कर दूसरे दफ्तर में तोलने के लिए ले गई। उस दिन लगभग एक ही समय तीन बच्चे पैदा हुए थे। नर्सें इतने उत्साह और उतावली में थीं मानो वे ही उन बच्चों की मा हों।

अस्पताल के नियमानुसार जो कुछ हुआ करता है वही इन तीनों बच्चों के साथ भी हुआ और इस डर से कि वे मिल न जायें उनके कुल्हों पर नम्बर के कार्ड बांध दिये गये।

इन तीनों बच्चों में से एक का रंग सांवला था, लेकिन दो गोरे थे और उसका रंग और वजन करीब-करीब एक-सा था।

अखिला के बच्चे को जो नर्स लाई थी वह उसे दूसरी नर्सों क सौंपकर चली गई। वैसे तो प्रत्येक बच्चे के आते ही उस पर उसके नम्बर

का कार्ड लगा दिया जाता था, लेकिन उस वक्त नर्सें गप्प लड़ा रही थीं इसलिए वे कार्ड लगाना भूल गईं और बाद में उनकी समझ में न आया कि अखिला का बच्चा कौन-सा है। सांवले बच्चे का तो कोई सवाल था ही नहीं, दूसरे दोनों बच्चों पर उन्होंने अपनी समझ के अनुसार कार्ड बांध दिये। अखिला का बच्चा कुछ ज्यादा गोरा था। आठवें कार्ड में जो मुसलमान औरत थी उसका रंग सांवला था इसलिए उन्होंने सोचा कि सांवला बच्चा उसीका होगा। जो बच्चा कुछ ज्यादा गोरा था उसे उन्होंने अखिला के पास जाकर लिटा दिया। इससे कुछ गड़बड़ी नहीं हुई।

"तुम्हारा बच्चा बड़ा सुन्दर है," एक फ्रांसीसी नर्स ने कहा। "इसका वजन सात पौंड है। क्या तुम्हारा पहला ही बच्चा है?"

"जी हाँ," स्वामीनाथ ने जवाब दिया। बच्चे की मा खाट पर थकी हुई पड़ी थी। उसके भीतर की खुशी उसकी मुसकराहट में फूटकर निकल पड़ी। उसके आनन्द का कोई ठिकाना नहीं था। अब उसे पुत्रवती कहलाने का सौभाग्य प्राप्त हो गया था और उसके जीवन का एक उद्देश्य भी बन गया था।

"क्या बच्चा तन्दुरुस्त और हट्टाकट्टा है?" पिता ने पूछा। पिता सदा व्यावहारिक और वैज्ञानिक प्रकृति के होते हैं।

"आज के जन्मे हुए तीनों बच्चों में यह सबसे अच्छा है," नर्स ने अंगरेजी में कहा, जिसका अर्थ स्वामीनाथ ने अखिला को तमिल में समझा दिया।

इसी बीच वह नर्स, जो पहले-पहल बच्चे को ले गई थी, वार्ड में आई। उसने बच्चे को उठा लिया और कुछ देर तक वह उसे खेलाती रही; फिर दोनों नर्सें बाहर चली गईं।

इस बच्चे की टूँडी के पास एक तिल था, वह इतनी जल्दी कैसे गायब हो गया?" पहली नर्स ने पूछा।

"क्या तिलवाला बच्चा इस औरत का था? हमने तो उस पर मुसल-

मान बच्चे का नम्बर बाधकर वार्ड नम्बर आठ में भेज दिया," दूसरी नर्स ने जवाब दिया।

"या भगवान् ! अब हमें इस बारे में चुप रहना चाहिए," पहली नर्स बोली ।

"नहीं, यह बहुत बुरी बात है ; अगर तुम्हें यकीन है तो हमें अब से भी बच्चे बदलकर अपनी गलती सुधार लेनी चाहिए," दूसरी नर्स ने आपत्ति करते हुए कहा ।

"तुम तो पागल हो गई हो," पहली नर्स बोली । "अब ऐसा करने से गड़बड़ी होगी और हमें अपनी नौकरियों से हाथ धोना पड़ेगा । माओं के दिल में सुबहा तो फिर भी बना ही रहेगा । दोनों दुःखी होंगी । अब तो चुप रहने में ही भलाई है ।"

बारह दिन बाद अब्दुल तैयबजी की पत्नी और अखिला अपने-अपने घर क्रमशः एण्डर्सन स्ट्रीट और तिरुवल्लिकेण वापस चली गई । दोनों घरों में दोनों बच्चों का खूब लाड़-प्यार से लालन-पालन हुआ । सेठ तैयबजी के घर धन और आराम बहुत था और स्वामीनाथ के घर प्यार और संतोष अनंत । दोनों बच्चों की देखरेख में किसीने कोई कसर नहीं की ।

जब स्वामीनाथ का बच्चा एक साल का था तो उसकी मौसी आई । "बच्चे की आँखें तो हमारे भाई मुत्तु स्वामी जैसी हैं, सिर्फ इसकी नाक स्वामीनाथ के घरवालों से मिलती-जुलती है," उसने बच्चे को देखकर कहा। इससे स्वामीनाथ को बड़ा संतोष हुआ और मा को दुहरी खुशी हुई ।

सेठ तैयबजी के घर में भी ऐसा ही हुआ ।

× × ×

सेठ तैयबजी को मरे २२ वर्ष हो गये हैं । अब उनका बेटा सुलेमान, जो जन्म से ही बड़ा चतुर था, अपने पिता की बड़ी तिजारत को खूब होशियारी के साथ चला रहा है ।

स्वामीनाथ ऐयर का लड़का अश्वत्थ नारायण बेहद कोशिश करने पर भी स्कूल लीविंग परीक्षा से आगे नहीं बढ़ सका । वह बम्बई अपने मित्रों

के यहाँ गया और वहाँ ठहरकर उसने इधर-उधर सिफारिशें कराने और और नौकरी ढूँढ़ने की चेष्टा की, लेकिन अंत में वह असफल होकर लौट आया। इन सब बातों का स्वामीनाथ पर गहरा असर पड़ा। ज्योतिषी ने जो कागज उन्हें लिखकर दिया था उसमें लिखा था—"तुम्हारा बेटा बहुत बड़ा सौदागर होगा। वह भाग्यशाली होगा, लेकिन अपने माता-पिता के किसी काम न आ सकेगा।"

"इसकी तो कोई बात नहीं कि वह हमारे किसी काम आयगा या नही। वह खुश रहे, यही काफी है। लेकिन उसे तो कहीं सफलता मिलती ही नहीं। ज्योतिष एक ढकोसला है," स्वामीनाथ ने बिगड़ते हुए कहा।

"यह तुम कैसे कह सकते हो कि ज्योतिष झूठी है? क्या बच्चे का जन्म ठीक भविष्यवाणी के ही अनुसार नहीं हुआ? विधाता का लिखा कोई नहीं मेट सकता। कौन जाने, अभी क्या होगा और क्या नहीं। उसे किसी चेट्टिया (बनिये) के यहाँ काम सीखने को भेज दो। मुमकिन है कि वह तिजारत में होशियार निकले," अखिला ने कहा।

: ७ :

पश्चात्ताप

अशोक वाटिका में कितनी ही रातें जागते बिता देने के बाद एक रात अनजाने ही दुःखी सीता को गहरी नींद आ गई ।

वहां के अपने दुःखपूर्ण कारावास में उन्हें अक्सर लक्ष्मण की याद आती थी । राम का ध्यान करते समय भी उन्हें ऐसा लगता था मानो लक्ष्मण उनके सामने खड़े-खड़े आंसूभरे नेत्रों से मौन भाषा में कह रहे हैं—"बहिन,तुमने मुझसे ऐसी बातें कैसे कहीं ?" यह विचार सीता के लिए असह्य था । इससे उन्हें अपने कारावास से भी अधिक कष्ट होता था।

"हाय, मैंने उनके निर्दोष हृदय को न कहने योग्य बातें कहकर चोट पहुंचाई । मेरा पाप तो रावण से भी बढ़कर है जो मुझे यहां उठा लाया है ।" ऐसी बातें वह बार-बार सोचती और अपनी नासमझी के लिए अपने आपको कोसती ।

ऐसे ही विचारों से थककर सीता सोगई । स्वप्न में लक्ष्मण सामने खड़े दिखाई दिये । उन्हें वहां देखकर आनन्द से नाच उठी और हर्ष के आंसू बहाती हुई बोली—"तो तुम आ ही गये भइया ! क्या अबतक के मेरे सारे कष्ट स्वप्न थे ?"

"हां, मैं सचमूच आ गया हूं, बहिन ! अब भय और शोक की कोई बात नहीं । मूझे कभी आपको अकेले नहीं छोड़ना चहिए था । क्या इसके लिए आप मूझे क्षमा कर देंगी ?" लक्ष्मण ने पूछा ।

फिर वह हंसते हुए बोले —"ओह, आपने भी कैसा हठ किया और उसके कारण हम कितने भयानक संकट में पड़ गये !"

लक्ष्मण की हंसी में सवेरे की ओस पर पड़नेवाली सूर्य की किरणों जैसी चमक थी। दुःख, आंसू और आनन्द से मिली हुई उस हंसी की सुन्दरता का शब्दों द्वारा कैसे वर्णन किया जाय !

"सचमुच मेरा सिर फिर गया था। लेकिन क्या तुम्हारा मुझे इस तरह अकेले छोड़ जाना ठीक था ? मैंने तुमसे चाहे कितनी ही कड़वी बातें क्यों न कही हों, तुमने अपने बड़े भाई के सामने की हुई प्रतिज्ञा कैसे तोड़ी ? मुझे तो क्रोध आ गया था और मैंने तुमसे ऐसी बातें कह दी थीं जो मुझे नहीं कहनी चाहिए थीं। लेकिन तुम्हें तो उसके कारण अपने भाई के सामने की हुई प्रतिज्ञा नहीं तोड़नी चाहिए थी," सीता ने कहा।

"कैसी प्रतिज्ञा ? क्या तुमने राम से कोई प्रतिज्ञा की थी ? मैंने तो इसके विषय में कुछ नहीं सुना," नारद मुनि बोले, जो वहां न मालूम कैसे आ पहुंचे थे। वह ऐसा ही करते थे और सपनों में ऐसा ही होता भी है।

"क्या लक्ष्मण ने प्रतिज्ञा नहीं की थी ?" सीता बोली। "आप जैसे पूजनीय पुरुष को ऐसी बातें नहीं कहनी चाहिए।" स्पष्टतः जगत-जननी सीता को नारद से कोई भय नहीं था।

नारद ने उत्तर दिया —"तुम्हारी प्रार्थना पर राम लक्ष्मण से यह कहकर कि जहां खड़े हो वहीं रहना, शीघ्रता से हिरन के पीछे भाग गये। उस समय वह लक्ष्मण की बात सुनने के लिए रुके नहीं। लक्ष्मण ने अपने मुंह से कोई प्रतिज्ञा नहीं की।"

यह सुनकर लक्ष्मण हंसे और बोले—"मुझे इस प्रकार के वाद-विवाद अच्छे नहीं लगते। सम्भव है ऋषियों में ऐसी वाचालता निषिद्ध न हो। मैं एक सिपाही हूं। जब राम ने कहा 'यहां रहो' और मैं कुटिया के द्वार पर खड़ा हो गया तो वह मेरी ओर से प्रतिज्ञा ही हुई।"

"जाने से पहले मेरे पति मुझे अपने इस भाई को सौंप गये थे,"

सीता ने कहा।

"अरे, जब तुम दोनों ही एक दूसरे की हाँ-में-हाँ मिलाने लगे तो मुझे क्या पड़ी है? है तो यह तुम्हारा ही आपस का झगड़ा," नारद बोले।

"यदि मैंने कोई बात कह दी थी तो उससे तुम्हारा बिगड़ ही क्या सकता था?" सीता ने कहा। "हमने अपना नगर, अपना महल, केवल वचन निभाने के लिए ही तो छोड़ा था! हमने भरत और प्रजा की प्रार्थनाएँ इसी कारण तो नहीं मानी कि हम समझते हैं कि एक बार वचन दे देने पर, उसे चाहे कुछ भी हो जाय, निभाना चाहिए!

"अपनी कही हुई असहनीय बातें याद दिलाकर मेरा हृदय मत दुखाइये," लक्ष्मण ने कहा।

"चाहे सारा संसार तुम्हें लांछित क्यों न करता, तब भी क्या तुम्हारे लिए मुझे इस भांति अकेले छोड़कर चला जाना उचित था?" सीता ने पूछा।

"मैं मानता हूँ कि आपका कहना यथार्थ है। जब मैं आपको छोड़कर आधी दूर चला गया तो मेरे मन में भी ऐसे ही विचार उठे—'भाभी की गालियों से मेरा क्या बिड़ेगा? मुझे तो केवल अपने भाई के सामने की हुई प्रतिज्ञा निभानी चाहिए,' मैंने मन-ही-मन में सोचा और घूमकर दस डग पीछे लौटा।"

तभी साधु के वेष में छिपा हुआ रावण, जो सीता का दिया हुआ फल खा रहा था, एकाएक भय से काँप उठा। यह उस समय की बात है जब लक्ष्मण वापस मुड़े थे। रावण को बुरे शकुन होने लगे और उसका बायां हाथ और बाईं आँख फड़कने लगी। उसने फल को पत्ते पर रख दिया और द्वार की ओर देखा। उसे भय हुआ कि कहीं लक्ष्मण न आ जायं और मुझे भागना पड़े।

"डरो मत," नारद ने राक्षस से कहा।

झगड़ा करानेवाले यह ऋषि न मालूम कहां से और कैसे टपक पड़े और झट बीच में बोल उठे।

यह कहानी आश्चर्यजनक, अशुद्ध और असम्बद्ध-सी मालूम होती है। कहां अशोक वाटिका और कहां पंचवटी! किंतु विस्मय की कोई बात नहीं। यह स्वप्न था और वह भी एक दुःखी नारी का। ऐसे स्वप्नों में न कोई नियम होता है, न कारण।

"मैं कुटिया की ओर दस डग बढ़ा," लक्ष्मण ने कहा, "परन्तु तभी आपकी लाल-लाल आंखें और चढ़ी हुई भौंहें मेरे नेत्रों के सामने घूम गई। ऐसा लगा मानो आपने कहा 'दुष्ट! तू फिर आ गया' और मेरी ओर फुफकार मारकर काली की तरह झपटीं। बस मैं वापस चला गया और मुझे अपने भाई के सामने की हुई प्रतिज्ञा की सुध नहीं रही। केवल मेरा अभिमान और आपके शब्द मेरा मस्तिष्क विचलित बनाते रहे। 'होने दो जो कुछ भी होना है, मैं अपना मान नहीं खोऊँगा,' मैंने दान्त पीसते हुए कहा और चल दिया जिधर हिरन के रोने का शब्द सुनाई दिया था।"

"यदि तुम उस समय आ जाते तो मैं बच जाती," सीता ने रोकर कहा।

"जो हो गया, सो हो गया। उठिए, अब चलें। पिछले दुःख को क्यों याद करती हैं? अब तो मैं यहाँ हूँ," लक्ष्मण बोले।

"भइया, मैंने बड़ा अन्याय किया है। क्या ऐसा कोई भी प्रायश्चित्त नहीं, जो मैं इस पाप के लिए कर सकूँ?" सीता ने पूछा।

"उठिये, खड़ी होइये," लक्ष्मण ने कहा और सीता को हिलाकर जगा दिया।

सीता उठकर बैठ गई। वहाँ न लक्ष्मण थे, न नारद; केवल राक्षसियाँ उन्हें घेरे खड़ी थीं। उनमें-से एक ने कहा—'उठो, उठो' अब तक क्यों सो रही हो? महाराजा रावण आ रहे हैं। तुरही की आवाज नहीं सुनाई दे रही है? और देखो, जैसा राजा कहें वैसा करना, बेकार ज़िद न करना। राम-लक्ष्मण तो समुद्र-पार हैं, वे यहां किसी तरह भी नहीं पहुंच सकते। अब तुम रावण की स्त्री हो, उन्हें कृतज्ञता के साथ स्वीकार कर लो। सुख और सौभाग्य को ठुकराकर व्यर्थ ही विरोध में जीवन क्यों नष्ट

करती हो ?"

सीता ने ठण्डी सांस ली और वृत्तों और झाड़ियों ने भी उनका साथ दिया।

इसके दूसरे दिन सागर लांघकर हनुमान सचमुच लंका जा पहुंचे। सीता का सपना हनुमान के पहुंचने के पूर्व सूचना मात्र था। जो कुछ होनेवाला था वही उन्हें समने दिखाई दिया था। चूँकि वह हनुमान को नहीं जानती था, इसलिए हसुमान के बदले लक्ष्मण दिखाई दिये थे।

इसके बाद अशोक वाटिका में क्या हुआ, इसे कौन नहीं जानता? जब सीता को पता लग गया कि हनुमान कौन हैं तो उन्होंने पहले लक्ष्मण के ही कुशल-क्षेम की बात पूछी और अपने पति राम के विषय में बाद में बातचीत की।

लक्ष्मण को अपमानित करने का दुःख उनके हृदय में कांटे की तरह चुभता रहता था। जो दुःख किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा बंटाया नहीं जा सकता वह सबसे अधिक कष्टदायक होता है।

यदि हम सीता के कष्ट और दुःख का स्मरण करें तो कुछ हद तक अपने कष्टों को भूल सकते हैं। कहा जाता है कि हनुमान अमर हैं, वह सदा हमारे पास हमारी सहायता करने को तत्पर रहते हैं। कष्ट आने पर हमें 'राम राम' कहकर उसका डटकर सामना चाहिए। हनुमान अवश्य हमारी रक्षा को आयेंगे।

: ८ :

मा

रॉयप हमारे यहां अखबार बेचने का काम करता था। था तो वह ईसाई का लड़का, लेकिन उसे इस बात की आदत थी कि रात के समय वह किसी विनायक की मूर्त्ति के सामने जाकर दण्डवत् करता और फिर उसके पीछे लेटकर सो जाता। वह कभी यह मानने को तैयार नहीं होता कि सोने के लिए इससे भी कोई अच्छी जगह हो सकती है।

अगर कोई उससे पूछता कि तू ऐसी जगह क्यों सोया करता है तो वह केवल मुसकरा देता और ज्यादा पूछने पर कहता—"इससे मेरे मन को शांति मिलती है।"

"तेरा बाप ईसाई था या तू ही ईसाई हो गया है?" कुछ लोग उससे पूछते। इसका वह गर्व के साथ उत्तर देता—"मैं ही ईसाई हो गया हूँ," और फिर अखबार बेचने चल देता।

कन्दस्वामी ऐयर कृष्णगिरि तालुका के पंजपट्टी गाँव के एकाउन्टेंट थे। एक दिन उसकी पत्नी शैतान-कुँड से नहाकर ऊपर आते समय फिसलकर पानी में गिर पड़ी। डूबते वक्त तक वह लगातार यही चिल्लाती रही—"हाय, मेरे बच्चे का क्या होगा? उस समय वेंकटराय केवल छः महीने का था। कुछ साल बाद कन्दस्वामी ऐयर ने दूसरा ब्याह कर लिया। कुछ दिनों तक तो सब कुछ ठीक ढंग से चलता रहा, लेकिन बाद में बालक वेंकटराय को यह महसूस होंने लगा कि मेरे पिता और सौतेली मा दोनों ही मुझे नहीं चाहते। धीरे-धीरे उन्हें उससे अका-

रण ही घृणा भी हो गई । सौतेली मा उसे यह कहकर पीटती कि यह जानबूझकर मेरा कहना नहीं मानता और जब वह रोता हुआ पिता के पास पहुंचता तो वह भी उसे पीटते । यह बात अभागे बच्चे की समझ में न आती। अगर कोई कुत्ते को पीटता या उसपर पत्थर फेंककर मारता और वह दर्द से चीखता हुआ भागता तो उसे देखकर वेंकटराय के हृदय में भ्रातृत्व की भावना जाग उठती और वह देर तक उस बेचारे जानवर को खड़ा-खड़ा देखता रहता । अब वह सात साल का था और स्कूल जाने लगा था। लेकिन पढ़ाई में उसका मन नहीं लगता था ! उसके मास्टरों ने पहले उसे डांटा-धमकाया और फिर मारा-पीटा भी, लेकिन अन्त में उसे गधा समझकर छोड़ दिया ।

एक दिन उसके स्कूल का एक मित्र शौरिमुत्तु उसे अपने घर ले गया। उसकी मा द्वार पर खड़ी प्रतिक्षा कर रही थी। उसके पहुंचते ही उसने उसे छाती से लगाकर प्यार किया और फिर हाथ पकड़कर भीतर ले गई।

"तुम्हारे साथ कौन आया है ?" उसकी मा ने पूछा।

"वह मेरी क्लास में पढ़ता है और गांव के एकाउन्टेंट का लड़का है। मैं उसे अपने साथ खेलने के लिए बुला लाया हूं । क्या उसे कुछ खाने को दे सकती हो ?"

शौरिमुत्तु के घर की हर चीज वेंकटराय को बड़ी अच्छी लगी । वह उसके साथ दो-तीन दिन तक उसके घर गया।

"मेरी मा मुझसे इतनी मुहब्बत क्यों नहीं करती जितनी शौरि की मा उससे करती है ?" उसने अपने मन में सोचा। एक दिन उसने शौरि को अलग ले जाकर पूछा—"मा कैसे बनाई जाती है ? तुम्हें अपनी मा कैसे मिली ?"

शौरिमुत्तु इसका जवाब नहीं दे सका। उसकी समझ में नहीं आया कि बच्चों को अपनी माताएं कैसे मिलती हैं । आखिरकार उसने कहा—"हमें मा भगवान् देता है । पता नहीं क्यों उसने तुम्हें अच्छी मा नहीं दी। शायद वह तुमसे नाराज है।"

अपनी मा के आने पर उसने कहा—"मा, पता नहीं क्यों वेंकटराय की मा उसे हमेशा मारा करती है। क्या उसे तुम-जैसी अच्छी मा नहीं मिल सकती ?"

मेरी ने मुसकराकर कहा—"अगर तुम अच्छे होगे तो तुम्हारी मा तुम्हें नहीं पीटेगी।" यह कहते हुए उसने शौरि के मुँह को थपथपाया और उसका सिर चूम लिया।

"मुझे मेरी मा कब मिली ? तुम शोरि की मा कब बनी ?" वेंकटराय ने पूछा।

मेरी लड़के के भोलेपन पर दया दिखाते हुए मुसकराई और बोली—"क्या यह बात तुम्हें किसीने नहीं बताई ? जब तुम नन्हे-से थे तभी तुम्हारी मा शैतान-कुन्ड में गिर कर डुब गई ? उसके बाद तुम्हारे बाप ने दूसरा ब्याह किया। ब्याह के वक़्त मैं वहां थी और मुझे पान-सुपारी मिली थी। जो तुम्हें पीटती है वह तुम्हारी अपनी मा नहीं है, वह तो बेचारी मर गई।"

"तो मेरी मा अब कहां है ?" वेंकटराय ने आँखें फाड़कर पूछा।

"बेटे, अगर तुम भगवान् से प्रार्थना करोगे तो तुम्हारी मा मिल जायगी।"

"भगवान् कहां है ? मैं उसकी प्रार्थना कहां करूं ?"

"उधर देखो," शौरि की मा ने दीवाल पर लटकती हुई वर्जिन मेरी की तस्वीर दिखाते हुए कहा। वेंकटराय बहुत देर तक खड़ा-खड़ा तस्वीर दिखाता रहा। इससे उसमें एक नया जीवन आ गया। वह घर को चल दिया। रास्ते में एक गिरजा पड़ता था। एक खिड़की में से उसने भीतर झांककर देखा। वहां भी उसे दीवाल पर एक बड़ी तस्वीर दिखाई दी। वह उसे टकटकी बांधकर देखता रहा। धीरे-धीरे ऐसा मालूम हुआ मानो तस्वीर में जान आ गई और वह दीवाल से उतर आई। वह एक स्त्री थी, प्रेम की साक्षात् मूर्त्ति। वह आई और वेंकटराय के पास खड़ी हो गई। उसे लगा मानो उसकी प्रार्थना

सुनकर सचमुच उसकी मा उसके पास आ गई। उसकी खुशी का ठिकाना न रहा।

"मेरे बच्चे, मेरे प्यारे वेंकटराय," उसने उसे कहते हुए सुना। कितनी प्यारी आवाज थी! उसे अपने मुँह पर उसके हाथ का स्पर्श अनुभव हुआ और रोमांच हो आया। आखिर उसे अपनी मा मिल ही गई। उसने उसे छाती से लगाकर प्यार किया और कहा—"मेरे पीछे-पीछे आओ।" वह आगे-आगे चलने लगी और चलते-चलते वे दूर निकल गये। बीच-बीच में वह रुकती और वेंकटराय को उठाकर प्यार कर लेती।

"मेरे बच्चे, तूने इतने दिन तक दुःख उठाये! तूने मुझे पहले क्यों नहीं बुला लिया?" उस स्त्री ने कहा।

"मुझे पता नहीं था, मा?" वेंकटराय बोला और रोने लगा।

"रो मत," मा ने कहा और अपनी साड़ी के छोर से वेंकटराय के आंसू पोंछ डाले।

वे चलते रहे और अन्त में एक ईसाई पादरी के मकान पर पहुंचे। वेंकटराय फाटक पर खड़ा हो गया। "यह बहुत अच्छी जगह है, आओ, यहीं बाग में बैठें। घर जाने पर तो मा मारेगी," वह बोला और अन्दर जाने की चेष्टा करने लगा।

"वहां मत जाओ," उसकी मा ने उसे सावधान करते हुए कहा।

"क्यों? वहां जाने से क्या होगा?" वेंकटराय ने पूछा।

"कोई आ जायगा और फिर मैं नहीं ठहर सकूंगी; मुझे चला जाना पड़ेगा," मा ने कहा।

"मुझे बहुत प्यास लगती है। चलो, बाग के कुएं से पानी पीकर लौट आयेंगे," यह कह वेंकटराय मा का हाथ पकड़कर भीतर चला गया।

"लड़के, तुम कौन हो?" पादरी ने मुंह से सिगार हाथ में पकड़ते हुए बच्चे के पास आकर पूछा। मा अदृश्य हो गई।

"मा, मा," कहकर वेंकटराय चीख पड़ा। वह बाग में इधर-उधर दरख्तों के बीच भागा-भागा फिरा और चिल्लाता रहा—"मा, तुम कहां

चली गई ? लौट आओ, लौट आओ ।"

पादरी उसे शान्त कर अपने घर ले गया और थोड़ा पानी पिलाने के बाद बोला—"बच्चे तुम कौन हो ?" उस समय वेंकटराय को बड़ा तेज बुखार था ।"

"बच्चे, तुम्हें सिर्फ ईशू बचायगा । खुदा का वही एक लाजवाब बेटा है । देखो यह उसकी तस्वीर है । वह तुम्हारी रक्षा करेगा और इधर देखो, यह उसकी मा मेरी की तस्वीर है, जिसने उसे पृथ्वी पर जन्म दिया था । वही तुम पर दया करके तुम्हें यहां लाई थी ।"

"नहीं, नहीं, वह 'मेरी' नहीं, मेरी मा थी । मैं उसे ढूंढ निकालूंगा । मैं उसके बिना नहीं जी सकता ।" तेज बुखार में इस तरह बक-बक करता हुआ वेंकटराय भाग खड़ा हुआ ! अंधेरा हो चुका था । पादरी ने उसका पीछा नहीं किया ।

इधर-उधर टक्करें खाता हुआ वह बैलगाड़ियों के अड्डे के पास विनायक के एक छोटे से मन्दिर में पहुंचा । पैंठ का दिन न होने के कारण वहां कोई भी आदमी नहीं था । मूर्ति के सामने किसी का जलाया हुआ एक छोटा-सा दीप टिमटिमा रहा था वेंकटराय जाकर मूर्ति के सामने गिर पड़ा और पड़ा-पड़ा "मा,मा" बड़बड़ाता रहा । जल्दी ही उसे गहरी नींद आ गई । बीच रात में एकाएक वह उठ बैठा । उसकी मा उसके पास बैठी थी ।

"मा !" वेंकटराय चिल्लाया और उसके गले से लिपट गया । "तुम फिर तो मुझे छोड़कर नहीं जाओगी," उसने रोकर पूछा ।

"नहीं' अब नहीं जाऊंगी," मा ने वादा किया और उसका मुंह थपथपाते हुए उसे प्यार किया ।

"अगर तुम रोज यहां आकर सोया करोगे तो मैं भी ज़रूर आया करूंगी । दिन में मैं तुम्हारे पास नहीं आ सकती," वह बोली और पौ फटने से पहले ही अदृश्य हो गई ।

उस दिन से वेंकटराय सदा उसी मन्दिर में सोने जाया करता । उसके चेहरे पर एक नई ज्योति आ गई थी और वह सारे दिन मनमाने

गीत गाता हुआ इधर-उधर फिरा करता था। गांववाले समझते थे कि लड़का पागल हो गया है और उसपर तरस खाते थे। लेकिन सच बात यह थी कि वेंकटराय आनन्द के सागर में तैर रहा था। रात को वह हाथ जोड़कर मूर्ति की तीन बार परिक्रमा करता और प्रार्थना करने के बाद उसके पीछे सो जाता। उसकी मा हर रात को बिना नागा उसके पास आती। बहुत दिनों तक यही क्रम चलता रहा।

"बेचारा पागल लड़का! कितनी छोटी उम्र में यह बीमारी लग गई इसे! कुएं पर औरतें कहतीं।

"यह सब बहानेबाजी है," कंदस्वामी की पत्नी कहती।

"सच है या झूठ, यह तो भगवान् ही जाने," कंदस्वामी कहते और अपने मन को समझाने की कोशिश करते। इससे उन्हें क्रोध आने लगा और गांव के हंसमुख बच्चों को देखकर ईर्ष्या होने लगी।

एक दिन शाम को जब वेंकटराय रोज़ की तरह मन्दिर में सोने गया तो वहां विनायक की मूर्ति नहीं थी। मन्दिर धराशायी हो पत्थरों और खम्भों का ढेर बना पड़ा था। किसीने उसे फिर से बनवाने के लिए गिरवा दिया था। काम शुरु हो गया था और मूर्ति दूसरे स्थान पर रख दी गई थी।

बेचारा लड़का उन पत्थरों के बीच बैठा-बैठा सारी रात जागता रहा, परन्तु उसकी मा नहीं आई। उसका सपना टूट गया और संसार एक बार फिर उसके लिए प्रेम से रिक्त हो गया।

वेंकटराय ने गिरजा के पास जाकर पुरानी खिड़की में-से झांककर देखा। दीवाल पर उसे मेरी की तस्वीर दिखाई दी। यह इसकी मा-जैसी लगती थी, लेकिन इस बार उतरकर उसके पास नहीं आई; एक तस्वीर की तरह दीवालपर ही टंगी रही।

कितने ही दिनों तक वेंकटराय टूटे हुए मन्दिर और गिरजा के इधर-उधर इस तरह चक्कर लगाता रहा जैसे किसी खोई चीज को ढूंढ़ रहा हो। एक दिन वह पादरी के पास जाकर बोला—"पिता,

मैं ईसाई बनना चाहता हूं।"

पादरी ने उसे बुलाकर बड़ी दयालुता के साथ बातचीत की। बाद में उसने कंदस्वामी ऐयर से कहा—"मा मेरी की मेहरबानी से तुम्हारे लड़के का पागलपन दूर हो गया है। वह ईसाई बनना चाहता है। हमें उसकी इच्छा के विरुद्ध नहीं चलना चाहिए।"

"ऐसा नहीं हो सकता; हम ब्राह्मण हैं," कंदस्वामी ने उत्तर दिया और फिर पादरी ने इस बात पर ज्यादा जोर नहीं दिया।

"जाने दो उसे। इसके सिवा और चारा ही क्या है? झूठ हो या सच, भगवान् करे उसका पागलपन दूर हो जाय और वह कहीं खुश रहे," ऐयर की पत्नी ने कहा।

"राम, राम! ऐसी बातें न कहो," कंदस्वामी ऐयर ने जवाब दिया।

लेकिन एक दिन वेंकटराय गांव से गायब हो गया और ऐसा गायब हुआ कि किसी को पता नहीं चला कि कहां गया।

मद्रास जाकर वेंकटराय ने एक बड़े पादरी से बपतिस्मा ले लिया और अपना नाम बदलकर रॉयप रख लिया। एक अखबार के मालिक ने उसे अखबार बेचने पर रख लिया। उसके मा-बाप को इसका कुछ पता नहीं चला।

ईसाई हो जाने पर भी रॉयप विनायक की कोई मूर्ति देखता तो हाथ जोड़कर खड़ा हो जाता। उसकी रातें सदा विनायक की किसी मूर्ति के पास ही बीततीं। अब भी ऐसा प्रतीत होता है मानो वह अपनी मा के लौट आने की प्रतीक्षा कर रहा है। अखबार बेचनेवाले लड़के उसे बहुत चाहते हैं।

× × ×

"यह तो अजीब कहानी है! भला इसका कोई आदर्श भी है! जरा समझाइये तो," सम्पादक ने पूछा।

कोई आदर्श नहीं है। यह तो मैंने सिर्फ अपने चित की शांति के लिए लिखी है," लेखक ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

"आप तो बिलकुल रॉयप-जैसे हंसते हैं। क्या कहानी विधुरों को दूसरा व्याह करने से रोकने केलिए लिखी गई है?"

"नहीं, नहीं; व्याह करना तो हमेशा अच्छा होता है।"

"तो क्या यह बिनायक की पूजा का समर्थन करने को लिखी गई है?

"पूजा सबकी अच्छी होती है। आप इस कहानी का यह उद्देश्य मान सकते हैं।"

"तो शायद यह सौतेली माताओं के लिए चेतावनी है?

"क्या सौतेली माएं भी आपका अखबार पढ़ती हैं? तब तो यह अच्छी बात है।"

"आजकल की सौतेली माएं बच्चों की देखभाल सगी माओं से भी ज्यादा अच्छी तरह करती हैं।"

"हो सकता है। जमाना बदल गया है। लेकिन सौतेली माएं हर तरह की होती हैं, यह तो आप जानते ही हैं। एक सास जिसे अपनी छोटी-सी बहू की देखभाल करनी पड़ती है, एक तरह की सौतेली मा होती है। इसी तरह वह स्त्री भी जो अपने यहां किसी छोटी लड़की को नौकर रखती है, सौतेली मा ही होती हैं। किसी पिल्ले को पालने-वाला आदमी भी सौतेली मा का ही काम करता है। सारांश यह कि जिस किसी भी स्त्री या पुरुष पर विकास पाते हुए मस्तिष्क और शरीर की देखभाल करने की जिम्मेदारी होती है, वही उसके लिए सौतेली मा हो जाता है। स्वाभाविक प्यार तो सिर्फ मा का होता है। लेकिन वह एक आदर्श हैं, जिसतक दूसरे प्रेमों को पहुँचाने की चेष्टा करनी चाहिए। दूसरों को चाहिए कि वे भी मा की ही तरह चौकसी, समझदारी और पवित्रता के साथ व्यवहार और प्रेम करने का प्रयत्न करें। दूध बढ़ते हुए बच्चे के शरीर को पोषण देता है, लेकिन मस्तिष्क की बढ़ती के लिए प्यार के दूध की आवश्यकता है। इसके बिना बच्चे की आत्मा मुरझा जाती है।"

"बस, रहने दीजिये। किसीने आपसे लेक्चर पिलाने के लिए नहीं कहा था। आपने मेरे सिर में दर्द कर दिया। हमसे जितना भी होता है हम अपने अखबार बेचनेवाले लड़कों की चिन्ता रखते हैं। वे सुस्त और शैतान होते हैं, फिर भी हम इन बातों पर ध्यान नहीं देते।"

"यह सुनकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। रॉयप की अच्छी तरह देख-भाल किया कीजिये और अगर कभी आपको उसके व्यवहार में विचित्रता दिखाई दे तो उस पर क्रोध न करके उसे विनायक के मन्दिर में भेज दिया कीजिये।"

: ६ :

शान्ति

बहू चौदह साल की थी। "लक्ष्मी, मैं चार घड़े पानी खींच चुकी ; चार घड़े और खींचकर हमाम भर दे। मैं चौके में जा रही हूं," सास ने कहा।

बहू ने घड़ा कुएं में डाला और हाथ बढ़ाकर रस्सी नीची कर दी, ताकि घड़ा भर जाय। जब वह उसे ऊपर खींचने लगी तो उसका बायां हाथ दुःखने लगा, यहांतक कि वह घड़े को मुश्किल से खींच पाई, वह हाय-तोबा करना नहीं चाहती थी, इसलिए पैर से रस्सी दबाकर दाहिने हाथ से पानी खींचने लगी। इस तरह चार या पांच घड़े पानी खींचकर उसने हमाम भर दिया।

लक्ष्मी की सास का घराना गरीब और पुराने ढंग का था। जवान होते ही बहू का गौना कर लिया गया और वह अपने पति के साथ रहने के लिए बुला ली गई। सास बहू पाकर बड़ी खुश हुई। जब किसी पर हुक्म चलाने को मिल जाता है तो किसे खुशी नहीं होती!

सास जो काम बताती उसे लक्ष्मी मेहनत और प्रसन्नता से करती, लेकिन पानी खींचना उसे वश से बाहर की बात मालूम होती। दो दिन तक उसने बड़ी मुश्किल से काम चलाया। तीसरे दिन रात को उसने झिझकते हुए अपने पति से कहा—"मुझे तुमसे कुछ कहना है ; नाराज़ तो न होंगे ?"

"कहो, क्या बात है ?" नटेश ने दयालुता के साथ पूछा।

"तुम नाराज होगे," लक्ष्मी ने फिर कहा ।

"डरो नहीं, मैं वादा करता हूं कि नाराज नहीं हूँगा ; बताओ, क्या बात है ?" नटेश ने आश्वासन देते हुए कहा !

"मुझसे कुएं से पानी नहीं खींचा जाता, मेरे हाथ में दर्द होने लगता है। अगर मैं मा से कहूंगी तो डर लगता है कि कहीं वह गलत न समझ बैठें," यह कहकर लक्ष्मी से अपने पति की ओर इस तरह देखा जैसे उससे कोई बड़ा अपराध हो गया हो ।

पहले तो नटेश को क्रोध-सा आया। उसने सोचा कि शायद सास-बहू के प्रचलित झगड़े का आरम्भ हो रहा है । लेकिन जब उसकी छोटी-सी पत्नी ने उसे अपनी कठिनाई बतलाई तो उसकी समझ में आ गया और उसे विश्वास हो गया कि यह जबरदस्ती लड़ने के लिए ऐसा नहीं कर रही है, बल्कि इसके हाथ में कुछ खराबी है ।

उस रात तक नटेश बहुत देर तक सो नहीं सका। सुबह वह एक नये इरादे के साथ उठा । उठने के बाद वह अक्सर थोड़ी-सी कसरत किया करता था। उसने सोचा कि अगर इसके बजाय में पानी खींचकर हमाम भर दिया करूं तो कसरत की कसरत हो जायगी और मेरी स्त्री की परेशानी भी दूर हो जायगी । उसकी बांह के बारे में किसी डॉक्टर से सलाह लेने का इरादा भी किया ।

× × ×

"नटेश, पानी तू क्यों भर रहा है ? यह तो तेरी बहू का काम है । क्या तू मुझे इस बात की सजा दे रहा है कि मैंने उससे घर के लिए थोड़ा-सा पानी भरने को कह दिया है ?" नटेश की मा, ने क्रोध में भरकर पूछा ।

"नहीं मा, यह बात नहीं है । यह काम मैं उसकी खातिर नहीं, बल्कि इसलिए कर रहा हूं कि इससे मेरी तन्दुरुस्ती को फायदा पहुंचेगा । तुम दोनों घर का काम किया करो ; मैं कसरत के खयाल से रोज़ सवेरे पानी भर दिया करूंगा," नटेश ने कहा । उसने सोचा कि अगर अपनी

स्त्री के हाथ की बात मा से कह दूँगा तो वह चिड़चिड़ाने लगेगी। इसलिए उसने सच्ची बात नहीं बताई।

लेकिन उसकी मा बराबर भुनभुनाती रही। उसने सोचा कि यह करतूत बदतमीज़ बहू की है। वह लक्ष्मी को बुरा समझने लगी।

नटेश की मा का नाम पार्वती था। उसकी बड़ी लड़की सीता विधवा हो जाने के बाद से उसीके पास रहती थी। वह दिन-भर आलसियों की तरह पड़ी रहती और दूसरों में ऐब निकाला करती।

"नटेश का तन्दुरुस्ती और कसरत का बहाना बिलकुल झूठा है; यह सब बहू की शरारत है। नटेश की तन्दुरुस्ती अबतक तो बिलकुल अच्छी थी; अब क्या हो गया?" सीता ने कहा।

"ज़रा सोचो तो भला, मर्द घर के लिए पानी खींचता हुआ कैसा लगेगा! कितनी शर्म की बात है!" मा बोली।

"रानीजी को आराम करने दो। हमाम भरने के लिए पानी मैं खींच दिया करूंगी," सीता ने कहा।

इस तरह की बकझक चलती रही। नटेश के गृहस्थ-जीवन का नया बाग कांटेदार झाड़ियों से भर गया और वहां प्रेम को पनपने को जगह ही नहीं रही। लक्ष्मी की आत्मा बड़ी दुःखी थी।

उस दिन लक्ष्मी सोकर जल्दी उठी और उसने चुपके से कुएं के पास जाकर पहले दिन की तरह अपने पैर से रस्सी दबाकर किसी तरह हमाम भरने के लिए काफी पानी खींच लिया। इसके बाद फिर खाट पर जाकर सो गई। जब और दिन की तरह नटेश उठकर पानी खींचने गया तो उसने देखा कि हमाम भरा जा चुका है। उसने समझा कि मा ने भर दिया होगा और वह चुपचाप अपने काम में लग गया।

यही बात दूसरे दिन भी हुई। "क्या किया जाय इसके लिए? मा नहीं चाहती कि मैं पानी खींचकर अपनेको तकलीफ पहुंचाऊं," नटेश ने मन-ही-मन में सोचा और किसीसे कुछ कहा नहीं। उस रात लक्ष्मी को बुखार चढ़ आया और उसका हाथ बुरी तरह सूझ गया। तब नटेश की समझ में

आया कि बात क्या है। वह बड़ा परेशान हुआ और खाट पर पड़ा-पड़ा जागता रहा। कुछ देर बाद उसे नींद आ गई।

"इसके हाथ में तो कोई जन्म की खराबी है; किन खोटे कर्मों से हम इस पाप को अपने घर उठा लाये ?" नटेश की निर्दय मा ने दूसरे दिन कहना शुरू किया। नटेश यह सहन नहीं कर सका। वह मा से झगड़ पड़ा और सख्त दर्द में पड़ी हुई बीमार पत्नी पर भी बात-बात पर बिगड़ने लगा। इसी तरह दो दिन बीत गये। तब उसने अपने ससुर को लिखा कि आकर अपनी लड़की को ले जाओ। ससुर आ गया।

"तुम्हारी लड़की के हाथ में कोई जन्म की खराबी है। तुमने हमें यह बात क्यों नहीं बताई थी ?" पार्वती ने पूछा।

"नहीं, यह जन्म की खराबी नहीं है। कभी-कभी इसका हाथ सूज जाया करता था, बस इतनी-सी ही बात है। अब मैं इसे घर ले जाऊंगा और बिलकुल अच्छी हो जाने पर यहां लाऊंगा," लक्ष्मी के बाप ने अपने को शांत रखते हुए कहा। वह अपनी लड़की को बुखार चढ़े में ही घर ले गया।

"इतने रिश्ते आ रहे थे कि पूछो मत ! क्या हमने उन सबको इसीलिए नामंजूर किया था कि हमारे लड़के को एक अपाहज लड़की और एक हजार रुपया मिल जाय ? क्या हमारे सिर पर से कर्ज़ा उतारने का कोई उपाय नहीं था ? हमारा भाग तो देखो।"

मा-बेटी रोज इसी तरह बातें किया करतीं। नटेश को ससुर का एक पत्र मिला, जिसमें लिखा था कि लक्ष्मी के हाथ की सूजन उतर गई है और बुखार भी कम है. लेकिन अभी वह खाट से उठ नहीं सकती।

एक महीने बाद दूसरा पत्र आया जिसमें लक्ष्मी के पिता ने सूचना दी कि बीमारी ने पलटा खाया है और लक्ष्मी को फिर से बुखार चढ़ आया है।

"यह बीमारी अच्छी नहीं हो सकती ; यह पिछले कर्मों का फल है," पार्वती ने कहा।

"शायद ऐसा ही हो। हमें अपने पापों का दण्ड भोगना ही चाहिए," नटेश बोला।

"तुम दूसरा ब्याह कर लो, मैं यह बात ज्यादा दिन नहीं सह सकती," मा ने कहा।

"बकवास मत करो," नटेश बोला और अपने दफ्तर चला गया। वह तालुका के दफ्तर में क्लर्क था।

इसी तरह एक वर्ष बीत गया। एक दिन पार्वती का छोटा भाई अपनी बारह साल की लड़की मीनाक्षी को लेकर नटेश के घर आया।

"देखो, कितनी अच्छी है यह लड़की! तुम्हारे ब्याह के वक्त यह बहुत ही छोटी थी, नहीं तो हम ज़रूर इससे तुम्हारा ब्याह कर देते। अब हम इसके लिए वर की तलाश में क्यों टक्करें खाते फिरें? यह हमारी बच्ची है, हमारे ही घर में आ जाय," पार्वती ने कहा।

शुरू-शुरू में ऐसी बातों से नटेश को घृणा मालूम हुई। लेकिन किसी बात के पीछे पड़े रहने पर वह पूरी होकर ही रहती है। दूसरे साल चैत्र के महीने में तिरुपति देवता के सामने नटेश का दूसरा ब्याह हो गया।

२

लगभग छः महीने बाद मीनाक्षी अपने पति के घर पहुंची। पार्वती उस पर बड़ी दयालु थी और मीनाक्षी स्वयं बड़ी फूर्तीली और अच्छी लड़की थी। अवस्था में छोटी होने पर भी वह घर का सारा कामकाज कर लेती थी। लेकिन इन सब बातों के होते हुए भी नटेश के हृदय में शांति नहीं थी। कोई बात उसे सताती रहती थी।

"तुम मुझसे प्रेम क्यों नहीं करते?" मीनाक्षी ने पूछा।

"तुम ऐसा क्यों सोचती हो कि मैं तुमसे प्रेम नहीं करता? मैं तुम्हें डांटता या पीटता तो नहीं?" नटेश ने कहा।

"तुम मेरे सवाल का जवाब नहीं दे रहे हो। असल बात तो यह है कि तुम्हारा मन कृष्णापुर में रहता है," मीनाक्षी बोली।

कृष्णापुर उस गांव का नाम था जहां लक्ष्मी बीमार पड़ी हुई थी। नटेश के दूसरे ब्याह के थोड़े दिन बाद ही लक्ष्मी का बुखार कम हो गया और उसके हाथ की सूजन भी उतर गई। जल्दी ही वह बिलकुल चंगी हो गई।

"देखो उसकी मक्कारी ! मैंने सुना है कि अब वह अपनी मा के घर का सारा पानी भर लेती है और यहां उसे चार घड़े खींचने भी भारी थे," पार्वती ने चिल्लाकर कहा ।

"और अब वह मक्कार यहां आने की सोच रही है। ऐसा मालूम होता है कि मेरे ग़रीब लड़के को दो-दो लुगाइयों का बोझ सम्हालना पड़ेगा। यह नामुमकिन है," उसने फिर कहा ।

"यह तो कुछ भी नहीं है, मा ! तुमने उसके चालचलन के बारे में भी कुछ सुना है ?" सीता ने कहा ।

"अरे, रहने भी दे उस बेशर्मी के जिक्र को," मा ने कहा ।

"मैं तो यही चाहती हूं कि ये बातें नटेश के कानों तक न पहुंचने पायें, लेकिन दुनिया का मुँह कौन पकड़ सकता है ?" सीता बोली ।

परन्तु कृष्णापुर के लोगों में ऐसी कोई चर्चा नहीं थीं। वे सब लक्ष्मी पर तरस खाते थे और कहते थे—"यह अन्याय तो देखो ! थोड़े दिन बीमार रहने की वजह से ही बेचारी को छोड़ दिया !"

"ऐसा लगता है कि इसके पति ने दूसरा ब्याह कर लिया है । कैसा खुल्लमखुल्ला अन्याय है यह ! हीरा जैसी लड़की की ज़िन्दगी खराब कर दी," कोई-कोई कहता ।

"उन्हें अदालत के सामने ले चलकर खड़ा करना चाहिए, जिससे कुछ सबक़ तो मिले," दूसरे कहते ।

इसी प्रकार कुछ दिन बीत गये। पहले तो लक्ष्मी को अपना मुंह दिखाते भी लज्जा आती थी और वह घर में बंद रहती थी। लेकिन इस तरह वह कितने दिन रह सकती थी ? वह नदी किनारे हनुमान जी के मंदिर में जाने लगी। नदी में नहाकर वह मूर्त्ति के सामने एक फल चढ़ाती और प्रार्थना करती—"हे पिता, तुमने एक बार सीता को कष्ट से उबारा था। तो फिर मेरे ओर कृपा-दृष्टि क्यों नहीं करते ?" इसी प्रकार वह प्रतिदिन देवता के सामने प्रार्थना करती ।

ऐसे ही दो वर्ष और बीत गये । "मैंने जरूर पिछले जन्म में कोई

बड़ा पाप किया होगा," लक्ष्मी अपने मन को समझाने के लिए कहती और ईश्वर के प्रति उनका विश्वास कम नहीं होता।

धीरे-धीरे कृष्णपुर में भी कुछ लोग ऐसी ही बातें उड़ाने लगे जैसी लक्ष्मी की सास और ननद को सुहाती थीं।

"उन्होंने इसे ऐसे ही थोड़े ही निकाल दिया होगा? कोई न कोई खराबी होगी ज़रूर," उन्होंने कहना शुरू किया। फिर तो एक की दस बात होने लगीं। एक दिन उसकी बड़ी भावज बोली—"कोई लड़की अपने पति से इतने दिन तक कैसे अलग रह सकती है! इससे तो यही अच्छा कि वह जीभ खींचकर मर जाय।" ये बातें उसने जोर से कहीं जिससे कि लक्ष्मी भी सुन ले और उसे ऐसी बातें कहने से रोकनेवाला था ही कौन? लक्ष्मी की मा को मरे बहुत दिन हो चुके थे और उसका बाप बीमार पड़ा-पड़ा मरने की तैयारी कर रहा था। पैर से ज़हर फैल जाने से वह तीन महीने से खाट पर पड़ा था। उन तीन महीनों में बीमार बाप की सेवा करते रहने से लक्ष्मी अपना दुःख बहुत-कुछ भूली रही।

एक दिन उसके पिता ने अपने लड़के को बुलाकर कहा—"बेटा, मैं अब नहीं बचूँगा, लेकिन मरने से पहले मैं तुमसे एक बात कहना चाहता हूं। तुम जाकर नटेश के हाथ-पैर जोड़ो और लक्ष्मी को वहां छोड़ आओ। वहां उसके साथ जो कुछ भी हो, भगवान् मालिक। मेरे मरने के बाद वह यहां नहीं रह सकती।" यह कहकर वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा और बेहोश हो गया। तीन दिन तक इसी दशा में रहने के बाद उसकी मृत्यु हो गई।

३

लक्ष्मी के भाई ने पिता की इच्छा पूरी करने के लिए कई प्रकार से चेष्टा की, लेकिन सब विफल।

"उस बदनाम को मैं अपने घर में कदम नहीं रखने दूंगी," पार्वती ने साफ़-साफ़ कह दिया और उसकी बेटी ने हां-में-हां मिलाई। नटेश की इच्छा तो थी, लेकिन उसे इतना साहस नहीं हुआ कि लक्ष्मी को फिर से

अपने पास रख ले। उसने उसके भाई को यह कहकर वापस भेज दिया कि अब मैं लक्ष्मी को नहीं रख सकता।

लक्ष्मी रोज की तरह हनुमान-मन्दिर में पूजा कर पास ही बैठी रो रही थी।

तुम रो क्यों रही हो?" वहां खड़े हुए एक ग्वाले के लड़के ने पूछा। लक्ष्मी उसे प्रति दिन हनुमानजी पर चढ़ाया हुआ केला दिया करती थी, इसलिए दोनों में मित्रता हो गई थी।

लड़के की बात का जवाब न देकर लक्ष्मी रोती रही।

"रोओ मत मा, भगवान् तुम्हारी मदद करेंगे," उसने कहा।

"भगवान् को मुझपर दया नहीं आती भइया! मैं इसीलिए तो रो रही हूं कि मैं मरना चाहती हूं और मौत नहीं आती," लक्ष्मी ने कहा।

"मेरी बड़ी बहिन भी इसी तरह रोया करती थी और एक दिन उसने कुएं में डूबकर जान दे दी। उसका आदमी उसे बहुत बुरी तरह पीटा करता था। उससे यह बरदाश्त नहीं हो सका। उसका आदमी शराबी था और उसने उसको इस दशा तक पहुंचा दिया।"

"अगर मेरा आदमी मुझे पीटता तो मैं सह लेती। चाहे वह कितना ही पीटता, मैं परवा न करती।"

"तो फिर क्यों रोती हो?"

"अगर मैं तुम्हें बताऊं तो तुम समझ नहीं पाओगे। तुम्हारी बहिन मरकर सुखी हो गई, भइया। मैंने भी मरने की ठान ली है, लेकिन मुझे डर लगता है। क्या तुम मेरे साथ तालाब तक चले चलोगे?"

"ताकि तुम पानी में गिर पड़ो? नहीं, मैं तुम्हारे साथ नहीं चलूंगा"

"नही चलोगे? अच्छा, मैं अकेली चली जाऊंगी।"

लक्ष्मी हनुमानजी के सामने साष्टांग लेट गई और बहुत देर तक चुपचाप पड़ी रही। फिर वह उठी और तेज़ी से बड़े कुण्ड की ओर चल दी।

"मत जाओ, मत जाओ; मैं तुम्हारे हाथ जोड़ता हूँ। सब ठीक हो

जायगा। अगर तुम पानी में डूब मरोगी तो भूत बन जाओगी; ऐसा काम मत करो।" ग्वाले का लड़का यह कहता हुआ उसके पीछे-पीछे दौड़ा।

नदी की तली में एक गहरा गढ़ा था। उसीको बड़ा कुण्ड कहते थे। नदी ऊपर तक भरी हुई थी और दोपहर का वक्त था। आसपास कोई आता-जाता नहीं दिखाई देता था। कुछ चरवाहे नदी के दूसरे किनारे पर दूर अपने ढोर चरा रहे थे। उन्होंने न कुछ देखा, न सुना। जैसे ही लक्ष्मी पानी में कूदी ग्वाले का लड़का डरकर भाग गया।

४

"कहते हैं कि वह नदी में डूबकर मर गई। बड़ा अच्छा हुआ।"

"अब गांववाले हमें नाम नहीं धरेंगे; हम बदनामी से बच गये।"

"मैंने सुना है कि जो आदमी बेमौत मरते हैं वे भूत बन जाते हैं।"

"हां, हां, भूत तो बनेगी ही वह। बनने दो, वह इसी लायक थी।"

ये बातें पार्वती, सीता और मीनाक्षी कर रही थीं। मीनाक्षी को सात मास का गर्भ था।

दो महीने बाद मीनाक्षी को बिना किसी विशेष कष्ट के प्रसव हुआ और एक लड़की पैदा हुई। नटेश के घर में वह बड़ी खुशी का दिन था। हम मृत्यु को बड़े दुर्भाग्य की बात समझते हैं, लेकिन वह बहुत-से रंजों और दुःखों का अंत कर देती है। उसके बिना जीवन एक अमर नरक बन जाय। लक्ष्मी के डूबने के समाचार से कितनों को खुशी हुई। नटेश तक को तसल्ली और शांति मिली।

बच्चे के जन्म के दस दिन बाद से मीनाक्षी को हलका-हलका बुखार रहने लगा। "कोई बात नहीं है, ठीक हो जायगी," एक बूढ़ी औरत ने कहा, जो उसे देखने आई थी।

दूसरे दिन मीनाक्षी बकझक करने लगी मानो उसे सरसाम हो गया हो। "चुप रहो," सास ने डपटकर कहा।

मीनाक्षी ने उसे घूरकर देखा "हूँ; मैं जरूर चुप रहूंगी," वह चिल्लाकर बोली। "तुमने मुझे घर से बाहर निकाल दिया था; अब

मैं तुम्हें नहीं छोड़ूँगी।" कुछ रुककर वह फिर चिल्लाई—"मेरे बच्चा पैदा हुआ है न! यह किसका बच्चा है? उठ, भाग; जा नदी में गिर-कर मर जा।

मारे क्रोध के मीनाक्षी की आँखें घूमने लगीं और उसका शरीर लकड़ी की तरह ऐंठ गया। थोड़ी देर तक वह इसी दशा में रही, फिर बिछौने से उछलकर भागने लगी।

"हे भगवान्! यह तो उसका भूत है," सीता भय से चिल्लाई।

"हे ईश्वर! हे माता? मैं तुम्हें जो कुछ कहोगी दूंगी। हे मारिअम्मा हमारी रक्षा करो," पार्वती घबराकर बोली।

पार्वती ने चुपके से मन्दिर के पुजारी को बुला भेजा और मुर्गे की बलि चढ़ाने का प्रबन्ध किया।

ज्योतिषी सीताराम ऐयर ने मंत्र पढ़े और बीमार को पान में रखकर पवित्र भस्म दी। मीनाक्षी ने उसे लेकर बिछौने पर रख लिया और कुछ शांत हो गई। भस्म का प्रभाव देखकर सबको प्रसन्नता हुई।

"इसे अपने मुँह में रख लो," नटेश ने कहा।

"हां, रखती हूँ," यहकर मीनाक्षी ने भस्म अपनी हथेली पर उंडेल ली और फिर एकाएक उसे फूँक मारकर उड़ा दिया। इसके बाद वह ठठा-कर हंस पड़ी।

"अब मैं तुझे नहीं छोड़ूँगी। कहां है वह औरत? उसे मैं भुगतूंगी। भस्म देकर मुझसे धोखा करना चाहती है?" वह चिल्लाई और पागलों की तरह हंसी।

"अरी चुड़ैल! यह तो वही सांपन है, जो डूबकर मरी है। झाड़ू तो ला," पार्वती ने कहा।

सीता झाड़ू उठा लाई और पार्वती ने उसे लेकर मीनाक्षी के सिर पर मारना शुरू किया।

"मुझे मत मारो, मुझे मत मारो, मैं जाती हूँ," मीनाक्षी चिल्लाई।

"भाग यहां से, निकल यहां से," यह कहकर पार्वती उसे फिर

मारने लगी।

"बस बहुत हो चुका। ठहरो," नटेश चिल्लाकर बोला। वह बेचारा इस करुण दृश्य को देखकर पागल-सा हो गया था।

"तू नहीं समझता इन बातों को, नटेश! दूर खड़ा रह," पार्वती ने चिल्लाकर कहा।

इस तरह से लोग चुड़ैल के पीछे पांच दिन तक पड़े रहे, लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ। बेचारी बहू का पागलपन बढ़ता गया।

"यह प्रसव का पागलपन है," एक ने कहा।

"नहीं किसी के श्राप का फल है," दूसरे ने कहा।

"मुझे पक्का यकीन है कि यह लक्ष्मी का भूत है," सीता बोली।

"मुर्गे की बलि काफी नहीं है, देवी बड़ी बली चाहती है। बकरा चढ़ाना होगा," पुजारी ने अकेले में पार्वती से कहा और पार्वती ने नटेश से छिपकर इसका इन्तज़ाम कर दिया। लेकिन सब बेकार।

चार महीने बीत गये और तब, जैसा कि सीतारामऐयर ज्योतिषी ने भविष्य-वाणी की थी, मीनाक्षी को आराम हो गया और वह बिलकुल चंगी हो गई। सारी बातें सपने-सी लगने लगीं, लेकिन उनका नतीजा यह हुआ कि हरएक के मन में, यहां तक कि पार्वती के मन में भी, लक्ष्मी के प्रति भय और आदर का एक नया भाव उत्पन्न हो गया। उन्होंने अब उसके बारे में बातचीत करनी बंद कर दी।

मीनाक्षी एक बार फिर बड़े स्नेह और चतुराई के साथ काम करने लगी। उसे बस धुँधली-सी याद भर रह गई कि बीमारी के दिनों में मैंने मूर्खतापूर्ण व्यवहार किया था। घर के सब आदमियों की भी जान में जान आई; वे उस घटना के बारे में चुप रहे और चतुराई के साथ अपना काम करते रहे।

एक वर्ष बाद मीनाक्षी फिर गर्भवती हुई। पार्वती ने छिप-छिपकर और प्रकट रूप से भी देवताओं की मानताएं मानी, उनकी पूजा की और बलि चढ़ाई। जब बच्चा होने का समय आया तो नटेश ने पास

के कस्बे पाग्लूर के मिशन-अस्पताल से एक नर्स बुला ली। इस बारे में किसी ने कुछ कहा-सुना नहीं। पिछली बार गांव की दाई ने बच्चा कराया था और मींनाक्षी बीमार हो गई थी। इसलिए हरएक की यही राय हुई कि इस बार होशियार नर्स को बुलाना ठीक होगा।

मीनाक्षी का दूसरा प्रसव भी आसानी के साथ हुआ और इस बार लड़का जन्मा। बच्चा होने के समय अस्पताल की नर्स उसके पास रही और बाद में भी एक महीने तक रोज उसे देखने आती रही। उसने इस बात का ध्यान रखा कि मा को कोई दिमागी गड़बड़ी न हो और बच्चे को समय पर दूध मिलता रहे। नटेश को डर था कि कहीं पिछले प्रसव-वाली बीमारी फिर न हो जाय। सब बातों के ठीक रहने से उसे बड़ी खुशी हुई और वह नर्स को दस रुपये देने लगा। लेकिन नर्स ने यह कहकर कि मुझे रुपयों की जरूरत नहीं है, रुपये लौटा दिये।

"मुझे दुःख है कि मैं आपको इतने थोड़े रुपये दे रहा हूं। इससे ज्यादा मैं दे नहीं सकता। मेहरबानी करके इन्हें ले लीजिये और नाराज न होइये।"

"नहीं, नहीं; मैं मेहनताना नहीं चाहती। मैंने यह काम रुपये की वजह से हाथ में नहीं लिया है। मैं तो मोहब्बत की वजह से चली आई हूं।" ऐसा कहकर नर्स ने मीनाक्षी के बच्चे को उठा लिया और कुछ देर तक वह उसे खेलाती रही।

फिर मीनाक्षी से नमस्ते कर उसने सब से विदा ली। जिस समय वह बातें कर रही थी, न जाने क्यों नटेश को अपनी पहली पत्नी की याद आ गई। लेकिन यह सोचकर कि मुझे ऐसी बातों का ध्यान नहीं करना चाहिए उसने अपने आपको शान्त किया।

५

"जब तुम घर में थीं तो क्या तुम्हें किसी ने पहचाना नहीं शान्ति देवी?" पाग्लूर अस्पताल के पादरी ने पूछा। शान्ति देवी लक्ष्मी का नया नाम था।

"अस्पताल के कपड़ों ने मुझे पहचाने जाने से बचा लिया। औरतों ने तो मुझे बिलकुल ही नहीं पहचाना। जिस लड़की के बच्चा हुआ था वह तो मुझे जानती ही नहीं और उसके पति ने भी शिष्टता के कारण मेरी तरफ ध्यान से नहीं देखा। आखिरी दिन उसे कुछ शक हुआ था, लेकिन मैंने साड़ी का पल्ला अच्छी तरह मुंह पर खींच लिया और इस तरह मैं पहचाने जाने से बच गई।"

"बहुत खूब! तो क्या तुम्हारे मन में शान्ति है?"

"हां मेरा मन सचमुच शान्त है। बीमारों की सेवा करने से मुझे खुशी होती है। अगर आप मुझे नदी से बाहर नहीं निकालते तो मैं भूत बन जाती है, जैसा कि ग्वाले के लड़के ने कहा था।"

पादरी हंसा। "भूत-प्रेत कुछ नहीं होता। ये सब बेवक़ूफ़ी की बातें है। तुम खुशी तो हो?" उसने पूछा।

"मैं खुश तो नहीं हूं, लेकिन मेरे चित्त में शान्ति है। मेरे लिए यही काफ़ी है। भगवान् और आप मेरी रक्षा के लिए कम नहीं हैं।

"क्या तुम अपने पति के पास जाने को राज़ी हो? मैं उसे सब बातें बताकर मामला तय करा सकता हूं," पादरी ने कहा।

"नहीं पिता, वह भोली लड़की खुश है; मैं वहां क्यों जाऊं?"

"अगर तुम अपने पति के पास जाना नहीं चाहती तो फिर बपतिस्मा लेकर हम लोगों में मिल कर क्यों नहीं यहां रहती?" बूढ़े पादरी ने पूछा।

"हनुमान जी नाराज़ होंगे" लक्ष्मी बोली और हंस पड़ी।

६

अगली दीवाली पर शान्ति देवी अपने थैले में एक पाकिट पटाखों का, एक डिब्बा मिठाइयों का और कुछ फूल रखकर मीनाक्षी के गांव गई।

"कमला मैं तेरे लिए पटाखे लाई हूं," शान्ति देवी ने कहा। लड़की ने पहचान लिया कि यह वही मौसी है जो छोटे भइया के होने में मा की देखभाल करने आई थी। उसने पटाखे और मिठाइयां ले लीं और

अपने बालों में फूल लगवाने के लिए वह लक्ष्मी की ओर पीठ करके खड़ी हो गई। लक्ष्मी ने उसके बालों में फूल खोसकर उसे प्यार किया।

"यह नर्स तो बड़ी भली मालूम होती है" मीनाक्षी ने अपनी सास से कहा।

नटेश के घर आते ही पार्वती ने उससे कहा—"अस्पतालवाली नर्स आई थी। वह कमला को मिठाई और पटाखे दे गई और बिना किसी से मिले ही चली गई।"

: १० :

देवयानी

रामनाथ अपनी पत्नी सीतालक्ष्मी के साथ कार में बैठकर चीना बाज़ार गये। ख़रीदारी ख़तम करने के बाद दोनों ने पास के एक होटल में चाय पी और फिर वे कार में आ बैठे।

"चलो, समुद्र-किनारे चलें," रामनाथ ने कहा।

"हां चलिये, लेकिन ड्राइवर से कह दीजिये कि कार ऐसी जगह रोके जहां भीड़-भक्कड़ न हो। मुझे भीड़ अच्छी नहीं लगती। देखिये, फेरीवाला खिलौने बेच रहा है, बच्चों के लिए दो-चार ख़रीद लीजिये।"

सीतालक्ष्मी की बात पूरी भी नहीं हो पाई थी कि खिलौनेवाला उसका मतलब भांपकर कार के पास आगया। खिलौने पसंदकर वे कार में ही बैठे-बैठे मोल-भाव कर रहे थे कि कार के दूसरे दरवाजे की ओर एक युवती भिखारिन गोदी में एक छोटा-सा बच्चा लिये आई और बच्चे को आगे कर बोली—"बाबूजी, इस नन्हे बच्चे पर दया करो।"

"ये सब जापानी खिलौने हैं न ?" रामनाथ ने खिलौनेवाले से पूछा।

"जी हां, भला हमारे देश में ऐसी चीजें बन सकती है ?" खिलौने-वाले ने उत्तर दिया।

भिखारिन ने फिर गिड़गिड़ाना शुरू किया।

"हम खिलौने खरीद रहे हैं और वह बला आकर हमारे पीछे पड़ गई। भीख मांगने का रोग दिन-पर-दिन बढ़ता जा रहा है," सीतालक्ष्मी बोली।

"बाबूजी, मैं भूखी हूं। बच्चे पर दया करो, भगवान् तुम्हारा भला करेगा।',

"जाती है या बुलाऊं पुलिस को ?" सीतालक्ष्मी ने धमकाया।

"बच्चा दूध के लिए रो रहा है, मा जी! एक इकन्नी दे दो, तुम्हारे लिए कोई बड़ी बात नहीं है"

रामनाथ ने खरीदे हुए खिलौने कार के अन्दर रख लिये और शोफर से समुद्र-किनारे चलने को कहा।

शोफर ने भिखारिन से एक तरफ हटने के लिए कहकर कार चला दी।

भिखारिन दरवाजा पकड़े थोड़ी दूर तक साथ-साथ दौड़ने की कोशिश करती रही और चिल्लाती रही—"बाबूजी, बाबू साहब।"

"हट, हट, नहीं तो दब जायगी," रामनाथ ने चिल्लाकर कहा। उस समय उन्हें भिखारिन को गौर से देखने का मौका मिला और ऐसा लगा मानो इसे कहीं देखा है।

जब कार तेजी से चल दी तो वह बोले—'बेचारी लड़की! यह तो हमारे गांव की दिखाई देती है।"

"कहीं से भी आई हो, हमें क्या।" जरा इस खिलौने को दिखाना, यह तो नई तरह का मालूम होता है। यह तो हवाई जहाज है? क्या चाबी लगाने पर चलेगा?" सीतालक्ष्मी ने पूछा और वह एक-एक खिलौना उठाकर देखने लगी।

२

सेलम जिले के पोन्नम्मापेट नाम के कस्बे में पेरिमन्न मुदलियली में जुलाहे का एक गरीब परिवार रहता था। वैयापुरी तीस वर्ष का था और उसकी क्वारी बहिन देवयानी बीस वर्ष की। उनकी मा का नाम पलनि था। वे करघे पर कपड़ा बुनकर अपनी जीविका चलाते थे और यही उनका खानदानी पेशा था। वे तीनों आदमी सारे दिन मेहनत करके हफ्ते में कुल मिलाकर चार रुपये कमा पाते थे।

धीरे-धीरे करघे का काम ठंडा पड़ता गया और साथ-ही-साथ मजदूरी भी कम होती गई। कुछ दिनों बाद बहुतों को इतनी भी मजदूरी मिलनी बंद हो गई। सेलम में वैयापुरी के अलावा बहुत-से और लोगों के करघे भी बंद हो गये। देवयानी को दो ब्राह्मण अफ़सरों के घर मकान के सामने के हिस्से को झाड़ने-बुहारने और पानी-गोबर से लीपने का काम मिल गया। उसे और भी छोटे-छोटे काम करने पड़ते थे और इनके लिए तीन रुपया महीना मिलता था। उसकी मा एक दूसरे घर में यही झाड़ने-बुहारने का काम करके एक रुपया महीना पाती थी। वैयापुरी कपड़े के व्यापारियों के पास काम की तलाश में चक्कर काटता फिरा, लेकिन उसे कोई काम नहीं मिल सका। निराश होकर वह बिना अपनी मा से कहे-सुने बंग्लूर चला गया। कुछ दूसरे जुलाहे भी वहांकी बड़ी मिल में काम मिलने की आशा से उसके साथ-साथ गये।

कुछ दिनों तक मारे-मारे फिरने के बाद वैयापुरी ने लिखा कि मुझे एक मिल में नौकरी मिल गई है। वह कुछ लिखना-पढ़ना जानता था। क्योंकि जब वह छोटा था तो उसके बाप ने उसे पोन्नम्मापेट के म्युनिसिपल स्कूल में भरती कर दिया था। उन दिनों जुलाहों की दशा इतनी दयनीय नहीं थी।

"बहुत-से लोगों की जेब भरने के बाद मुझे एक मिल में जगह मिल गई है। रोज आठ आने मिलते हैं और एक महीने में छब्बीस दिन काम होता है। इसलिए मुझे एक महीने में तेरह रुपये मिला करेंगे। खाने-पीने का खर्च निकालकर और कुछ कर्ज चुकाने के बाद मैं दो रुपये बचा-कर हर महीने तुम्हारे पास भेजा करूंगा। बाकी के लिए भगवान् मालिक है," वैयापुरी ने अपने पत्र में लिखा, जिसे एक पड़ोसी के लड़के ने पढ़कर उसकी मा और बहिन को समझाया। बूढ़ी मा और देवयानी बड़ी प्रसन्न हुई।

दस दिन बाद दूसरा पत्र आया। उसमें लिखा था—"मा को मेरा प्रणाम! भगवान् की दया से मैं यहां पर कुशलपूर्वक हूँ। उम्मीद है तुम

और देवयानी भी अच्छी तरह होगी। मिल का काम मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लगता। जब मुझे याद आता है कि अपने घर में करघे पर काम करके मैं कैसे सुख से दिन बिताया करता था तो मुझे रोना आ जाता है। मुझे ऐसा लगता है कि मैं यहां पागल हो जाऊंगा। मेरा सिर चकरा रहा है और मुझे यहां इतना दुःख और रंज है कि क्या कहूं। मुझे ताज्जुब होता है कि मैं सेलम से क्यों चला आया। पड़ोस में रहनेवाले लड़के से लिखवाकर चिट्ठी भेजने की कोशिश करना। पता यह है—सेलम पोन्नम्मापेट वैयापुरी कुली लाइन, मल्लेश्वर।"

३

जिन दो घरों में देवयानी झाड़ने और पानी छिड़कने का काम करती थी उसमें-से एक घर एक सरकारी पेन्शनर का था। उसकी पत्नी बड़ी नेक और दयालु थी। देवयानी से काम तो वह कसकर लेती थी, लेकिन और बातों में उसके प्रति दया दिखलाती थी। उसने देवयानी को एक पुरानी साड़ी दे दी थी और घर में खाने के बाद जो दाल-चावल बचता था वह भी उसे मिल जाता था। कुछ दिन इसी तरह बीत गये, लेकिन शायद भगवान् से उसका इतना सुख भी नहीं देखा गया। घर का रसोइया जो उसे बचा हुआ खाना दिया करता था, उससे प्रेम जताने लगा। एक दिन उसने उससे बहुत बुरी तरह छेड़खानी की।

देवयानी की आंखों में खून उतर आया, लेकिन शर्म के मारे उसने किसीसे कुछ कहा नहीं। किसीसे कहना मत, मैं हर महीने तुझे दो रुपये दिया करूंगा," बदमाश ने कहा।

अपना रंज रोककर देवयानी घर गई और मा से बोली—"अम्मा, मैं उस नीम के पेड़वाले मकान में अब काम नहीं करूंगी।"

जब मा ने इसका कारण पूछा तो शर्म से उसका चेहरा लाल हो गया। उसने सारी बातें बता दीं, जिस पर उसकी बूढ़ी मा यह कहती हुई उठी—"मैं घर की मालकिन से अभी जाकर सब बातें कहती हूं।"

"जाने दो अम्मा! क्या फायदा इससे? मुझे वहां अब काम तो करना

नहीं है," देवयानी ने उससे कहा।

मा-बेटी ने दूसरी जगह काम ढूंढ़ना शुरू किया. लेकिन वे जहां भी जाती वहीं मालूम होता कि कोई पहले से ही लगा हुआ है। दो महीने तक इसी तरह टक्करें खाने के बाद उन्हें काम मिला।

छः महीने बीत गये। जिस मिल में वैयापुरी काम करता था, उसमें मज़दूरों ने हड़ताल कर दी। वहां के अंगरेज़ मैनेजर ने एक मिस्त्री को पीट दिया था और बाद में उसे और कुछ दूसरे मज़दूरों को नौकरी से अलग कर दिया था। मज़दूरों ने एक सभा की और महीने पर तनख्वाह लेने के बाद काम बन्द कर दिया। वैयापुरी को भी हड़ताल में साथ देना पड़ा।

हड़ताल एक महीने तक रही। मज़दूरों ने सभाएं कीं और शुरू-शुरू में तो बड़ा उत्साह दिखाई दिया, लेकिन जब गांठ का रुपया खर्च हो लिया तो जोश ठंडा पड़ गया। अन्त में समझौता हुआ और मज़दूर फिर काम करने लगे। एक हफ्ते बाद दरवाज़े पर एक नोटिस चिपका हुआ मिला। उसमें पच्चीस आदमियों के नाम थे, जो नौकरी से हटा दिये गये थे और जिन्हें मिल के इलाके में कदम न रखने की आज्ञा दी गई थी। उसमें वैयापुरी भी एक था।

"मैं बिलकुल बेकसूर हूं। मैं तो नया आदमी हूं। मेरा इन बातों से क्या वास्ता?" वैयापुरी ने मिस्त्री से शिकायत करते हुए कहा।

"मैनेजर का यही हुक्म है। यह काम उस बदमाश टाइमकीपर रंगस्वामी नायक का है। उसी ने दूसरों के साथ तुम्हारा नाम भी भेजा था। मैं इस मामले में कुछ नहीं कर सकता," मिस्त्री ने जवाब दिया।

वैयापुरी ने रंगस्वामी नायक के पास जाकर हाथ जोड़ें, लेकिन उसने कहा — "मैं कुछ नहीं जानता। यह खजानेवाले क्लर्क का काम है।" मतलब यह कि किसी ने वैयापुरी की सहायता नहीं की और अंत में मैनेजर ने कहा—"तुम लिखना-पढ़ना जानते हो, तुमने ही दूसरों को भड़काया होगा; मैं तुम्हें वापस नहीं ले सकता।

बहुत दिनों तक ठोकरें खाने और पास की कौड़ी-कौड़ी खर्च कर चुकने के बाद वैयापुरी बड़ी कठिनाई से मद्रास पहुंचा। नौकरी से अलग किये गये पच्चीस आदमियों में-से भी दस आदमी उसके साथ-साथ नौकरी की तलाश में मद्रास गए। उनके पास जितना भी रुपया था, उन्होंने एक जगह इकट्ठा कर लिया और उसी से गुजारा करते हुए वे नौकरी के लिये एक मिल से दूसरी मिल में गिड़गिड़ाते फिरे। कुछ दिनों बाद वैयापुरी को एक मिल में काम मिल गया।

ड्योढ़ीवान और मिल के दूसरे छोटे-छोटे अफ़सरों की मुट्ठी गरम करने के लिए वैयापुरी को पांच रुपयों की जरूरत थी। इसके लिए और खाने-पीने में जो कर्ज़ हो गया था उसे चुकाने के लिए उसने अपनी सोने की मुरकियां गिरवी रखकर रुपये उधार लिये। अपने दुःख को भुलाये रखने के लिए उसने थोड़ा नशा भी करना शुरू कर दिया, गोकि सेलम में रहते हुए उसने कभी शराब छुई भी नहीं थी। कुछ मित्रों के यह समझाने पर कि जुए से काफ़ी रुपया कमाया जा सकता है यह जुआ भी खेलने लगा। खाने और कोठरी का किराया देने के बाद उसके पास जो कुछ बचता उसे यह घर न भेजकर इन बातों में खर्च करने लगा। स्वभावतः पठान से लिया हुआ कर्ज़ बढ़ता गया और इन परेशानियों को भूलने के लिए वह ज्यादा नशा करने लगा।

पहले तो उसने घर रुपये न भेज सकने के लिए बहाने लिख-लिखकर भेजे। बाद में उसने लिखा कि अब मैं घर रुपये नहीं भेज सकता, अगर देवयानी चाहे तो मद्रास जाकर किसी मिल में नौकरी कर ले। इस पत्र को सुनकर देवयानी और पत्तनि का दिल टूट गया।

बहुत दिनों तक सब्र के साथ दुःख और परेशानी उठाते-उठाते एक दिन देवयानी बोली—"मा, मैं मद्रास क्यों न चली जाऊं? मैं काम करूंगी और वैयापुरी की तरह रुपये कमाकर कुछ तुम्हें भेजने की कोशिश करूंगी। मैंनें सुना है कि मद्रास की मिलों में बहुत-सी औरतें काम करती हैं।"

पहले तो मा इस बात के लिए राजी नहीं हुई और कुछ दिनों तक कहती रही कि ऐसी बात कैसे हो सकती है, जवान और अकेली औरतें किस तरह ऐसी जगह काम करने के लिए जा सकती हैं, लेकिन अखिरकार वह मान गई। देवयानी ने एक पड़ोसी के यहां अपने सोने के बुन्दे गिरवी रख दिये और उससे बारह रुपये उधार लेकर वह मद्रास के लिए चल दी।

४

वैयापुरी ने देवयानी को मद्रास की एक मिल में सूत कातने के विभाग में नौकरी दिलवा दी उसमें डेढ़ सौ औरतें काम करती थी जिनमें से बहुत-सी अवस्था में देवयानी से भी छोटी थीं। देवयानी और दस दूसरी औरतों को एक मेठ के नीचे काम करना पड़ता था। शुरू-शुरू में उसने देवयानी के साथ बड़ी दयालुता दिखाई। लेकिन कुछ ही दिनों बाद वह उसे डांटने-डपटने लगा और फिर उससे बड़ी आज़ादी से बातचीत करने लगा, खासतौर से जब वह अकेली मिल जाती।

देवयानी ने अपने साथ काम करनेवाली एक स्त्री से पूछा—"इसका क्या मतलब, बहिन ! यह मुझसे इस तरह की बातें क्यों करता है ?"

तुम इतना भी नहीं समझीं ? गांव की हो न ! अगर तुम उसे खुश नहीं करोगी तो तुम्हारी आधी मजदूरी जुरमानों में कट जायगी और अगर वह खुश रहेगा तो तुम्हें बहुत तरह के आराम देगा," उस औरत ने हंसते हुए कहा।

कुछ दिनों तक देवयानी यह सब सहती रही। धीरे-धीरे उसका परमेश्वर पर से विश्वास उठने लगा और उसने मेठ का विरोध करना छोड़ दिया। उसने अपना मस्तिष्क परिस्थिति के अनुकूल बना लिया और वह उससे घुलमिलकर बातें करने लगी। जल्दी ही उसे इन बातों में आनन्द आने लगा और उसकी मजदूरी बढ़ गई।

कुछ महीने बीतने पर देवयानी को पता चला कि मैं मा बनने वाली हूं। वह बड़ी डरी और जितने भी देवी-देवताओं के नाम जानती

थी उन सब की प्रार्थना करने लगी। "हाय, अब मैं किससे कहूं ?" उसने मन-ही-मन में सोचा। उसका चित्त बड़ा उद्विग्न हुआ और वह भय के मारे थर्रा उठी, ठीक वैसे ही जैसे जंगल में शिकारियों से पीछा किये जाने पर हिरनी कांपने लगती है। उसे अपने भाई वैयापुरी से कहते हुए डर लगता था। साथ में काम करनेवाली कुछ लड़कियों को इस बात की खबर थी, लेकिन वे उसका मजाक उड़ाया करती थीं और हंसती थीं। उसने सोचा कि गांव चली जाऊं, लेकिन वह जानती थी कि वहां जाने पर अपमान होगा और मैं बिरादरी से निकाल दी जाऊंगी। अपनी मा का ध्यान आते ही उसने वहां का विचार बिलकुल छोड़ दिया। अंत में उसने अपने को भगवान् के ऊपर छोड़ दिया और वह मिल में काम करती रही।

लेकिन जल्दी ही उसे फिर बड़ी घबराहट होने लगी—"हाय, अब मैं क्या करूँगी ? मैंने अपने कुल को कलंक लगा दिया।"

"घबरा मत, देवयानी ! ऐसा तो हम सबको होता है। इसके लिए एक दवा होती है जिसके पीने से तेरी सारी चिन्ता दूर हो जायगी," उसकी एक सहेली ने तसल्ली देते हुए कहा।

"मैंने उसके बारे में सुना तो है, लेकिन मुझे डर लगता है कि कहीं मर न जाऊं। हे भगवान् मैं कहा जाकर अपना पाप छिपाऊं ?" देवयानी रोकर बोली।

उसकी सहेली ने कहा--"कहीं से दो रुपये ले आ। मुत्तुस्वामी आचारी गली में एक औरत रहती है, वह तू जो चाहती है कर देगी।"

"अगर पुलिस को खबर हो गई तो वह मुझे जरूर पकड़ लेगी।"

"इसकी फ़िक्र मत कर, पुलिसवालों से उसका बड़ा मेलजोल है। तुझे मालूम होना चाहिए कि रुपये से सब कुछ हो सकता है।"

"रुपये के लिए मैं किसके पास जाऊं ? हे भगवान्, तूने तो मुझे छोड़ ही दिया। मैं इस कमबख्त शहर में आई ही क्यों ?" यह कहकर देवयानी रोने लगी।

कुछ दिन बाद एक दूसरी औरत ने उसे दूसरी सलाह दी—"तुझे अपने बच्चे को मारना नहीं चाहिए। इस पाप का फल तुझे तीन जन्म तक भोगना पड़ेगा। गणेश मंदिरवाली गली में एक बुढ़िया रहती है। वह बड़ी नेक औरत है। अगर तू उसके पास चली जायगी तो वह सारी बातों की देखभाल कर लेगी। तेरी तरह बहुत-सी औरतें उसके घर ठहर चुकी हैं और सही सलामत निबट आई हैं।"

देवयानी ने उसे धन्यवाद दिया और कहा —"भगवान् तुम्हें सुखी रखे, बहिन।" वह गणेश मंदिरवाली गली में उस उदार बुढ़िया के पास चली गई। समय पर प्रसव हुआ और बच्चे के कोमल स्पर्श ने देवयानी की दुनिया ही बदल दी। उसे ऐसा मालूम हुआ मानो किसी ने जादू कर दिया है। उस बच्चे में उसका सारा संसार समा गया।

वह अपने बच्चे को उठाती और छाती से लगाकर कहती यह फूल मुझे भगवान् ने दिया है। इसका क्या दोष, पापिन तो मैं हूँ।" सब दुखों को भूलकर वह कुछ दिनों तक सुख से रही।

"तुम अभी काम पर जाने लायक नहीं हो। तुम्हें अभी कुछ दिन तक यहां और ठहरना होगा," गणेश मंदिरवाली गली की उदार स्त्री बोली।

देवयानी ने भगवान् को बहुत-बहुत धन्यवाद दिया और मन में सोचा —"जिस दुनिया में ऐसे अच्छे आदमी मौजूद हैं, उसे गालियां देना मेरे लिए कितना गलत था!"

एक महीने बाद देवयानी को असली बात का पता चला। वह बूढ़ी औरत उन असहाय अभागिनों से, जो धोखेबाज मर्दों के चंगुल में फंस जाती थीं, दुष्कर्म कराया करती थी। देवयानी फंस गई और मिल में फिर से काम करने नहीं गई।

५

"क्या तुम्हें उस लड़की देवयानी की याद है जो सेलम में हमारे घर काम करती थी? वह भिखारिन उसी-जैसी दिखाई पड़ती थी," रामनाथ ने कहा।

रामनाथ सेलम के उस पेन्शनर के सबसे बड़े लड़के थे जिसके घर जाकर देवयानी ने पहले-पहले काम किया था। वह मद्रास के एक बड़े बैंक में खजांची थे।

"आप तो सपना देख रहे हैं; भला सेलम की लड़की यहां कैसे आ सकती है?" सीतालक्ष्मी बोली।

"यह बड़े शर्म की बात है कि ऐसी लड़कियां भीख मांगने के लिए सद्योजात बच्चों को गोद में लिये सड़कों पर फिरती हैं। हमारे देश की कैसी दशा हो गई है?" रामनाथ ने कहा।

"आप हमेशा देश की ही बात सोचते रहते हैं। क्या अपने घरबार की ही फिक्र कर लेनी काफी नहीं है।" उनकी पत्नी ने पूछा।

रामनाथ दूसरे दिन भी शाम तक उस भिखारिन को भूल न सके। वह दफ्दर से सीधे चीना बाजार चले गये, इस उम्मीद में कि अगर वह फिर मिल जाय तो उसकी बात पूछूं। रामनाथ बाजार में एक कोने से दूसरे कोने तक कार लेकर गये और उस दिनवाले होटल के सामने रुक-कर कुछ देर प्रतीक्षा करते रहे। बहुत-से भिखारी आये और उन्हें घेर कर "बाबू साहब, बाबूजी" चिल्लाते रहे, लेकिन वह नहीं आई।

शनिवार की शाम को रामनाथ और उसकी पत्नी फिर चीना बाजार पहुंचे।

"देखिये, वह रही आपकी भिखारिन," सीतालक्ष्मी ने कहा।

हां, वह भिखारिन थी। अपने बच्चे को लिए हुए वह किसी की कार के पास जा रही थी और कह रही थी—"माजी, एक इकन्नी दे दो, इस बच्चे का खयाल करो।"

उसने रामनाथ की कार और उसमें बैठे हुए आदमियों को देख लिया था; लेकिन वह उसे छोड़कर दूसरी कार के पास चली गई थी क्योंकि वह जानती थी कि इनसे मुझे कुछ नहीं मिलेगा। भिखारी लोग अपने अनुभवों से ही निर्णय करना सीख लेते है। चतुराई और समझ की गुंजाइश तो हर काम में होती है।

रामनाथ को इतना साहस नहीं हुआ कि वह स्वयं जाकर भिखारिन को पुकारे। कुछ देर तक वह इस प्रतीक्षा में रहे कि शायद वह बाद में हमारी कार के पास आये। लेकिन वह भीड़ में गायब हो गई और फिर दिखाई नहीं दी।

"अब चलिए," सीतालक्ष्मी ने कहा।

आठ दिन बाद रामनाथ और सीतालक्ष्मी सिनेमा देखने गये। कहानी वही पुरानी राजा नल की थी। दरवाजे के सामने बहुत भीड़ थी। दमयन्ती का काम नई स्टार धनभाग्य कर रही थी।

"सारी सीटें भर गईं। अब एक भी जगह नहीं रही।" तख्ती पर यह लिखा हुआ देखकर रामनाथ ने कहा—

"तो चलो' घर चलें, दूसरे शो में आ जायेंगे।"

सीतालक्ष्मी के उत्तर देने से पहले ही कोई कार के दरवाजे के पास आकर चिल्लाया—"माजी, कुछ भिक्षा मिले।"

रामनाथ यह देखने को मुड़े कि सेलमवाली लड़की तो नहीं है। उन्हें उसके लिए एक वैराग-सा हो गया था, लेकिन वह कोई दूसरी भिखारिन थी।

"अगर हम यहां कार रोके रक्खेंगे तो भिखारी हमें तंग करेंगे। राम नायर, जल्दी से घर ले चलो," सीतालक्ष्मी ने शोफ़र से कहा।

उसी समय एक पुलिसवाले ने आकर अपना डंडा घुमाया और भिखारिन को भगा दिया।

उस रात रामनाथ ने भिखारिन को देखा, लेकिन स्वप्न में।

"तुम देवयानी? कहां से आई हो?" रामनाथ ने पूछा।

औरत ने उन्हें आंखें फाड़कर देखा और खुश होकर पूछा—"आप सेलमवाले बाबूजी के लड़के हैं न, जो नीम के पेड़वाले मकान में रहते थे?"

"नायर, उससे कहो सामनेवाली गद्दी पर बैठ जाय," उन्होंने ड्राइवर से कहा। घर पहुंचने पर उनकी पत्नी बोली—"इस कमबख्त को यहां क्यों ले आये?"

"हम इसे अपने यहां नौकर क्यों न रख लें ? चार रुपये महीना और खाना दे दिया करेंगे," वह बोले।

"क्या ही अच्छा ख़याल है आपका ! पतित स्त्रियों को घर में रखना भी क्या कोई बुद्धिमानी की बात है ? निकल यहां से," सीतालक्ष्मी ने कहा और भिखारिन को बाहर निकाल दिया।

"मैं चोरी नहीं करूंगी और आप जो हुक्म देंगी वही करूंगी," उस दुःखी स्त्री ने गिड़गिड़ाते हुए कहा।

"यह कभी नहीं हो सकता, निकल जा मेरे घर से," सीतालक्ष्मी ने जवाब दिया।

रामनाथ ने उसे एक रुपया देने के लिए बटुआ निकालने को जेब में हाथ डालना चाहा; लेकिन न तो वह अपना हाथ हिला सके, न उनका हाथ बटुए तक पहुँच ही सका। भिखारिन का बच्चा जोर-जोर से रोने लगा।

रामनाथ की नींद टूट गई। यह सब सपना था; उसकी अपनी लड़की राधा पलंग पर बैठी-बैठी रो रही थी।

"भगवान् को धन्यवाद है, सीतालक्ष्मी इतनी निष्ठुर नहीं हो सकती थी; यह केवल सपना था।" अपने मन में यह सोचकर रामनाथ प्रसन्न हुए।

इसके बाद बहुत दिनों तक रामनाथ देवयानी को बाजार में, रेलवे स्टेशन पर; सिनेमा में, हर जगह खोजते रहे; लेकिन वह उन्हें फिर दिखाई नहीं दी।

: ११ :

चुनाव

कोट्टूर जिले के इसी नाम के सबसे बड़े कस्बे में हरिजनों का एक मोहल्ला है जो पहले कट्टांचेरी कहलाता था ; लेकिन अब पिछले चार वर्ष से जेम्सपेट कहलाने लगा है। उसी मोहल्ले में सीरंग नाम का एक हरिजन रहता था। वहां के करीब तीस अछूतों में अकेला वही ऐसा था जो अपना पेट अच्छी तरह पाल लेता था। जेम्सपेट के निवासी अधिकतर कुली थे जो सोनाई के पहाड़ के बगीचों में रोज की मजदूरी पर काम कर अपनी जीविका चलाते थे। सीरंग कुलीगीरी नहीं करता था ; वह कोट्टूर और पास के दूसरे बाजारों से चीजें खरीद कर लाता था और कॉफी के बगीचों में के यूरोपियन मालिकों के यहां थोड़े-से मुनाफे पर बेच देता था। इस तरह वह अच्छी-खासी रकम पैदा कर लेता था। पहाड़ के सभी स्त्री-पुरुष उससे दयालुतापूर्वक व्यवहार करते थे और उसपर विश्वास करते थे।

ठेकेदार सीरंग की ईमानदारी और अच्छी आदतों की खबर कोट्टूर के कलक्टर को भी मिल चुकी थी। जब म्युनिसिपल बोर्ड में हरिजन मेंबर की जगह खाली हुई तो पुलिस सुपरिंटेंडेंट, जिला के मेडिकल अफसर और लन्दन मिशन के पादरी ने अंगरेजी क्लब के खानसामा स्वामिप्रिय को उस जगह पर नामज़द करने के लिए कलक्टर पर जोर डाला ; लेकिन कलक्टर की पत्नी ने इस प्रस्ताव का विरोध किया और कहा कि पहाड़

पर रहनेवाली सब अंगरेज औरतें सीरंग ठेकेदार के पक्ष में है, इसलिए इस जगह पर उसीको नियुक्त करना चाहिए। स्वभावतः वह अपने पति को यह समझाने में सफल हो सकी कि जो कुछ मैं कह रही हूँ वही ठीक है।

"आप लोग नहीं समझते कि अगर हम क्लब के चपरासी को नामज़द करेंगे तो शहर के देशभक्त इसके विरुद्ध आन्दोलन करेंगे और उपद्रव उठायेंगे। हमें होशियारी से काम करना चाहिए," कलक्टर ने दूसरे अफ़सरों को समझाते हुए कहा और इस प्रकार उसकी आपत्तियों का समाधान करते हुए सीरंग का नाम पेश कर उसे नामज़द करा दिया।

सीरंग की समृद्धि उसी समय से कम होने लगी। अब वह बड़ा आदमी बन गया था। कलक्टर और बड़े-बड़े अफ़सर उससे हाथ मिलाते और बातचीत करते थे। अब उसने अपने कारबार की ठीक तरह से देखभाल करनी छोड़ दी थी। चीजें खरीदने के लिए खुद न जाकर वह अब अपने भतीजे वरद को भेजता था। पहाड़ी पर वह दिन में केवल एक बार जाता था और अपने बदले ज्यादातर भतीजे को ही भेज देता था। उसे वह अपने मुनाफे में-से हिस्सा देता था।

जैसे-जैसे सीरंग का ध्यान अपने व्यापार की ओर से कम होता गया वैसे-वैसे मुनाफ़ा भी कम होता गया। उसे अब अपने परिवार के खर्च के लिए रुपया नहीं बचता था, इसलिए वह बाग़वानों की पत्नियों से पेशगी मिला हुआ रुपया खर्च करने लगा। यह सोचकर कि यह हमारा पुराना और ईमानदार ग्राहक है और अब म्युनिसिपल कौंसिलर के पद पर है, दूकानदार उसे उधार देते थे। लेकिन अब सीरंग को औरतों को हिसाब देते समय कुछ झूठ बोलना पड़ता था। व्यापार में जब कोई बेईमानी करने लगता है, चाहे वह कम हो या ज्यादा, तो उससे जल्दी ही उलझनें पैदा होने लगती है और अन्त में व्यापारी सदा के लिए नष्ट हो जाता है। यही बात सीरंग के साथ हुई। उसने पहले जो मान पाया था उसे अब

वह खो बैठा। पहले लोग कुछ तो हंसी में और कुछ गम्भीरता के साथ-कहा करते थे कि सीरंग सबसे ज्यादा ईमानदार कौंसिलर हैं, लेकिन अब उनका यह कहना भी बंद हो गया।

२

म्युनिसिपैलिटी के चेयरमैन गोपाल चेट्टियार की एकाएक मृत्यु हो गई और उनकी जगह दूसरे आदमी के चुनाव के लिए तैयारियां होने लगीं। एक ओर तो सूत के बड़े व्यापारी धनपाल चेट्टियार खड़े हुए और दूसरी ओर वकील रामस्वामी मुदलियार उनके विरोध में उठे। एक महीने तक बाज़ार में और वकीलों के बीच बस इसी चुनाव की चर्चा रही।

रायों के लिए दौड़धूप शुरू हुई। चुनाव की तारीख निश्चित होने से चार दिन पहले सुनाई जड़ा कि रुपया पानी की तरह बहाया जा रहा है। कुछ ने कहा कि चेट्टियार ने हर मेम्बर के वोट के लिए एक-एक दो-दो हज़ार रुपये लगाये हैं। यह बात कुछ अंशों में ठीक थी और कुछ अंशों में ग़लत भी। रामस्वामी मुदलियार ने बिल्कुल साफ़ तौर पर कह दिया कि मैं इस तरह की चालें नहीं चलूंगा। इससे उनके मित्रों का उत्साह ठंडा पड़ गया। उनकी सलाह न मानकर मुदलियार अपने इरादे पर दृढ़तापूर्वक जमे रहे।

चुनाव सोमवार की सुबह आठ बजे होनेवाला था। एक दिन पहले इतवार की रात को आठ बजे मुदलियार के गाढ़े मित्र उनके घर पर जमा हुए।

"ठीक है; तुम्हारा तो कुछ नहीं बिगड़ेगा, लेकिन हम लोगों की नाक कट जायगी", सूंघनी के व्यापारी रंग पिल्लै ने कहा।

"इस हार के बाद हम कोट्टूर में नहीं रह सकते। हमें कहीं और चला जाना पड़ेगा," सीतारामैयर दूकानदार बोले।

मुदलियार ने कोई जवाब नहीं दिया।

सीतारामैवर ने फिर कहा—"तो इसका मतलब यह है कि हह

आदमी पब्लिक को बेईमान बनाता और म्युनिसिपैलिटी को बरबाद करता रहे और हम खड़े-खड़े तमाशा देखते रहें।"

"आजकल की बेईमानी को हम कहां तक रोक सकते हैं? पहले के चेयरमैन बड़े इज्जत वाले होते थे। आजकल तो ईमानदार आदमियों को कहीं कोई मौका ही नहीं है," मुदलियार ने कहा।

"मुदलियार साहब! जहर को जहर ही मारता है। आपको इस मामले में ज्यादा दिलचस्पी लेनी चाहिए। इस तरह की उदासीनता से काम नहीं चलेगा," वैद्य राघवाचारी बोले।

दो मिनिट बाद घड़ी ने नौ बजाये। "देखिये, घड़ी भी हमें अच्छा शकुन बता रही है; अब हमें वक्त बरबाद नहीं करना चाहिए?" यह कहते हुए सीतारामैयर खड़े हो गये और मुदलियार के कंधे पर हाथ रख कर उन्हें बड़ी मोहब्बत के साथ उनके दफ्तर में ले गये।

एक घंटे तक दोनों ने एकान्त में बातचीत की। तब सीतारामैयर मुस्कराते हुए बाहर आये और सभा को सम्बोधित करते हुए बोले—"सब कुछ ठीक है। काम पूरा हो गया। अब आप लोग जो कुछ जरूरी समझें करें। सब कुछ एक रात में ही करना है।" यह समाचार सुन सब खुशी से खिल उठे।

३

सारी रात मोटरें दौड़ती रहीं। दो बजे मुदलियार के घर खबर पहुंची कि पैंतीस मेम्बरों में-से सत्तरह उन्हें राय देने के लिए पक्के हो गये हैं। इनमें-से दस ने तो चेट्टियार के भेजे हुए रुपये लौटा दिये हैं और सात ने कहा है कि हम किसी और से भी रुपया नहीं लेंगे; लेकिन मुदलियार को अपनी राय अवश्य देंगे। बस एक राय और पक्की करनी रह गई थी। बाकी अठारह कौंसिलरों में-से एक किसी काम से नागपटन गया हुआ था और वह दूसरे दिन तक वापस नहीं लौट सकता था। सोलह रायें धनपाल चेट्टियार की पक्की थीं, उनमें से एक भी नहीं तोड़ी जा सकती थी। केवल सीरंग की राय बची थी और वह अनिश्चित थी।

चारों ओर ढूंढने पर भी अभी तक सीरंग का पता नहीं लगा था, मालूम हुआ कि वह पहाड़ी पर गया है।

"उसके छोटे भाई मास्टर मुनिस्वामी से भी पूछा?" सूंअनी के व्यापारी रंगपिल्लै ने कहा।

"हां, हम उसके पास गये थे। वह कभी कुछ कहता है, कभी कुछ। पहले उसने कहा कि शायद सीरंग पहाड़ी पर गया है, फिर बोला कि घर में ही कहीं छिपा है। परेशानी की इन बातों में भला गरीब आदमी अपने को क्यों फंसाय? उन्हें तो चतुराई से काम करना होता है। अगर वे एक के भले बनेंगे तो दूसरा उनसे बिगड़ जायगा।"

"ऐसा मालूम होता है कि एड़ी-चोटी का पसीना एक करने पर भी नतीजा कुछ नहीं निकलेगा" सीतारामैयर बोले।

"निराश होने से क्या फायदा?" यह कहते हुए रंगपिल्लै गुस्से में उठकर खड़े हो गये।

"तो तुम खुद ही क्यों नहीं कोशिश करके देखते?" सीतारामैयर ने ताना मारते हुए कहा।

"हम गरीबों का कौन विश्वास करेगा? हम अमीर थोड़े ही हैं," रंगपिल्लै ने उत्तर दिया।

"मुदलियार! सब कुछ रंगपिल्लै को ही करने दो; अब मैं कुछ नहीं करूंगा। मेरा अब इस मामले से कोई वास्ता नहीं।" सीतारामैयर ने कहा।

"यह झगड़ने का वक्त नहीं है," वीरराघव चेट्टियार ने कहा और सीतारामैयर को, जो उठकर खड़े हो गये थे, पकड़कर फिर उनकी जगह पर बैठा दिया। फिर वह मुदलियार के पास जाकर बोले—"हमें तो इस काम में हाथ ही नहीं डालना चाहिए था, लेकिन जब हमने एक बार काम उठा लिया है तो उसे कामयाबी के साथ पूरा करना चाहिए। हम जो कुछ चेष्टा करके पा रहे है उसे क्या मुँह से बोलकर खो दें? सीरंग का मामला रंग पिल्लै के सिपुर्द कर दो, आगे भगवान् मालिक हम जरूर जीतेंगे।"

मुदलियार भी उस समय जोश में थे। वह अन्दर गये। बक्स के

खुलने और बन्द होने की आवाज आई। मुदलियार हाथ में एक थैली लिये हुए बाहर निकले और रंगपिल्लै को साथ लेकर दूसरे कमरे में चले गये।

४

सूंघनी के व्यापारी रंगपिल्लै जेम्सपेट पहुंचकर मुनिस्वामी से मिले। उन्होंने बिना कुछ कहे-सुने कागज के पांच बंडलों में लपेटे हुए चांदी के सौ रुपये उसके हाथ पर रख दिये। मुनिस्वामी ने अपने जीवन में, कभी सपने तक में भी, इतने-सारे चांदी के रुपये एक साथ नहीं छुए थे। वह रंगपिल्लै की ओर टकटकी बांधकर देखता रहा। उसकी आंखों में पागलपन की-सी झलक थी।

रंगपिल्लै ने कहा—"बहुत-से आदमियों ने तुम्हें बुरा-भला कहा होगा। इन दिनों गरीबों की मदद कौन करता है और कौन उनपर विश्वास करता है? यह तो गरीब ही जानते है कि उन्हें कैसी-कैसी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। भाई। ये रुपये तुम्हारे हो चुके; हम जीतें चाहे हारें। मुझे सच-सच बता दो कि सीरंग कहां है?"

"मैं आपसे झूठ नहीं बोलूँगा। सीरंग को धनपाल चेट्टियार ने अपने अस्तबल में ताले में बन्द कर रखा है और बाहर पहरा लगा रखा है। आपको शायद पता नहीं कि उसने चेट्टियार से डेढ़ सौ रुपये उधार ले रखे हैं। वे कल उसे अपने साथ म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर ले जायंगे," अध्यापक मुनिस्वामी ने बताया।

अच्छा मुनिस्वामी सुनो; इस मामले में जैसा मैं कहूं वैसा करो। रुपये का कोई खयाल नहीं," रंगपिल्लै ने कहा।

थोड़ी देर तक वे कानाफूसी करते रहे। तब यह कहते हुए कि जरा ठहरिये, मुनिस्वामी घर के भीतर चला गया।

कुछ समय तक सीरंग की मा से बातचीत करने के बाद वह बाहर आया और चेरी मारिअम्मा मन्दिर के सामने वाली पत्थर की बेंच पर रंग-पिल्लै को बैठाकर और स्वयं उनकी गाड़ी पर चढ़कर धनपाल चेट्टियार के मकान की ओर चल दिया।

धनपाल चेट्टियार अपने घर की बरसाती में अपने मित्रों के साथ बेंच पर बैठे हुए थे। लालटेन की रोशनी में वह पेंसिल से कुछ लिख रहे थे। मुनिस्वामी गाड़ी से उतरकर चेट्टियार के पैरों में गिर पड़ा और बोला—"मालिक, इस वक्त आकर मैंने आपके काम में जो रुकावट डाली है उसके लिए माफ कीजिए। सीरंग की मा मर रही है; कह नहीं सकता कि वापस लौटने पर जिन्दा मिलेगी या नहीं। आप सीरंग को भेज दीजिये, वह अपनी मा से मिल आय।"

"एकाएक उस बुढ़िया को क्या हो गया है? यह सब गड़बड़घोटाला है। मालूम होता है मुदलियार ने तुम्हें यहां भेजा है," धनपाल चेट्टियार ने कहा।

"भगवान जानता है, मालिक! झूठ बोलकर हम बच थोड़े ही सकते हैं। बुढ़िया को सचमुच दस्त आ रहे हैं, वह बचेगी नहीं। उसे कल बीस दस्त आ चुके हैं और वह बेहोश पड़ी है। मैं हाथ जोड़ता हूं, किसी तरह मेरे भाई को भेज दीजिये, नहीं तो हमारी मा की आत्मा तड़पती रह जायगी," यह कहकर वह बड़े करुणाजनक ढंग से रोने लगा।

"अच्छी बात है। श्रीनिवासैयर, तुम सीरंग के साथ जाओ और देखकर आओ कि बात क्या है," चेट्टियार ने अपने क्लर्क से कहा।

"इसमें कोई चाल है। चेट्टियार तो सबपर विश्वास कर लेते हैं" किसी ने कहा।

क्लर्क श्रीनिवासैयर अन्दर गया और सीरंग को अस्तबल से निकाल कर पीछे के रास्ते गाड़ी के पास ले गया। मुनिस्वामी भी वहीं पहुंच गया।

"तुम सोच क्या रहे हो? गाड़ी में बैठ जाओ," धनपाल चेट्टियार ने कहा।

छुआछूत का विचार उस समय मिट गया था। चुनाव के कामों में इन बातों पर कैसे ध्यान दिया जा सकता! दोनों एक ही गाड़ी में सवार हो गये।

५

जेम्सपेट पहुंचकर जब गाड़ी सीरंग के घर के सामने ठहरी तो अन्दर से बड़े जोर से रोने की आवाज आई।

"बात तो सच मालूम होती है," श्रीनिवासैयर ने मन में सोचा और सीरंग से कहा कि घर में जाकर देखो, क्या बात है।

सीरंग और मुनिस्वामी अन्दर गये। थोड़ी देर बाद मुनिस्वामी बाहर निकला और ब्राह्मण के कान में यह कहकर कि प्राण निकल गये, फिर अन्दर चला गया।

"हाय, तुम तो चल बसीं, हाय तुम हमें छोड़ गईं, हमारा तो घर बरबाद हो गया," अन्दर से विलाप करने की आवाज आई।

श्रीनिवासैयर ने एक लड़के से, जो पास खड़ा उसे देख रहा था, पूछा—"इस घर में क्या हो गया है?"

"आपको नहीं मालूम? बुढ़िया को हैजा हो गया था; वह मर गई," लड़के ने जवाब दिया।

श्रीनिवासैयर के होश उड़ गये। एक तो अछूतों की बस्ती और दूसरे हैजा! उसने तय किया कि यहां रुकने से कोई लाभ नहीं। इतने में मुनिस्वामी भी बाहर आ गया और बोला—"बुढ़िया बेहोश है, साहब! न तो वह बोलती है, न उसे सांस आती है। शायद वह मर चुकी है। सीरंग की जिम्मेदारी मैं लेता हूं, आप जाइये।" ऐयर जल्दी-जल्दी घर की ओर चल पड़ा।

घर के अन्दर बुढ़िया ने इशारा करके अपने बेटे को अपने पास बुलाया। सीरंग अपना कान अपनी मा के मुँह के पास ले गया।

"मेरे बच्चे वे एक हजार रुपया देने को कहते हैं। इसे इन्कार नहीं करना चाहिए। पागलपन मत कर और बुढ़िया का कहना मान।"

"बात क्या है? क्या तुमने इसीलिए मुझे बुलाया है?" सीरंग बोला।

ओह!" मुनिस्वामी ने जोर से कहा और दूसरों ने भी उसका साथ दिया। वे सब-के-सब जोर-जोर से रोने लगे।

"मेरे बच्चे !" बूढ़ी औरत ने फिर कहा, "मुझे हैजा-वैजा कुछ नहीं हुआ है, लेकिन मुझे कुछ अजीब-सा लग रहा है। सूँघनी बेचनेवाला जो हज़ार रुपये लाया है वह ले लो और इस अभागे कारबार को बन्द कर दो। अपना कर्ज उतारकर भले आदमियों की-सी जिंदगी बिताओ। मुझे अब ज्यादा दिन जीना नहीं है।"

सीरंग भय, क्रोध और आश्चर्य से परेशान चुपचाप खड़ा रहा। घरवाले मुनिस्वामी के संकेत के अनुसार एक बार फिर "हाय, हाय" कर रो बैठे।

६

सीरंग आकर रंगपिल्लै के पास खड़ा हो गया। रंगपिल्लै ने कहा—"सीरंग, गाड़ी में बैठो। मुदलियार के घर पहुंचकर मैं तुम्हें सब बातें समझा दूँगा।" वे सब अन्दर बैठ गये और रंगपिल्लै ने कहना शुरू किया—"सीरंग, तुम बड़े भाग्यवान् हो। जब सारे आदमी इस तरह रुपया कमा रहे हैं तो तुम ही क्यों चूको? तुमने ही क्या कसूर किया है? इस मौके को हाथ से न जाने दो। बताओ, तुम क्या चाहते हो? उसे पूरा कराने की जिम्मेदारी मैं लेता हूं।" जबतक गाड़ी मुदलियार के घर पहुंची तबतक वह सीरंग से इसी तरह की बात करते रहे।

रंगपिल्ले ने जाकर मुदलियार से थोड़ी देर एकांत में बातचीत की। तब वह हाथ में एक कपड़े की पोटली लिए हुए सीरंग के पास आये। सीरंग बरामदे के बाहर बैठा था। पोटली उसके सामने रखते हुए रंगपिल्लै ने कहा—"देखो, इसमें इतना रुपया है जितना तुम जिंदगी भर काम करके भी नहीं कमा सकते। अपना सारा कर्ज चुका दो और कोई कारबार शुरू करो। मुदलियार तुम्हें इससे भी ज्यादा रुपया देंगे। वह इस बात का ध्यान रखेंगे कि तुम्हें किसी बात की कमी न रहे।"

सीरंग गूँगा बना बैठा रहा।

वीरराघव चेट्टियार ने पोटली उठाकर सीरंग की गोद में डाल दी और कहा—"उठो और शपथ लो। सब बात पक्की हो गई, अब किस सोच-विचार में पड़े हो?"

सीरंग ने पोटली अपनी गोद में से उठाकर एक तरफ़ जमीन में रख दी और एक मिनिट तक वह सोचने का बहाना करता रहा। सब लोग चुपचाप इस इन्तजार में रहे कि यह कुछ कहेगा।

लेकिन लोगों के देखते-ही-देखते वह कूदकर गली में भाग गया। कुछ आदमी उसके पीछे दौड़े, लेकिन वह इतना तेज भागा कि जल्दी ही सबकी आखों से ओझल हो गया। "चला गया," यह कहते हुए सब लोग वापस आ गये।

मुदलियार रुपयों की थैली उठा अंदर चले गये। उसे ताले में बंद कर वह लौटे और बोले—'देखा, बदमाश ने हमें कैसा धोखा दिया ?"

"अपनी नीच जाति का सबूत दिया है," सबने मिलकर कहा।

× × ×

दूसरे दिन चुनाव के समय सीरंग मौजूद नहीं था।

"उसकी मा मर गई," एक ने कहा।

"नहीं, नहीं, वह सब चाल थी ;" दूसरे बोले।

जो कौंसिलर नागपटन गया था वह लौट आया था और राय देने को तैयार था।

"धनपाल चेट्टियार को छब्बीस रायें मिलेंगी," किसी ने कहा।

"नही जी, दोनों को सत्तरह-सत्तरह मिलेंगी और एक निर्णायक राय होगी," दूसरे ने कहा।

"सब रुपये का खेल है," तीसरा बोला।

"वे रुपया भी लेंगे और बदमाशों को धोखा भी देंगे," एक और बोला।

अंत में धनपाल चेट्टियार को तेईस वोट मिले और मुदलियार को दस। एक कोरा कागज था। इस परिणाम को सुनकर बाहर भीड़ ने धनपाल चेट्टियार की जय पुकारी।

"बेईमानी," दूसरी तरफ़ के आदमियों ने चिल्लाकर कहा।

"ईमानदार तो सिर्फ़ सीरंग हैं," मुदलियार ने कहा।

: १२ :

देव-दर्शन

सुन्दर चेट्टियार एक बजाज था। थोड़ी-सी पूँजी से कारबार शुरू कर उसने अपनी ईमानदारी और चतुराई से जल्दी ही बहुता-सा धन कमा लिया था। उसकी पत्नी मीनाची बड़ी धर्मात्मा थी। वह जीवन के पुराने नियमों का पालन करती थी और हर महीने एकादशी के दिन कड़ा व्रत रखती थी। दोपहर को वह प्रतिदिन घर से बाहर जाकर पहले कौओं और चिड़ियों के लिए चावल फैला आती और उसके बाद स्वयं भोजन करने बैठती। चेट्टियार उसका बड़ा आदर करता था। उसे विश्वास था कि मेरे व्यापार में उन्नति मेरी पत्नी की धर्मपरायणता के ही कारण हुई है।

"जय सीताराम!" साधु के वेश में एक अधेड़ उम्र के पुरुष ने चेट्टियार के घर में प्रवेश करते हुए कहा। उसके हाथ में कमण्डलु था और मुख पर तेज।

यह दीपावली से एक दिन पहले की बात है। चेट्टियार की पत्नी ने अंजलि में चावल भर कर साधु का स्वागत किया, किंतु उस आदरणीय व्यक्ति ने कहा—"मुझे चावल नहीं चाहिए; भोजन की इच्छा है।"

"भोजन अभी तैयार हुआ जाता है; कृपा कर थोड़ी देर ठहर जाइये," मीनाची ने कहा और साधु को बैठने के लिए एक पटिया बिछा दी।

भोजन कर चुकने के बाद साधु बोला—"देवि, तुम्हें कभी किसी बात की कमी नहीं रहेगी। तुम धर्मात्मा और पतिव्रता स्त्री हो। मैं तुम्हें एक

पवित्र मंत्र सिखाता हूं। अगर तुम सिर पर तेल मलकर स्नान करने के बाद इस मंत्र का जाप करो तो तुम अपने पुरखों, स्वर्ग के देवताओं और ऋषियों के दर्शन कर सकोगी।"

सुन्दर चेट्टियार की धर्मपरायणा स्त्री यह सुनकर बहुत आनंदित हुई और उसने मंत्र सीख लिया। अगले दिन वह बड़े तड़के उठी और तेल मलकर नहाई। इसके बाद उसने साधु के कहने के अनुसार मंत्र का १००८ बार जप किया। जप के समाप्त होते ही उसे जयजयकार और शंखों की ध्वनि सुनाई दी। पूजा के स्थान के सामने एक बहुत बड़ी भीड़ खड़ी थी, जहां चमकते हुए सिंहासन वृत्ताकार में सजे हुए थे और उनपर देदीप्यमान महापुरुष विराजमान थे।

सुन्दर चेट्टियार की पत्नी ने देखा कि उसमें उसके पति के परपितामह के अतिरिक्त और भी कई व्यक्ति थे। एक के हाथ में बांसुरी थी, वह कृष्ण भगवान् मालूम होते थे। उनके बराबर ही हाथ में बड़ा-सा धनुष लिये जो खड़े थे वह राम जैसे दिखाई देते थे। उसके बाद वृद्ध ऋषि वसिष्ठ खड़े थे। अपना हल लिये बलराम भी वहां विद्यमान थे और अपना फरसा सम्हाले क्रोधी परशुराम भी। दूसरी ओर अर्जुन, भीम और धर्मपुत्र युधिष्ठिर बैठे थे। मीनाक्षी ने जिधर भी दृष्टि फेरी उधर ही उसे भारत के ऋषियों और महापुरुषों के दर्शन हुए। ऐसा मालूम होता था कि वे अपना रूप बदल रहे हैं; कभी वे एक रूप में दिखाई देते थे, कभी दूसरे में। भीड़ इतनी थी कि तिल रखने की भी जगह नहीं थी। इस दृश्य को देखकर मीनाक्षी आनन्द से गद्गद् हो गई और "नारायण" कहकर मूर्च्छित हो गई।

पत्नी की चीख सुनकर चेट्टियार जल्दी-जल्दी सीढ़ियों से उतरता हुआ नीचे आया। वहां उसने जो कुछ देखा वह उसकी समझ में नहीं आया। "ये अजीब तरह की पोशाकें पहने यहां कौन लोग बैठे हैं?" किसने यह अभिनय रचा है?" चारों ओर देखकर उसने अपने मन में सोचा। बजाज होने के कारण उसका ध्यान सबसे पहले उनके कपड़ों की ओर

गया । "यह तो गांधीजी के अनुयायियों का प्रदर्शन मालूम होता है," उसने फिर मन में सोचा। सब-के-सब खद्दर पहने हुए थे। किसीने बहुत मोटा खद्दर पहन रखा था, किसीने बहुत महीन और किसीने बीच के सूत का। लेकिन थे सब कपड़े खद्दर के ही ।

"श्रीमानो ! आप यहां क्यों पधारे हैं ? पुलिस अपत्ति करेगी," चेट्टियार ने कहा ।

सब-के-सब खिलखिलाकर हंस पड़े ।

"आप हंस सकते हैं। हो सकता है कि आप जेल जाने को तैयार हों, लेकिन मैं तैयार नहीं हूं," चेट्टियार बोला । "आप लोग कृपा कर कहीं दूसरे घर में चले जायं। अगला ही मकान एक वकील का है, आप वहां जाकर यह प्रदर्शन कर सकते हैं।"

एक बूढ़े महाशय ने चेट्टियार के पास आकर कहा—"बेटा, क्या तूने मुझे पहचाना नहीं ? सुन्दर, मैं तेरे बाबा का बाप हूं, जिसने तेरे बाप को जन्म दिया था। तू डरता क्यों है ?" यह कहकर उन्होंने चेट्टियार को छाती से चिपटाकर स्नेहपूर्वक प्यार किया ।

"वृद्ध महाशय! आपका अभिनय सचमुच बहुत सुन्दर है, मैं आपके चरण छूता हूं। लेकिन कृपा कर मेरे घर से चले जाइये, मैं अपने घर में यह खद्दर की सभा नहीं चाहता । आज त्योहार है, इसलिए मैं उचित नहीं समझता कि ऐसे दिन पुलिस आकर हमें परेशान करे," चेट्टियार ने कहा ।

"खद्दर से तुम्हारा क्या मतलब है, बेटे ? हम तो इसके सिवा और कोई दूसरा कपड़ा ही नहीं जानते । मैं जब यहां इस पृथ्वी पर रहता था, तब भी सिर्फ इस तरह के कपड़े पहनता था। मैं ही नहीं, हम सब इसी किस्म के कपड़े पहनते थे; हम करते भी क्या ? इसके अलावा कोई दूसरा कपड़ा ही नहीं था । इन्हीं कपड़ों को पहने-पहने मैं स्वर्ग चला गया। स्वर्ग में कपड़े न घिसते हैं न फटते । तुम्हारी पतिव्रता स्त्री ने मुझे पुकारा और मैं जल्दी चला आया," वृद्ध महाशय ने कहा ।

चेट्टियार हक्काबक्का रह गया। "ये सब व्यर्थ की बातें हैं, जरूर यह कांग्रेसियों की कोई सभा है, नहीं तो ये सब-के-सब खद्दर क्यों पहने होते ?" मन में यह सोच चेट्टियार धर्मपुत्र के पास गया जिनकी वेशभूषा से ही विश्वास की भावना उत्पन्न हो रही थी। उनके सामने साष्टांग पड़कर उसने कहा—"श्रीमान्, आप सच्चे आदमी मालूम होते हैं, मुझे ठीक-ठीक बताइये कि यह सब क्या है ?"

"सब ठीक है, बेटा ! चिन्ता या भय करने की कोई बात नहीं। जब हम इस पृथ्वी पर रहते थे तो हाथ के कते-बुने कपड़े के सिवा कोई दूसरा कपड़ा जानते ही नहीं थे। तुम अब उसी कपड़े को खद्दर कहते हो। हमारे पास दूसरी तरह का कोई कपड़ा नहीं था, जिसे हम पहन सकते। उन दिनों भारत में कपड़ा बहुत था और बाहर से नहीं आता था, बल्कि हम ही यहां से बाहर कपड़ा भेजा करते थे। मिलें न हमारे देश में थीं, न कहीं और। स्वर्ग में तो हमलोग अब भी यही कपड़ा पहनते हैं। तुम भी ऐसा ही क्यों नहीं करते ? सुनता हूं कि देश में बड़ी गरीबी है। क्या यह बात सच है ?"

सब को अच्छी तरह प्रणाम करने के बाद चेट्टियार में काफी साहस आ गया और उसने हरेक का कपड़ा अपने अंगूठे और तर्जनी के बीच रगड़कर देखा। राम, बलराम, कृष्ण, परशुराम, भीष्म, अर्जुन सभी ने शुद्ध खद्दर पहन रखा था।

"यह अजीब बात है! मैं तो सोचता था कि केवल महात्मा गांधी ने हाल में यह मजाक शुरू किया है और वही हरएक पर खद्दर पहनने के लिए जोर डाल रहे हैं। लेकिन इस समाज में तो सबने खद्दर पहन रखा है," चेट्टियार ने मन-ही-मन में सोचा और अपनी पत्नी की ओर देखा।

मीनाक्षी अभी उस स्वर्गीय आनन्द की मूर्छा से पूरी तरह जागी भी नहीं थी कि सबने एक साथ मिलकर कहा—"भगवान् तुम्हें सुखी रखें, अब हम जाते हैं," और चेट्टियार का बड़ा कमरा खाली हो गया।

यह बिलकुल सच है कि हमारे पुरखों के पास कोई दूसरी तरह का कपड़ा नहीं था। उसी कपड़े को पहने-पहने वे स्वर्ग सिधार गये थे और स्वर्ग में अब भी उसे ही पहने हुए हैं। वही कपड़ा हम यहां भी क्यों न पहनें ? यह विश्वास किया जा सकता है कि ऐसा करने से हम अपनी पुरानी महानता को भी प्राप्त कर लेंगे।

: १३ :

अबोध बालक

"मा, जब मैं सफेद गाय के पास जाता हूं तो वह मुझे सींग से डराती है, लेकिन करुप के सामने चुपचाप खड़ी रहती है ; यह क्या बात है ?"

"वह उससे परच गई है, इसलिए उसके सामने चुपचाप खड़ी रहती है। तुमसे नहीं परची है, इसलिए तुम्हें मारती है।"

"मैं भी उसे परचा लूं, मा ?"

"नहीं, नहीं ; तुम्हें क्या करना है ? तुम खेलो-कूदो। वह तो अछूत है, इसलिए उसे गाय चरानी पड़ती है। आओ, केक खा लो।"

सुब्बु था तो चार साल का, लेकिन अपनी अवस्था के लिहाज से वह बहुत बढ़चढ़कर बातें किया करता था और उसके माता-पिता उसे बड़ा लाड़-प्यार करते थे। उससे पहले उसके दो बहनें हो चुकी थीं।

"मा, तुम ऐसे केक कैसे बनाती हो ?"

"चीनी, दाल और नारियल की गिरी मिलाकर। खाकर बताओ, अच्छा है या नहीं।"

"अछूत क्या होता है ? करुप घर के अंदर क्यों नहीं आता ? और तो सब आते हैं।"

"वह अछूत जो है।"

"लेकिन अछूत क्या होता है ?"

"मैं बताऊंगी तो तुम्हरी समझ में नहीं आयगा। सवाल-जवाब छोड़ो और अपनी पोली खाओ।"

"मैं नहीं खाता। करुप घर के अंदर क्यों नहीं आता?"

"बकवास बन्द करो और भाग जाओ। देखते नहीं, वह कितना मैला है। अगर वह घर में आयगा तो हम मैले हो जायंगे।"

"मैला किसे कहते हैं, मा? गोबर को?"

"गोबर मैला नहीं होता। उसका बदन बहुत मैला है, वह कभी नहीं नहाता, वह अछूत है।"

"तो मैं करुप को अपने घर में नहाने के लिए कह दूं?"

"क्यों बक-बक करते हो? भाग जाओ। उसके साथ मत खेलना।"

"मैं तो उसीके साथ खेलूंगा और किसी के नहीं। उसे भी एक पोली दो।"

"नहीं अछूत के लड़के को पोली नहीं दी जाती। अगर मैं उसे दे दूंगी तो घर में रखी हुई सब पोली गन्दी हो जायगी। जाओ तुम्हें बाहर चाचा बुला रहे हैं। जाकर देखो वह क्या चाहते हैं।"

"पहले मुझे दूसरी पोली दो; मैं उसे जरूर दूंगा। उसे भी एक पोली खाने दो।"

"नहीं; पहले यहां बैठ कर इसे खालो तब जाना; लेकिन उसके पास मत फटकना।"

"तो मैं नहीं लेता," वह बोला और पोली नीचे रख कर घर के पीछे वाले आंगन में भाग गया।"

× × ×

"करुप, क्या तुम अछूत हो?"

"हां।"

"क्या मैं भी अछूत हूं?"

"नहीं, नहीं; तुम तो ब्राह्मण हो। अछूत मैं हूं।"

"तुम्हारी मा है?"

"हां, मेरी मा है।"

"क्या वह मेरी मा-जैसी है?"

"हां।"

"क्या वह तुम्हारे लिए पोली बनाती है?"

"पोली ! नहीं हमारे घर में पोली नहीं होती," उसने हँसते हुए कहा।

"आज दीवाली है। आज हम सब तेल मलकर गरम पानी से नहाये हैं। क्या तुम भी नहाये हो?"

"हमारा कुआं सूख गया है, और तेल खरीदने के लिए हमारे बाप के पास पैसा कहां से आया?"

"हमारे घर में नहा लो।"

"राम-राम; क्या तुम्हारी मा मुझे अन्दर घुसने देंगी?"

"तुम मेरे साथ आओ। अगर तुम नहाकर साफ हो जाओगे तो वह तुम्हें घर के अन्दर जाने देंगी।"

"नहीं जाने देंगी। ठोकर मारकर वह मुझे बाहर निकाल देंगी।"

"नहीं, नहीं, मेरी मा तुम्हें कभी नहीं पीटेगी।"

वे बातें कर ही रहे थे कि कृष्णैयर चाचा आ गये।

"तुम यहां हो सुब्बु ! देखो यह पटाखों का पाकिट।"

"सुब्बु कूद कर चाचा के कंधे पर चढ़ गया। कृष्णैयर ने उसे प्यार कर पटाखों का पाकिट दे दिया और कहा—"क्या तुम इन्हें सुलगाना जानते हो?"

"हां, हां जानता हूं," उसने पाकिट खोलकर पटाखों को फैलाते हुए कहा। "इन्हें आधा-आधा कर दो और एक हिस्सा करुप को दे दो।"

"अछूत का लड़का इनका क्या करेगा? उसे छूना मत। आओ अन्दर चलें" चाचा ने कहा और अछूत के लड़के की ओर देखकर धमकाया—"क्यों बे अछूत के बच्चे, इतनी बदतमीजी? हमारे लड़के के इतने पास मत आया कर। भाग यहां से।"

करुप भागकर कुछ दूर खड़ा हो गया, लेकिन उसकी आंखें पटाखों के पाकिट पर ही लगी रहीं।

सुब्बु की मा के जाने पर कृष्णैयर ने कहा—"अपने लाड़ले बेटे को तो देखो, सावित्री! चाहता है कि मैं अछूत छोकरे को पटाखे दे दूं।" यह कहकर उन्होंने सुब्बु को उठा कर प्यार किया।

"कितना अच्छा है यह! क्या बताऊं इसकी बातें?" मा ने अभिमान के साथ कहा और उसे अपनी गोद में उठाकर छाती से चिपटा लिया।

सुब्बु की समझ में कुछ नहीं आया। करुप गाय को बाहर निकालकर खेत पर चला गया।

इतने में सुब्बु की बहन पार्वती भारती का एक गीत गाती हुई आई—

"परैया स्वतंत्र होंगे! तीया स्वतंत्र होंगे!
और पुलैया भी, पुलैया भी;
सबके लिए स्वतंत्रता!

"मा, क्या तुमने आज का अखबार पढ़ा है? उसमें लिखा है कि अछूतों के लिए सारे मन्दिर खोल दिये जायंगे।" उसने मा से कहा।

"क्या जाने इन सब बातों का क्या नतीजा निकलेगा।" सावित्री ने कहा।

"तुम्हें नहीं पता? अब दुनिया उलट रही है," कृष्णैयर ने कहा।

: १४ :

सीताराम

सब-कलक्टर सीताराम की तनख्वाह बारह-सौ रुपया महीना थी। लेकिन वह अपने घर का खर्च बड़ी किफायत के साथ करते थे। शहर के दूसरे अफसर और उनकी पत्नियां उन्हें मक्खीचूस कहा करती थीं।

सीताराम और उनकी पत्नी में परस्पर बड़ा प्रेम था, फिर भी उनमें एक भेद की बात थी। हर महीने तनख्वाह मिलते ही सीताराम नौ सौ रुपये इंग्लैण्ड भेज देते थे और उनकी पत्नी चेष्टा करने पर भी यह नहीं समझ पाई थीं कि आखिर ये रुपया हर महीने क्यों भेजे जाते हैं। पहले वह समझती रहीं कि उनके पति इंग्लैण्ड के किसी बैंक में जमा होने के लिए भेजते हैं और यह सोचकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता होती थी। किन्तु बाद में उनकी समझ में आया कि यह बात नहीं हो सकती। स्वयं अपनी इच्छा से धन बचाने में और विवशतावश किसी को रुपये देने में बड़ा अन्तर होता है, जो कि हमारे दैनिक व्यवहारों में और उसके कारण उत्पन्न होनेवाली मानसिक दशा द्वारा स्पष्ट दिखाई दे जाता है।

एक दिन सीताराम ने अपनी पत्नी से कहा—"जब मैं इंग्लैण्ड में पढ़ रहा था तो मुझपर कर्ज हो गया था और उसी कर्ज को उतारने के लिए मैं हर महीने रुपया भेजा करता हूं।" लेकिन उनकी पत्नी की समझ में यह बात नहीं आई कि जब सारा खर्च ससुर करते रहे थे तो फिर पति पर कर्ज कैसे हुआ। फिर भी पत्नी को न तो शंका प्रकट करने की गुंजा-

इश होती है और न बहुत-से प्रश्न करने की। कभी चर्चा छिड़ती भी तो सीताराम चुपचाप बात बदल देते और दूसरा प्रसंग ले उठते। कभी-कभी उनकी पत्नी इंगलैण्ड के जीवन के विषय में सुनी हुई बातों का ध्यान कर उद्विग्न हो उठती, किन्तु उनके प्रति सीताराम का प्रेमपूर्ण व्यवहार इन शंकाओं को टिकने न देता। "मुझे चिन्ता करने की जरूरत ही क्या है," वह सोचती, "बात चाहे कुछ भी हो, मैं समझूंगी कि उनकी तनख्वाह ३०० रुपये ही है।" ऐसी ही बातों से वह अपने आप को तसल्ली देती; भारतीय नारियों के परम्परागत पतिव्रत की विशेषता और शक्ति होती ही ऐसी ही है।

सीताराम ससुर के रुपये से इंगलैण्ड गये थे और वहां तीन वर्ष रहकर उन्होंने आई० सी० एस० की परीक्षा पास की थी। जब वह इंग्लैण्ड के लिए रवाना हुए थे तो उनकी पत्नी सुन्दरी की अवस्था उन्नीस वर्ष की थी। वह बड़ी रूपवती थीं, लेकिन गहने-कपड़े पुराने ढंग के पहनती थीं। वह समझती थीं कि इस बात से उनके पति प्रसन्न होंगे। उनका और उनकी मा दोनों का यह हार्दिक विश्वास था कि जितने ही अधिक गहने खरीदे और पहने जाते हैं, उतनी ही अधिक सुन्दरता भी बढ़ती है। इसके विपरीत, बेचारे सीताराम सोचते कि अगर मेरी पत्नी अपनी नाक से वह भद्दी नलकी और कान से वे बड़े-बड़े बुँदे निकालकर सिर्फ बारीक चूड़ियों का जोड़ा पहने रहे और पुराने ढंग की चक्करदार साड़ी के बजाय हलकी साड़ी नए ढंग से सफाई के साथ पहने तो कितनी सुन्दर लगे। इसी तरह रेशमी किनारी की कोहनी तक लटकती हुई भद्दे रंग की आस्तीनें भी उन्हें बुरी लगतीं और वह सोचते कि आस्तीनें तो बिलकुल होनी ही नहीं चाहिएं।

लेकिन सच पूछिये तो यह स्वयं भी पुराने विचारों के थे। उन्हें अपनी पत्नी को यह बताने में बडा संकोच होता था कि पहनने-ओढ़ने के बारे में उनके अपने विचार क्या हैं। यह सोचते कि अगर मैं कहूंगा तब भी ये पुराने विचारवाले आदमी मेरी बात मानेंगे नहीं और इस

प्रकार वह असंतोष के कीड़े को अपना मस्तिष्क चाटने देते। वह सिनेमा जाते और वहां रूपवती स्त्रियां देखते—परदे पर दिखाई जानेवाली और सिनेमा देखने आने वाली भी। "एक ये हैं जो अपने रूप का अच्छे-से-अच्छा उपयोग करना जानती हैं और एक मेरी स्त्री है जो कोरी बुद्धू है," वह अपने मन में विचार करते और अपने दुर्भाग्य पर ठंडी आह भरकर रह जाते। लेकिन फिर यह सोचकर कि अच्छा इंग्लैण्ड हो आऊं तो सब बातें ठीक करूंगा, वह बात टाल देते और इससे उन्हें कुछ तसल्ली हो जाती।

सीताराम इंग्लैंण्ड पहुंचे। जिधर भी उनकी दृष्टि गई उन्हें सुघड़ता ही सुघड़ता दिखाई दी। उन्होंने सोचा—"कैसा सुन्दर शरीर है! कैसे सुरुचिपूर्ण कपड़े! मेल और अनुपात का कैसा सूक्ष्म विवेक! ये सुन्दर आचार-व्यवहार! ये चमकते हुए मुखड़े! यह अनुकूल वातावरण! यह तो सचमुच स्वर्ग है; इससे अधिक मनुष्य और क्या चाह सकता है?"

कुछ दिनों तक इस स्वर्ग में अप्सराओं के बीच रहने के बाद एक अप्सरा उनसे अधिक आत्मीयता के साथ मिलने-जुलाने लगी! इस स्वर्गीय जीव से तो केवल बातें करने में इतना आनन्द आता है!" उन्होंने सोचा कि जीवन को सुखी बनाने के लिए इसके अतिरिक्त और क्या चाहिए, न विवाह न बच्चे! ऐसा था वह सुख जो उन्हें उसके संग मात्र से मिलना था। उससे अलग होते ही वह उदास हो जाते। उन्हें अपनी पत्नी सुन्दरी की याद आती जिसे वह गांव में छोड़ आये थे। धीरे-धीरे उसके लिए उनके मन में एक प्रकार की अरुचि-सी होने लगी।

एक दिन सीताराम के बुरे ग्रह पराकाष्ठा पर थे। उस अप्सरा ने अपना जाल बड़ी सफलता के साथ फैलाया था और अन्त में सीताराम उसमें फंस ही गये। उन्होंने उससे व्याह करने का निश्चय कर लिया। बातें तैं हुई और तीन सप्ताह के भीतर-ही भीतर सब कुछ

समाप्त हो गया। इंग्लैण्ड में ऐसा प्रबंध होता है कि यदि कोई चाहे तो आध घंटे से भी कम में व्याह सम्पन्न हो जाय।

शुरू-शुरू में बातें करते समय एक दिन सीताराम ने खुशी की एक गैर-जिम्मेदार भावना से प्रेरित हो उस स्त्री से कह दिया कि मैं अभी तक क्वारा हूं। स्वभावतः उन्हें बाद में भी यह असत्य निभाना पड़ा। ऐसी भूलों को सुधारना बड़ा मुश्किल है।

बातें इसी आधार पर आगे बढ़ती रहीं और अन्त में यह असत्य व्याह के समय रजिस्टरी करनेवाले सरकारी अफसर के सामने दुहराया गया। व्याह के समय इस प्रकार की घोषणा आवश्यक होती है, क्योंकि इंग्लैण्ड में पत्नी के जीवित रहते हुए कोई पुरुष दूसरी स्त्री के साथ व्याह नहीं कर सकता। इस दृष्टिकोण से अंग्रेजी कानून में स्त्री और पुरुष में कोई अन्तर नहीं माना जाता।

सीताराम और उनकी अप्सरा ने विवाह के बाद फौरन ही पति-पत्नी की तरह जीवन बिताना आरम्भ नहीं किया। कुछ कठिनाइयां ऐसी थीं जिनके कारण यह बात थोड़े दिनों के लिए रोकनी पड़ी। सीताराम ने अपने घर पत्र लिखा और कुछ कारण बताकर अधिक रुपया मंगवाया। ससुर ने रुपया भेज दिया और उसके बाद सीताराम अपनी अंग्रेज पत्नी के साथ रहने लगे।

सीताराम ने अनुभव किया कि उनकी अप्सरा का स्वभाव दिन पर दिन शीघ्रता के साथ बिगड़ता जा रहा है! जिस सुशीलता और सुघड़ता की पहले यह इतनी प्रशंसा किया करते थे, वह धीरे-धीरे कम होती दिखाई दी और अंत में बिलकुल लुप्त हो गई। उन्हें उसके स्वभाव में सचमुच कठोरता दिखाई देने लगी, यहां तक कि एक दिन उन्होंने सोचा कि सुन्दरी निश्चय ही उससे ज्यादा अच्छी है।

जल्दी ही सीताराम को यह मालूम हो गया कि जिन सुन्दर होठों की मैं प्रशंसा किया करता हूं वे लिपस्टिक से बराबर रंगे रहने के कारण इतने भले मालूम पड़ते हैं और अब वे रंगे हुए नहीं होते तो

सचमुच भद्दे दिखाई देते हैं। कभी-कभी वह सोचते कि उम्र के बारे में भी धोखा खाया है। तब उन्हें सुन्दरी के होठों और मुंह का ध्यान आता और वह इस नतीजे पर पहुंचते कि वे अंग्रेज अप्सरा के होठों और मुँह से हजारगुने सुन्दर हैं।

एक दिन सीताराम को यह भी पता चला कि अंग्रेज अप्सरा के सिर पर जो बाल हैं वे उसके अपने नहीं हैं। उस दिन उन्हें जो मानसिक पीड़ा हुई उसका वर्णन नहीं किया जा सकता, क्योंकि नरक में पड़ी हुई आत्माएं ही उसे समझने में समर्थ हो सकती हैं। अन्त में यह बात भी स्पष्ट हो गई कि केवल बाल ही नहीं, भौंहें भी रंगकर काली बनाई गई हैं। एक महीने बाद उन्होंने यह भी देखा कि श्रीमती के मोती-जैसे सफेद दांत एक डिब्बे के अन्दर दो कतारों में हिफाजत से रखे हुए हैं। निस्संदेह इन बातों की खबर उन्हें देर से लगी।

सीताराम अधिक सहन न कर सके। उन्होंने गले में फांसी डालकर इस कष्ट से छूटने का संकल्प किया।

वह कुरसी पर कमर लगाकर बैठ गये और अपने आपको कोसने लगे। उन्हें अपने गांव और मन्दिर की याद आई। उन्हींका ध्यान करते हुए उन्होंने आंखें बन्द कर लीं और सोच में डूब गये। बचपन के दिनों की याद नदी की तरह उमड़ आई। मरी हुई माता का रूप उनके आंखों के सामने आ खड़ा हुआ। उन्होंने देखा कि मा की आंखों में दया भरी हुई है। इसके बाद उन्हें अपनी पत्नी की सुध आई। उन्हें ऐसा लगा मानों भोली सुन्दरी उनके वापिस आने की प्रतीक्षा कर रही है और उसके मुख पर तेज है, जैसा तपस्या के समय उमा के मुख पर था। आत्महत्या से पूर्व मनुष्यों को ऐसी ही मानसिक अनुभूतियां होती हैं और उन्हें ऐसे ही सपने दिखाई देते हैं। सीताराम की आंखों में आंसू भर आये।

तब एकाएक उन्हें डिब्बे में रखे हुए दांतों का ध्यान आया। नकली दांतों की दोनों पंक्तियां उनके सामने सजीव बनकर खड़ी हो गईं

और उनका मखौल उड़ाती हुई बोलीं—"मूर्ख, तू धोखा खा गया।"

"तो क्या इस सड़ी हुई औरत के पीछे मैं अपनी जान दे दूं ? नहीं, नहीं ; कितनी बड़ी मूर्खता का काम करने जा रहा था मैं !" सीताराम ने अपने मन में कहा और कुरसी से उठ वह कपड़े पहनकर बाहर चले गये।

कुछ दिनों तक इधर-उधर मारे-मारे फिरने के बाद एक दिन संयोगवश उन्हें मद्रास क्रिश्चियन कॉलेज के एक प्रोफेसर मिल गये। उन्होंने अपनी शिक्षा उसी कॉलेज में प्राप्त की थी। प्रोफेसर से उन्होंने अपनी मूर्खता की सारी कहानी कह सुनाई और उनकी सहायता मांगी। प्रोफेसर को अपने पुराने शिष्य पर दया आ गई। वह उसे जाल से निकालने की चेष्टा करने लगे और अन्त में उस औरत को समझौते के लिए तैयार करने में सफल हो गये। सीताराम को इस बात के लिए राजी होना पड़ा कि जब वह इम्तहान पासकर इण्डियन सिविल सर्विस में ले लिए जायेंगे तो अपनी तनख्वाह का, चाहे वह कितनी भी हो, एक बड़ा हिस्सा हर महीने उस औरत को भेज दिया करेंगे। रकम तै कर दी गई और इकरारनामे पर हस्ताक्षर कर सीताराम ने सोचा—"बड़े भाग्य जो इस जाल से छूटा ; चाहे किसी भी शर्त पर सही।" व्याह करानेवाले अफसर के सामने झूठी घोषणा करने के कारण लम्बी जेल काटने, सदा के लिए अपमानित होने और किसी प्रकार की भी नौकरी न पाने का भय था।

उन्होंने कसकर पढ़ाई की और आई॰ सी॰ एस॰ की परीक्षा में उत्तीर्ण हो वह भारत के लिए चल पड़े। जहाज से उतरकर भारत की भूमि पर पैर रखते ही उन्हें ऐसा लगा मानो वह अपनी मा की गोद में आ गये हों और उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। विदेश से भारत लौटनेवाले सभी लोगों के हृदय में ऐसी भावना उठती है, लेकिन सीताराम के साथ जो घटनाएं घटी थीं उनके कारण उन्हें यह अनुभूति और भी तीव्र रूप में हुई। घर पहुंचकर जब उन्होंने सुन्दरी को देखा तो परम्परा

का ध्यान जाता रहा और उन्होंने सारी भीड़ के सामने उसे अपनी छाती से लगा लिया। उसके पुराने ढंग के कपड़े और गहने अब सचमुच सुन्दर दिखाई देने लगे; उसकी कोहनी तक पहुंचनेवाली आस्तीनें, जिन्हें पहले वह घृणा की दृष्टि से देखते थे, अब सुरक्षा और हर्ष की भावना उत्पन्न करने लगीं। डूबने से बचाये जाने पर जो भावना किसी व्यक्ति को सूखी भूमि पर खड़े होने में होती है वही भावना सुन्दरी की पुराने ढंग की चीजें देखकर सीताराम को हुई। सुन्दरी कितनी रूपवती और सुसंस्कृत है, यह बात उनकी समझ में तब आई।

यह ज्ञान सीताराम को सचमुच बड़ा महंगा पड़ा, लेकिन अब जिस प्रेम का उदय उनके हृदय में सारे संसार को जीवनदान देनेवाले सूर्य के समान हुआ, उसके लिए जो भी कीमत दी जाय वही कम।

: १५ :

पटाखे

"बापू मैं पटाखे लूँगा," वीर के लड़के ने रोकर कहा। लेकिन बेचारा वीर पटाखे कहां से लाता? ब्राह्मणों के मोहल्ले और जुलाहों की गली में दीपावली से तीन दिन पहले से ही बच्चे पटाखे छुटाने लगे थे। वीर का लड़का दस गज दूर खड़ा-खड़ा तमाशा देख रहा था। जब कभी वह बिना जले हुए टुकड़ों को उठाने के लिए नीचे झुकता तभी झिड़ककर दूर हटा दिया जाता।

दूसरे दिन और भी बुरा हुआ। पटाखों के छूटने की आवाज हर जगह से आ रही थी। "क्या बात है कि सबके घर में पटाखे हैं। और हमारे घर में नहीं," यह प्रश्न बच्चे के मन में बराबर उठ रहा था, लेकिन उसका कोई समाधान नहीं हो पा रहा था। अपने आप से पूछते हुए उसे डर लग रहा था।

उसे भूख लग रही थी, लेकिन अपने मोहल्ले में जाने का उसका मन नहीं कर रहा था। ब्राह्मणों की गली में खड़ा-खड़ा वह बच्चों के पटाखे छुटाने का मज़ा ले रहा था।

"दूर खड़ा हो," एक आदमी ने सड़क पर से निकलते हुए कहा। वीर का लड़का डर से कांप उठा और भागकर एक गली में दीवाल से सटकर खड़ा हो गया।

क्या वीर का लड़का जानता था कि उसे इस तरह डरकर क्यों छिपना

पड़ा ? बच्चे क्या सोचते हैं, यह कौन समझ सकता है ? उसके पास ही एक छोटा-सा पिल्ला खड़ा था । उस बेचारे जानवर से उसे आत्मीयता मालूम हुई और जब तक वह ब्राह्मण चला नहीं गया तब तक वह उसे थपथपाता रहा । फिर वह गली से बाहर निकल आया और बहुत देर बाद अपने मोहल्ले में लौट गया ।

"बापू मुझे पटाखे ला दो," उसने वीर से कहा । इसपर उसके बाप ने उसके गाल पर इतना कसकर तमाचा लगाया कि वह जमीन पर गिर पड़ा ।

"नशे में चूर होकर घर आते हो और लगते हो बेचारे लड़के को पीटने" वीर की स्त्री ने चिल्लाकर कहा । "शराब-ताड़ी में जो रुपये फूंकते हो उसमें-से क्या तुम एक पैसा भी बचाकर इसके लिए पटाखे नहीं खरीद सकते ? क्या वह मांग भी नहीं सकता ? इसके लिए क्या मार डालोगे उसे ?" मा लड़के को उठाकर पुचकारने लगी ।

"मा, मैं पटाखे लूंगा" लड़के ने फिर कहा ।

"चुप रह, अछूत के लड़के को पटाखों से क्या काम ?" यह कहकर वह रसोई बनाने चली गई ।

"अगर तूने फिर पटाखों का नाम लिया तो मैं तुझे जान से मार डालूँगा," वीर ने उसे धमकाते हुए कहा ।

२

दोर स्वामी ऐयंगर के घर बड़ी धूम मच रही थी । मद्रास से उसका दामाद मय बिस्तर और ट्रंक के आया था । उनकी तीसरी लड़की का ब्याह शेल ऐयंगर नाम के यूनिवर्सिटी के एक ग्रेजुएट से हाल में ही हुआ था । चार हजार रुपयों से जितनी धूमधाम की जा सकती थी उतनी ब्याह में की गई ! ब्याह के बाद की यह पहली दीवाली थी और शेल बहुत-सारी चीजें लेकर आया था । अपने छोटे सालों के लिए वह बीस पाकिट पटाखों और फुलझड़ियों के लाया था । उन सबको बांटकर वह अपनी सास के पास चला गया । उसके सालों, किट्टू और

चीनू ने, जो क्रमशः सात और चार वर्ष के थे, पटाखों को आपस में बांट लिया। चीनू चाहता था सारे पीले डिब्बे मैं ही ले लूं, लेकिन किट्टू ने देने के लिए मना कर दिया।

"बेबी को पीले डिब्बे दे दो," कमला ने कहा। कमला उस गर्वीली लड़की का नाम था जिसका हाल ही में ब्याह हुआ था।

बच्चों का झगड़ा निबटाने के बाद उसने फिर कहा—"इन्हें अभी छुटाना मत ; दीवाली तो कल है। कल जब तेल मलवाकर नहा लोगे तब ये पटाखे छुटाने को मिलेंगे।"

इसके बाद वह अपनी मा के पास चली गई।

× × ×

"मैं तो अपने पटाखे अभी छुटाऊंगा," किट्टू ने कहा।

"मैं नहीं छुटाता ; मैं तो अपने कल छुटाऊंगा," चीनू ने कहा।

"मैं एक पाकिट आज छुटाऊंगा और बाकी कल के लिए रख दूंगा," किट्टू बोला।

वे दोनों अपने पटाखे लेकर मा के पास पहुंचे।

"मा, इन्हें अच्छी तरह रख दो," चीनू बोला और उसने अपने हिस्से के पटाखे मा की गोद में डाल दिये। दामाद के आने की प्रसन्नता में मा ने चीनू को छाती से चिपटा लिया और उसे प्यार करते हुए कहा—"तुम बड़े राजा बेटे हो।" फिर पटाखों के डिब्बे को उस आलमारी में रखकर जिसमें अक्सर चांदी के बर्तन रखे रहते थे वह दामाद से बातें करने चली गई।

३

दीवाली का दिन आया। "हाय, वह तो सब कुछ ले गया ; एक हजार रुपये के चांदी के बर्तन चले गये," दोरस्वामी की पत्नी सीता ने रोते-रोते कहा।

"उसने मेरा बटुआ भी चुरा लिया। बैंक से निकाले हुए सारे रुपये मैंने उसी में रख दिये थे," दोरस्वामी ने विलाप-सा करते हुए कहा।

"हमें जाकर पुलिस में खबर करनी चाहिए," दामाद ने कहा।

"तुम्हारा कितना रुपया था?" सीता के छोटे भाई आरामुदु ने पूछा।

"मा, सारे पटाखे कहां है?" चीनू बोला?

"शी...ी...ी, सारे पटाखे चोर ले गया," किट्टू ने चुपके-से उसके कान में कहा।

"चोर कौन होता है?" चीनू ने पूछा।

"वह काला आदमी होता है और रात को सबके सो जाने पर घर में घुसकर सब चीजें ले जाता है" किट्टू ने बताया।

"क्या वह कल यहां आया था?" चीनू ने पूछा और किट्टू ने गर्दन हिलाकर स्वीकारात्मक संकेत किया।

"तो क्या वह सारे पटाखे ले गया?" चीनू ने पूछा और वह रोने लगा।

"रो मत बेबी! हम चोर को पकड़कर मारेंगे," सीता ने कहा।

"कमबख्त चोर बच्चों के पटाखे तक ले गया," कमला बोली।

दोरस्वामी ऐयंगर ने अपने बटुए को चारों ओर तलाश किया और न मिलने पर वह सिर पकड़कर एक कोने में बैठ गये।

"जो जाना था, चला गया; अब वापस तो आ नहीं सकता। चलो, नहा लो," सीता ने अपने दामाद की ओर मुड़कर कहा।

"नहीं, पहले हमें चावडियूर जाकर फौरन पुलिस को खबर करनी चाहिए। चाचा चलिये।" शेल ऐयंगर ने कहा और वह चाचा कृष्ण ऐयंगर को साथ लेकर चला गया।

"चोर ने चांदी का एक भी बर्तन नहीं छोड़ा; मैं अपने दामाद का सत्कार कैसे करूंगी?" सीता ने कहा।

४

वीर का लड़का पटाखे छुटा रहा था। मोहल्ले के दूसरे लड़के चारों ओर खड़े होकर तालियां पीट रहे थे और खूब खुश हो-होकर चिल्ला रहे थे।

उन्हें पटाखे कहां से मिले?

किसी को नहीं पता। दीवाली के दिन वीर ने चार डिब्बे पटाखों के लाकर अपने लड़के को दिये और कहा—"ले, इन्हें छुटा।" लड़का खुशी से उछल पड़ा और "पटाखे, पटाखे" चिल्लाता हुआ मां के पास भाग गया।

× × ×

दीवाली से अगले दिन दो आदमी आये और वीर को ले गये। जब वीर वापस नहीं लौटा तो उसकी पत्नी अपने लड़के को लेकर स्कूल के मास्टर के पास गई और बोली—"हमारी ओर से एक अर्जी लिख दीजिए।"

"वे पुलिस के आदमी थे। तुम्हारे आदमी पर ताला तोड़कर मकान में घुसने और चोरी करने का इल्ज़ाम लगाया गया है," अध्यापक [illegible] लिंग पिल्ले ने बताया।

"हाय, मैं तो बरबाद हो गई," औरत ने रोते हुए कहा और दोनों हाथों से अपना सिर पीट लिया।

ताड़ी की दूकान में खबर मिलने पर पुलिसवाले सारे [illegible] में अछूतों के मोहल्ले में गये और कुप को गिरफ्तार कर पुलिस चौकी पर ले गये। उसके बाद पूछताछ करने के लिए वे फिर अछूतों के मोहल्ले में गये। उन्हें कूड़े में पटाखों के टुकड़े मिले और [illegible] मालूम हुआ कि पटाखे वीर के छोटे लड़के ने छुटाये थे। पुलिसवाले सारे टुकड़े इकट्ठे करके ले गये।

वीर को चावडियूर ले जाकर वे उससे अपने [illegible] पूछताछ करने लगे।

"मारिये मत, मैं आपको सारी बातें बता दूंगा," [illegible]

दूसरे दिन तलैयूर के वेंकट और चेल्लप्प नाम के दो [illegible] जाति के आदमी गिरफ्तार किये गए। पुलिसवालों ने [illegible] में कुप सुनार के घर की तलाशी ली और उससे [illegible] किये। अगले दिन उसके ससुर के घर की तलाशी ली [illegible]

से पांच-सौ रुपये के नोट और चांदी के बर्तन बरामद हुए।

५

वीर का लड़का गवाहों के कटघरे में खड़ा था।

"तुम्हारे बाप ने तुम्हें पटाखे दिये थे?" उससे पूछा गया।

"हां हजूर; नहीं हजूर," लड़के ने कहा।

"सच-सच बोलो; डरो मत," दारोगा ने सख्ती के साथ कहा।

मैंने बापू से पटाखे मांगे थे, लेकिन उसने मेरे मुंह पर थप्पड़ मारा और मुझे धक्का देकर नीचे गिरा दिया। मैं कसम खाकर कहता हूं कि मैंने पटाखे नहीं छुटाये," लड़के ने कहा।

"असली बात यही है, हजूर। दूसरा गवाह झूठ बोलता है। वे सब झूठे," इजलास के एक कोने से एक औरत ने चिल्लाकर कहा।

"इसे गिरफ्तार कर लो," दारोगा ने डपटकर हुक्म दिया।

दो सिपाही फौरन आगे बढ़े और उन्होंने वीर की स्त्री को ले जाकर मजिस्ट्रेट की मेज के पास खड़ा कर दिया।

"खबरदार! तू अदालत में गवाही देते वक्त अपने लड़के को सिखाने-पढ़ाने आई है?" मजिस्ट्रेट ने धमकाकर कहा और वीर की स्त्री ऐसी कांपने लगी मानो मूर्छित हो जायगी!

"इसे बाहर ले जाओ," मजिस्ट्रेट और दारोगा ने एक साथ आज्ञा दी।

मुकदमे की सुनवाई फिर शुरू हुई। वीर के लड़के ने पटाखों के बारे में तीन तरह के बयान दिये।

"बस काफी है," मजिस्ट्रेट ने कहा। इसके बाद दारोगा ने अदालत के सामने एक लम्बा-चौड़ा भाषण दिया।

एक सप्ताह बाद मजिस्ट्रेट ने वीर और तलैयूर के कैदियों को रिहा कर दिया। दोनों सुनारों को सजा हो गई। तलैयूर के कैदियों के संबंध में मजिस्ट्रेट ने अपने फैसले में कहा—"सिर्फ वीर के पुलिस के सामने दिये हुए बयान पर तलैयूर के दोनों कैदियों को सजा नहीं दी जा सकती।"

वीर के खिलाफ भी काफी शहादत नहीं थी। अछूतों के मोहल्ले में पटाखों के टुकड़ों का मिलना संदेहजनक अवश्य था, लेकिन चूँकि इस बात का कोई पक्का सबूत नहीं था कि कूड़े के ढेर में पाये गये टुकड़े इन्हीं पटाखों के थे जो दोरस्वामी ऐयंगर के घर से चोरी गये थे, इसलिए मजिस्ट्रेट ने वीर पर से अभियोग उठाकर उसे मुक्त कर दिया।

६

"वेंकट! पटाखों के पाकिट उस गधे के सिवा और किसी ने नहीं लिए होंगे। उसी की वजह से यह सारी मुसीबत आई," चेन्नराय ने कहा।

"मैंने तो उससे उसी वक्त कहा था कि कोई दूसरी चीज ले ले, लेकिन वह माना ही नहीं। जब वह सारे पटाखों को लेकर बांध रहा था तभी घर में किसीकी आवाज आई और हमें फौरन भागना पड़ा," वेंकट ने कहा।

"जो पेशा जिस जाति का नहीं होता उसे करने से यही नतीजा निकलता है। उस आदमी को साथ लेकर हमने भूल की," चेन्नराय बोला।

चोरी का पेशा करनेवाले इन आदमियों को इस बात का बिलकुल पता नहीं था कि वीर का लड़का पटाखों के लिए रोया था या वीर ने उसे मारा था।

वीर वापस आ गया। जेल में उसे बराबर खाना मिलता रहा था, लेकिन उसके घर में एक दाना भी नहीं था। उसकी स्त्री हंडिया लेकर किसानों के मोहल्ले में दलिया मांगने गई। पति के घर लौटने पर उसे जो खुशी हुई उसे भूख भी नहीं दबा सकी।

वीर के लड़के ने फिर कभी पटाखों के लिए जिद नहीं की। अगर वह किसीको पटाखे छुटाते देखता तो अनायास भाग खड़ा होता।

: १६ :

जगदीश शास्त्री का सपना

बावन साल की उम्र में जगदीश शास्त्री रंगून से अपने जन्म-स्थान तिरुविडैमरुदूर वापस लौटे। पहली बार वह रंगून सुब्बैयर नामक बैरिस्टर के रसोइया बनकर गये, परन्तु जल्दी ही उन्होंने भोजन बनाने का काम छोड़ दिया और वह वहां के बसे हुए ब्राह्मणों के धार्मिक संस्कार कराने का काम करने लगे। चूँकि उनका जन्म एक पुरोहित-कुल में हुआ था इसलिए वह कुछ मंत्र उच्चारित कर लेते थे। जिन मंत्रों का उच्चारण वह नहीं जानते थे उन्हें वह एक छपी हुई पुस्तक से, जो उन्होंने इसी काम के लिए अपने पास रख छोड़ी थी, पढ़कर सीख लेते थे।

रसोइया और पुरोहित का काम करके जगदीश शास्त्री ने जो रुपया कमाया उसे वह ब्याज पर चलाने लगे और जल्दी ही धनवान बन गये। अफवाह तो यहां तक थी कि उनके पास एक लाख रुपया नकद है।

रंगून में रहते हुए जगदीश शास्त्री ने कई बार ब्याह करने की बात सोची, लेकिन उनकी इच्छा पूर्ण न हो सकी। बाद में अवस्था अधिक हो जाने के कारण उन्होंने यह विचार छोड़ दिया और निश्चय किया कि तिरुविडैमरुदूर में थोड़ी-सी जमीन खरीद ली जाय और स्वर्ग का रास्ता साफ करने के लिए एक बेटा गोद ले लिया जाय तथा शेष दिन शांति के साथ बिताने जायें। परन्तु तिरुविडैमरुदूर लौटकर जब वह कुम्भ पर,

जो उसी साल बारह वर्ष बाद पड़ा था, स्नान के लिए कुम्भकोण जाकर ठहरे तो वहां एक ऐसी घटना घटी जिससे उनके जीवन का प्रवाह ही बदल गया।

वहां वह जिस मकान में ठहरे थे उसमें नागेश्वरैयर नाम का एक दूसरा आदमी भी अपनी तीन लड़कियों के साथ ठहरा हुआ था। वे भी स्नान के लिए ही आये थे। जगदीश शास्त्री को पता चला कि नागेश्वरैयर एक जौहरी हैं और किसी बीमा कम्पनी के एजेन्ट भी। वह उत्तरी अरकाट जिले का रहनेवाला था, लेकिन बहुत दिनों तक आन्ध्र देश में रह चुका था और उसके बाद कुछ समय तक कलकत्ते में भी रहा था। उसकी दो बड़ी लड़कियों का ब्याह हो चुका था, परन्तु तीसरी अभी क्वारी थी। उसकी उम्र चौदह वर्ष की थी। वह रूपवती और वीणा बजाने में बड़ी निपुण थी। जगदीश शास्त्री की आयु ५२ वर्ष की थी परन्तु थे वह अब भी हट्टे-कट्टे। नागेश्वरैयर का कहना था कि कोई भी उन्हें देखकर चालीस वर्ष से अधिक का नहीं समझ सकता था।

जगदीश शास्त्री को पता चला कि नागेश्वरैयर के पास बीमा कम्पनी का जो रुपया था उसे उसने खर्च कर दिया है और अब उसको पूरा करने का उसे कोई साधन नहीं मिल रहा है। इसलिए तय हुआ कि जगदीश शास्त्री ६ हजार रुपया देकर नागेश्वरैयर को अपना ऋण चुकाने में सहायता दें और शीघ्र ही तिरुपति में उनका नागेश्वरैयर की छोटी लड़की से चुपचाप ब्याह हो जाय। रुपया दे दिया और ब्याह भी हो गया। नागेश्वरैयर किसी आवश्यक कार्य से कलकत्ते लौट गया और जगदीश शास्त्री को बड़ा आश्चर्य हुआ जब उन्हें उसका कोई समाचार नहीं मिला। लेकिन इस बात पर ध्यान न देकर वह अपनी युवती पत्नी के साथ रंगून चले गये।

२

दो वर्ष भी न बीते होंगे कि जगदीश शास्त्री की पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया। जगदीश शास्त्री ने उसका बड़े लाड़-प्यार से लालन-

पालन किया जैसे कि कभी बड़े-बड़े अधिक आयु में पुत्र उत्पन्न होने पर करते हैं।

दो-तीन साल और बीतने पर उनकी पत्नी के चरित्र के विषय में इधर-उधर बदनामी की बातें कही जाने लगीं। ये बातें शास्त्री के कानों में पड़ीं, लेकिन इस विषय में उन्होंने अपने को बिलकुल लाचार पाया। एक दिन घर लौटने पर उन्होंने देखा कि उनकी पत्नी अपनी वीणा, गहने और कैशबक्स के सारे रुपये लेकर चम्पत हो गई। इससे बूढ़े शास्त्री को बड़ा क्षोभ हुआ!

लड़का अब सात साल का था और स्कूल में पढ़ता था। उसकी शिक्षा और कुछ चुने हुए मित्रों के घर पुरोहिताई के काम में व्यस्त रहकर शास्त्री अपना दुःख बहुत-कुछ भूल गये थे।

स्कूल की शिक्षा सफलतापूर्वक समाप्त कर रामचन्द्र विश्वविद्यालय में भरती हुआ और उन्नीस वर्ष की उम्र में उसने बी० ए० की डिग्री ले ली। सन् १९३० ई० में बाप-बेटा अपने देश लौट आये।

जगदीश शास्त्री के एक चचेरे भाई थे। उनका नाम सीतारामैयर था और वह एक बड़े सफल वकील थे। वह अपने काम में इतने निपुण समझे जाते थे कि जगह खाली होने पर उनके एडवोकेट-जनरल बनने की आशा थी। स्वभावतः जगदीश शास्त्री उन्हीं के यहां आकर ठहरे और सीतारामैयर की पत्नी ने रामचन्द्र को अपनी लड़की पार्वती के लिए उपयुक्त वर समझा। "इससे अच्छा वर हमें और कहां मिल सकता है? बी० ए० तो वह कर ही चुका है; हम उसे आई० सी० एस० की परीक्षा के लिए इंग्लैंड भेज सकते हैं," उसने अपने पति से कहा और सीतारामैयर ने भी उसका समर्थन किया। लेकिन बीच में एक रुकावट थी—शारदा कानून। लड़की अभी ग्यारह साल की थी और कानून को बिना तोड़े उसका ब्याह फौरन नहीं हो सकता था। किन्तु जिस व्यक्ति को एडवोकेट-ज़नरल बनने की आशा थी वह कानून के विरुद्ध कैसे काम कर सकता था?

सीतारामैयर की पत्नी ब्याह को टालकर इतने अच्छे जामता के हाथ से निकल जाने देने का खतरा मोल नहीं चाहती थी। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि अगर ब्याह अभी नहीं किया जा सकता तो कम-से-कम दोनों ओर से पक्की लिखा-पड़ी हो जानी चाहिए। अतः आपस में लिखा-पढ़ी हुई और तय हुआ कि लड़के को आई० सी० एस० के लिए इंग्लैंड भेजने का सारा खर्च सीतारामैयर करेंगे और तीन वर्ष बाद उसके वहां से लौटने पर ब्याह हो जायगा। लड़की काली थी इसलिए रामचन्द्र को उसके प्रति कोई अनुरक्ति नहीं थी। फिर भी अपने पिता की इच्छा को ध्यान में रखकर और इंग्लैंड जाने की उत्सुकता के कारण उसने कोई आपत्ति नहीं की।

३

रामचन्द्र के इंग्लैंएड चले जाने के बाद जगदीश शास्त्री रंगून वापस चले गये, लेकिन वहां बिना अपने बेटे के अकेले रहने के कारण उनका चित्त शांत नहीं रहता था। अक्सर उन्हें अपनी स्वर्गीय पत्नी की याद आ जाती थी। इस मानसिक अशान्ति का प्रभाव उनके शरीर पर भी पड़ा और धीरे-धीरे उनका स्वास्थ्य गिरने लगा। इसे शरीरिक रोग समझकर उन्होंने अपने को डाक्टर को दिखाया। डाक्टर ने विश्वास दिलाया कि आपके स्वास्थ्य में कोई खराबी नहीं है, लेकिन आपको अपने देश लौट जाना चाहिए। जगदीश शास्त्री को यह सलाह अच्छी लगी और वह रंगून को सदा के लिए छोड़कर भारत चले आए।

स्टीमर में एक अनहोनी घटना घटी। जगदीश शास्त्री ने सेकएड क्लास में एक महिला को देखा जो उनकी खोई पत्नी से मिलती-जुलती थी। थोड़ा-बहुत अन्तर तो अवश्य था, परन्तु उसे उन्हें छोड़कर गये भी तो पन्द्रह वर्ष से अधिक हो गये थे। स्टीमर के मद्रास पहुंचते-पहुंचते उन्हें इस बात का करीब-करीब पूरा विश्वास हो गया कि यह मेरी पत्नी ही है। बन्दरगाह पहुंचने पर जब वह महिला अपने असबाब

के साथ उतरने लगी तो वह उसके सामने जाकर खड़े हो गये। एक क्षण तक वे एक-दूसरे को देखते रहे। फिर उस महिला ने कहा—"मैं अंगप्पनायक गली ६१४ नम्बर के मकान में ठहरी हुई हूं; अगर आप बातचीत करना चाहते हैं तो वहां आकर मिल सकते हैं।" इस पर शास्त्री हंस पड़े और बोले-- "तो अखिर तुम्हीं हो; मैंने ठीक समझा था।"

"हां, मैं ही हूं," उसने भी हंसकर उत्तर दिया।

४

दो दिन तक शास्त्री अपने सम्बन्धी सीतारामैयर के घर रहे और वहां उनकी बड़ी शान के साथ खातिरें हुईं। उन दिनों दक्षिण में इस बात की चारों ओर चर्चा थी कि अछूतों की मंदिर-प्रवेश की स्वतंत्रता दी जाने-वाली है। "सनातनधर्म नष्ट हो गया," सीतारामैयर के घर में सबने कहा। शास्त्री का भी यही विचार था।

"शारदा बिल के पेश होने पर आप लोग चुप क्यों बैठे हो? वह उसीका फल है," सीतारामैयर ने कहा।

"बेकार की बातें मत करो, उस बात का इससे क्या सम्बन्ध?"

सीतारामैयर बोले।

"नहीं, उनका कहना बिलकुल ठीक है," शास्त्री ने कहा। एक-दूसरे वकील ने, जो सीतारामैयर के नीचे काम सीखा करता या, नम्रता के साथ कहा--"क्या आपको रंगून जाने के लिए समुद्र पार नहीं करना पड़ा? इस बात से भी मंदिर-प्रवेश का मार्ग साफ ही होता है।"

"इन अललटप बातों का क्या मतलब? क्या जीविका कमाने के लिए रंगून जाना और पवित्र मंदिरों को अछूतों के लिए खोल देना एक ही बात है?" जगदीश शास्त्री ने अधीरता के साथ पूछा।

"शास्त्रों में केवल चार वर्णों का उल्लेख है। कोई पांचवा वर्ण तो होता नहीं, अगर हम अछूतों की गिनती चौथे वर्ण में कर लें तो इससे नुकसान क्या होगा?" छोटे वकील ने पूछा।

"आप लोग शास्त्रों के अनुवाद भर पढ़कर पूर्ण पंडितों की तरह बातें करने लगते हैं। चार वर्ण तो आरम्भ में ईश्वर ने बनाये थे, लेकिन बाद में दो वर्णों के मिलने से नये अपवित्र वर्ण उत्पन्न हो गये। चांडाल इन्हीं अनियमित विवाहों के फल हैं," जगशीद शास्त्री ने कहा।

"ऐसा मालूम होता है कि ब्रह्मा को अपने काम में सफलता नहीं मिली। क्या आपके कहने का मतलब यह है कि अछूत कही जानेवाली जाति के सभी लोग चरित्रहीन ब्राह्मणियों की संतान है?" छोटे वकील ने पूछा।

"इन बातों की गहराई तक जाने से कोई लाभ नहीं! हम उन्हें पीढ़ियों से चांडाल मानते आये हैं। हम अब उनकी पहचान के सबूत नहीं मांग सकते। हम ब्राह्मण हैं, इसी बात का क्या प्रमाण है?" जगदीश शास्त्री ने उत्तर दिया।

कचहरी जाने का समय हो जाने के कारण सभा विसर्जित हो गई और जगदीश शास्त्री ६१४ अंगप्पनायक गली के लिए चल पड़े।

५

उसी दिन शाम को जगदीश शास्त्री सेण्ट्रल स्टेशन पर बनारस का टिकट लेते हुए दिखाई दिये। सुबह की अपेक्षा उस समय उनकी आयु दस वर्ष अधिक मालूम हो रही थी।

"आप किस रास्ते से जाना जाहते है, बाबा?" टिकट बाबू ने पूछा।

"कोई भी रास्ता हो, लेकिन हो सबसे पास का। मुझे जल्दी-से-जल्दी गंगाजी में नहाकर अपने पाप धोने है," जगदीश शास्त्री ने कहा।

जगदीश शास्त्री के इस वैराग्य का कारण वे बातें थीं जो उन्हें ६१४ अंगप्पनायक गली में अपनी पत्नी से मालूम हुई थीं। जगदीश शास्त्री का ससुर न तो ब्राह्मण था न जौहरी। उसका असली नाम परियारी नायक था। एसिस्टेंट एकाउन्टेण्ट-जनरल त्यागराजैयर उसे अपने साथ कलकत्ते ले गये थे, जहां उसकी बाल काटने की एक दूकान थी। इस पुश्तैनी पेशे में लगे-लगे ही उसने एक अनाथ विधवा को घर में पत्नी के

रूप में रख लिया था और जगदीश शास्त्री की पत्नी उसी से जन्मी थी। अपनी लड़की के ब्याह के बाद वह किसी फौजदारी के षड्यंत्र में फंस गया और उसे सात साल की जेल हो गई। वह अब भी लाहौर की जेल में बन्द था।

जगदीश शास्त्री की पत्नी उन्हें रंगून में छोड़ने के बाद इधर-उधर घूमती फिरी और अन्त में वह एक सिनेमा कम्पनी में भरती हो गई और वहां उसने खूब धन कमाया। उसने शास्त्री को बताया कि मुझे अब किसी बात की कमी नहीं, मैं खूब खुश हूं और आपसे किसी तरह की सहायता लेना नहीं चाहती।

"मैंने और मेरे पिता ने मिलकर आपको ठगने का जाल रचा था; हमें केवल भगवान् ही क्षमा कर सकता है," उसने कहा।

इन सब बातों के होते हुए भी जगदीश शास्त्री अपनी पत्नी की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सके। उसके प्रति उनके मन में पहले से भी अधिक प्रेम उमड़ पड़ा और वह बच्चे की तरह रोने लगे।

फिर उन्होंने कहा—"पता नहीं यह जात-पांत बनाई किसने? भगवान् ने ऐसा कभी नहीं किया होगा। चलो, पिछली बातों को भूलकर रंगून चलें और वहां आनन्द से रहें।"

"ऐसी बातें कहने से कोई लाभ नहीं। मैं तो आपको स्पर्श करने योग्य भी नहीं हूँ। मेरा पाप तो सात पीढ़ियों तक नहीं धुल सकता। जाइये, गंगाजी नहाकर मुझसे ब्याह करने का पाप धो आइये," शास्त्री की पत्नी ने कहा। जब शास्त्री घर से बाहर निकले तो उन्हें बड़ा भय मालूम हुआ। उन्हें अपने लड़के का ध्यान आया जो उस समय इंग्लैण्ड में पढ़ रहा था और कुछ ही महीनों में वापस आनेवाला था। "उसका ब्याह होना है; अगर किसीको पता चल गया कि वह इस कुलटा का लड़का है तब? इस औरत की जाति क्या है? और इस लड़के की जाति क्या है? सीतारामैयर और उनकी पत्नी क्या कहेंगी?" शास्त्री

का सिर चकराने लगा। वह लड़खड़ाते हुए बड़ी कठिनाई से स्टेशन तक पहुंचे।

रेल-यात्रा की दूसरी रात को शास्त्री के साथवाले यात्रियों ने उन्हें बूढ़ा और कमज़ोर समझ तरस खाकर लेटने की जगह दे दी। वह थके हुए थे और जल्दी ही गहरी नींद में सो गये। सोते-सोते उन्हें एक भयानक सपना दिखाई दिया।

"रामचन्द्र इंग्लैण्ड से वापिस आ गया है। अब यह सुन्दर ब्राह्मण का लड़का नहीं लगता। शापग्रस्त त्रिशंकु की तरह वह कुरूप होकर घर आया है और पूरी तरह से एक अछूत का लड़का बन गया है। वह आई० सी० एस० नहीं बल्कि सिर्फ एक कुली है। परन्तु शास्त्री उसे अब पहले से भी अधिक प्रेम करने लगे हैं।

उन्होंने देखा कि सीतारामैयर और उनकी पत्नी ने उन्हें घर से बाहर निकाल दिया है। माली ड्राइवर और भंगी सब उन्हें झिड़कियां दे-देकर वहां से भाग रहे हैं। गली में भीड़ इकट्ठी हो गई, जिसमें-से शास्त्री अपने लड़के के साथ किसी तरह निकल भागे।

अब शास्त्री अपने गांव में पहुंच गये, लेकिन वहां सबको पता लग गया कि उन्होंने एक अछूत लड़के को अपने घर में शरण दे रखी है। लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गई और उन्होंने उन्हें खदेड़कर ब्राह्मणों की गली से बाहर भगा दिया।

शास्त्री अपने बेटे के साथ फिर मद्रास पहुंचे। दोनों एक बस में चढ़े। चढ़ते ही कण्डक्टर ने पूछा—"यह लड़का किस जाति का है?" गले में माला पहने हुये एक बूढ़े आदमी ने चिल्लाकर कहा—"यह लड़का चांडाल है अछूत है।" इसे बाहर फेंक दो' "बस में बैठे हुए सब आदमियों ने चिल्लाकर कहा। बसवाले ने शास्त्री को घसीटकर बाहर खींचा और बाप-बेटा एक-साथ नीचे कूदे। इस अपमान को सह न सकने के कारण वे गली में जा छिपे।

इसके बाद दृश्य बदला। वह मैलापुर में सीतारामैयर के घर पहुंचे

"क्या आप मेरे लड़के को अपने दफ्तर में क्लर्क नहीं रख सकते ?" शास्त्री ने सीतारामैयर से हाथ जोड़ कर कहा।

"यह कैसे हो सकता है ? मेरी पत्नी को आपत्ति होगी," सीतारामैयर ने कहा और उसी समय उनकी पत्नी भी अन्दर से आगई। जगदीश शास्त्री भय से कांपने लगे।

"हमारे दफ्तर में अछूत बैठकर काम करे ? क्या ही अच्छा विचार है आपका ! हमें उसकी जरूरत नहीं। हमारा रुपया फौरन वापस करो," सीतारामैयर की पत्नी ने कहा और एक दस्तावेज़ दिखाया। यह वही काग़ज़ था जिसपर रामचन्द्र के ब्याह का इकरारनामा लिखा गया था। सीतारामैयर रामचन्द्र के लिए पन्द्रह हज़ार रुपये खर्च कर चुके थे। उन्होंने शास्त्री से यह रक़म वापस करने को कहा।

दृश्य फिर बदला। पीले वस्त्र पहने और हाथ में त्रिशूल लिए एक महन्त मृगछाला पर बैठे दिखाई दिये। स्वामीजी ! क्या आप मेरे लड़के की शुद्धि कर उसे ब्राह्मण बना सकते हैं" शास्त्री ने उससे पूछा।

"असम्भव ; एक जन्मजात चांडाल की शुद्धि की कोई आशा नहीं," स्वामी ने मधुर वाणी में कहा ? "उसकी जाति तो उसी समय मिट सकती है जब उसका शरीर जलकर भस्म हो जाय। यदि वह इस जन्म में अपनी जाति के धर्म का पूर्ण रूप से पालन करे तो दूसरे जन्म में वह उच्च जाति में जन्म लेगा। फिर भी ब्राह्मण का जन्म पाने से पहले तो उसे कई जन्म लेने पड़ेंगे।"

"बदमाश ! बड़ा संन्यासी बना है ? क्या तू उस विश्वासघात के मामले को भूल गया जिसमें तुझे दण्ड मिला था ? क्या तूने झूठी दरख्वास्तें नही दी थीं ? क्या तूने किराये पर ली हुई चीज़ें नहीं बेच डाली थीं ? तुझे ती जेल होनी चाहिए थी, लेकिन तू जुर्माना देकर ही छूट गया था। क्या इन बातों में कोई पाप नहीं है ?" शास्त्री ने चीखते हुए कहा।

संन्यासी की आंखें गुस्से से लाल हो गईं। 'अछूत कहीं का, मैं तुझे

श्राप देता हूं। तूने मेरी निंदा की है और एक संन्यासी को उसके जीवन की पहली बातें याद दिला दी हैं," संन्यासी चिल्लाकर बोला और डण्डा लेकर मारने को दौड़ा। शास्त्री भागे और उनका सिर गली के फाटक से टकराया।

रेल की गद्दी से लुढ़ककर नीचे गिरने से बूढ़े शास्त्री की आखें खुल गई और उनका सपना टूट गया।

दूसरी रात को शास्त्री को अपने लड़के के बारे में और भी स्वप्न दिखाई दिये। आंखें बन्द करते ही उनका तांता-सा लग गया।

शास्त्री अपने बेटे के साथ फिर इधर-उधर मारे-मारे फिर रहे थे। दोनों को भूख लगी और वे एक कॉफी-घर में घुसे। बैरा ने उनके सामने दो पत्तों पर चावल के केक परस दिये। वे खाना शुरू ही करनेवाले थे कि फिर पास में बैठे हुए एक आदमी ने पूछा—"यह लड़का कौन है?" शास्त्री ने डर के मारे कोई उत्तर नहीं दिया। इतने में एक आवाज आई—"वह चाण्डाल है" और तब सब-के-सब एक-साथ चिल्ला उठे—"यह अछूत है, इसे बाहर निकाल दो।" बैरे ने लड़के से चावल का केक छीनकर कूड़े के बर्तन में फेंक दिया और लड़के को धक्का देकर बाहर निकाल दिया। शास्त्रा उसके पीछे "मेरे बच्चे" कहते हुए भागे।

कुम्भकोण के रायबहादुर नरसिंहचारियर दिल्ली असेम्बली के मेम्बर थे। शास्त्री ने उनसे कहा—"जब आप दिल्ली जायं तो कृपाकर मेरे लड़के को अपना क्लर्क बनाकर ले जायें। वह बी० ए० पास कर चुका है, परन्तु मेरे पाप के कारण वह अचानक अछूत बन गया है।"

"नहीं शास्त्री! यह ठीक है कि दिल्ली में हम जातपांत अधिक नहीं मानते। लेकिन एक अछूत को हम अपने घर में कैसे रख सकते हैं? अगर वह शूद्र होता तब भी कोई बात नहीं थी,," नरसिंहाचारियर ने कहा।

"तो क्या आप उसे शुद्धकर शूद्र बना सकते है ?" शास्त्री ने उत्सुकता से पूछा ।

"मैं शूद्र कैसे बना सकता हूं ? आप तो कह रहे थे कि मैं अपवित्र जाति का हूं," लड़के ने कहा ।

"हां, यह सच है । क्या इन शास्त्रों को जलाया नहीं जा सकता ?" शास्त्री ने चिल्लाकर कहा ।

"कोई बात नहीं पिताजी, मैं रेल का कुली बन जाऊंगा ; वहां किसी को आपत्ति नहीं होगी," रामचन्द्र बोला ।

"यह भी कोशिश कर देखो," शास्त्री ने दुःखी होकर कहा ।

रामचन्द्र फौरन रेल का कुली बन गया । पहली बार के असबाब ढोने में उसे चार आने पैसे मिले । लेकिन दूसरे दिन जब वह किसी आदमी का ट्रंक और बिस्तर उठाकर अपने सिर पर रखनेवाला था तभी एक दूसरा लड़का दौड़ता हुआ आया और चिल्लाया—"साहब, साहब, यह अछूत का लड़का है ।"

उस ट्रंक और बिस्तर का मालिक एक ब्राह्मण अफसर था । उसने कहा—"क्यों बे, तूने मेरे असबाब को छूने की कैसे हिम्मत की ?" और अपनी छतरी की नोक से लड़के की कमर खोदी। रामचन्द्र ट्रंक और बिस्तर को नीचे डालकर अपराधी की तरह भाग खड़ा हुआ।

अपने अभिशापित लड़के को लेकर शास्त्री फिर चले । आकाश के किसी भाग से "चांडाल, चांडाल" की ध्वनि बराबर आ रही थी । जब वृक्षों की पत्तियां खड़खड़ातीं तो उनमें से भी वही ध्वनि सुनाई देती थी । बूढ़े शास्त्री थककर चूर हो गये, उनकी टांगों में दर्द होने लगा और प्यास के मारे उनका हलक सूख गया । लेकिन पास में कोई तालाब या कुआं दिखाई नहीं दिया ।

"मैं बहुत प्यासा हूं बेटा, थोड़ा-सा पानी ले आओ," शास्त्री ने कहा ।

"मुझे पानी कौन देगा, पिताजी ?" रामचन्द्र ने कहा ।

"ठीक है, मेरे बच्चे । न तो कोई हमें पानी देगा, न कहीं से लेने ही देगा । हमें तो मरना ही पड़ेगा ।

हम मरेंगे क्यों, उठिये, पिताजी ; हम इंग्लैण्ड चलेंगे । वहां जात-पांत या छुआछूत का कोई झगड़ा नहीं ।"

"हम इंग्लैण्ड कैसे जा सकते हैं ? अभी तो हम वृदाचल में ही हैं," शास्त्री ने कहा !

"देखिये, सामने एक सीढ़ियोंवाला कुआं है । चलिये हम वहां उतर कर पानी पियें," यह कहकर लड़का अपने पिता को उस ओर ले चला । भय से कांपते हुए वे सीढ़ियों से नीचे उतरे । वहां कोई नहीं, इसलिए दोनों ने जी भरकर प्यास बुझाई । ऊपर चढ़ते समय उन्हें एक बूढ़ी औरत मिली । उन्हें देखकर वह चिल्लाई—"जल्दी आओ, जल्दी आओ ; किसी चांडाल ने आकर हमारे गांव का कुआं अपवित्र कर दिया । दुष्ट कहीं का !"

फौरन भीड़ जमा होगई । गुस्से में भरकर सब लोग लड़के पर टूट पड़े । शास्त्री लड़के का हाथ पकड़कर एक दूर के मन्दिर की ओर भागे ।

"हे भगवान् ! हमारी रक्षा तुम्हीं कर सकते हो," उन्होंने चिल्लाकर कहा । लेकिन जब वह मन्दिर के पास पहुंचे तो उनके मन में एक शंका हुई और वह रुक गये ।

"भगवान् ! सब कहते हैं कि मेरा लड़का चांडाल है । क्या हम तुम्हारे मन्दिर में भी नहीं आ सकते ? तुम्हारे सिवा और कौन हमें शरण दे सकता है ?" उन्होंने रोकर कहा ।

"तुम बिना किसी डर के अन्दर आ सकते हो, मैं सबका माता-पिता हूं । मैं कोई भेदभाव नहीं करता," अन्दर से एक आवाज आती हुई सुनाई दी । शास्त्री अपने लड़के के साथ अन्दर चले गये । "तो आखिर हमें शरण और रक्षा की जगह मिल ही गई," उन्होंने कहा ।

उसी समय एक पुरोहित चिल्लाता हुआ आया—"हे भगवान् ! देवता

के घर में चांडाल घुस आया।" बहुत-से दूसरे आदमी भी आ पहुंचे और बाप-बेटे के चारों ओर तुरन्त ही भीड़ इकट्ठी हो गई।

"इस अछूत के लड़के की ढिठाई तो देखो! मारो, इसे ठोकर लगाओ," वे चिल्लाये।

"यह चांडाल नहीं है, यह मेरा बेटा है," शास्त्री ने चिल्लाकर कहा।

उसी समय कहीं से शास्त्री की पत्नी आ पहुंची। "यह झूठ है, बूढ़े का विश्वास मत करो, वह मेरा बेटा है, दोगला है, चांडाल है," उसने चिल्लाकर कहा!

"चुड़ैल! विश्वासघातिनी! बदजात! शास्त्री ने मन्द स्वर में कहा। फिर वह भीड़ की तरफ मुँह करके खड़े हुए और बोले—"भगवान् ने स्वयं अपने श्रीमुख से हमें अन्दर आने की अनुमति दी है, क्या आपने नहीं सुना?"

"हमने कुछ नहीं सुना, इसकी खाल उधेड़ दो, इसे जान से मार डालो," वे चिल्लाये और रामचन्द्र पर टूट पड़े।

"हे भगवान्!" शास्त्री चिल्लाये और उठकर बैठ गये। उन्होंने देखा कि टिकट-चेकर उन्हें धीरे-धीरे थपथपाकर जगा रहा है। "उठकर बैठो बाबा! तुम चिल्ला क्यों रहे हो? अपना टिकट तो दिखाओ।"

यह केवल सपना था, लेकिन शास्त्री बहुत देर तक बैठे-बैठे कांपते रहे। जाग जाने पर भी उन्हें ऐसा मालूम होता रहा कि पटरी पर चलने से गाड़ी का जो शब्द हो रहा था उसमें से 'अछूत, अछूत' की ध्वनि आ रही थी।

× × ×

कुछ समय बाद रामचन्द्र इंग्लैण्ड से लौट आया और कुरनूल में असिस्टेण्ट कलक्टर नियुक्त हो गया। उसके जन्म की कथा न उसे बताई गई न सीतारामैयर को ही।

जगदीश शास्त्री का लापता हो जाना सबको बुरा लगा और कुछ दिनों तक सब लोग उन्हें प्रेमपूर्वक याद करते रहे। किसी ने कहा कि

उन्हें एकाएक वैराग्य उत्पन्न हो गया और वह संन्यासी बनने के लिए बनारस चले गये; किसी ने कहा कि वह गंगा में डूब मरे।

कुछ दिनों तक उनके लौटने की प्रतीक्षा की गई, लेकिन जब वह वापस नहीं आए तो इकरारनामे के अनुसार असिस्टेण्ट कलक्टर मिस्टर जे. आर. चन्द्र का ब्याह सीतारामैयर की लड़की के साथ हो गया। मैलापुर के और ब्याहों की भांति यह ब्याह भी धूमधाम और शान के साथ हुआ।

कथा, संस्मरण व जीवनी-साहित्य

महाभारत कथा (चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य) ५)

महाभारत की सम्पूर्ण कथा—सरल रोचक शैली में।

श्रेयार्थी जमनालालजी (हरिभाऊ उपाध्याय) ६॥)

आदर्श देश-सेवक श्री जमनालालजी की विस्तृत जीवनी।

मानवता के झरने (ग० वा० मावलंकर) १॥)

बंदियों के जीवन की हृदयस्पर्शी सच्ची घटनाएँ।

सप्तदशी (संपादक—विष्णु प्रभाकर) २)

हिंदी के सत्रह प्रतिनिधि कहानी लेखकों की चुनी हुई कहानियां।

अमिट रेखाएँ (संपा०—सत्यवती मल्लिक) ३)

मार्मिक संस्मरण और भाव-चित्रों का अपूर्व संग्रह

रीढ़ की हड्डी (संपादक—विष्णु प्रभाकर) १॥)

हिंदी के प्रसिद्ध नाटककारों के चुने हुए एकांकियों का संग्रह।

भारत के स्त्री-रत्न (तीन भाग) ७॥)

वैदिक युग से जैनकाल तक की आदर्श भारतीय महिलाओं की जीवन-गाथा।

उपनिषदों की कथाएँ (शंकरराव देव) १)

उपनिषदों की चुनी हुई रोचक व शिक्षाप्रद बालोपयोगी कथाएं।

मानव-धर्म की आख्यायिकाएं (नानाभाई भट्ट) १)

भारतीय जीवन एवं मानवधर्म उद्बोधक उपाख्यान।

अस्थि-पिंजर (यमुनादत्त वैष्णव) २॥)

इस कहानी-संग्रह में लेखक ने वैज्ञानिक विषयों के साथ-साथ जीवन के ध्वंसकारी विषयों को भी लिया है।

मैं मरूंगा नहीं! (यशपाल जैन) २॥)

हिंदी के सात्विक और सरल लेखक की प्रेरणादायक कहानियां।

अशोकवन (पं० गोकुलचन्द शर्मा) १॥)

जनकनन्दिनी के बन्दी-जीवन की पद्यबद्ध कथा।

राजाजी की अन्य पुस्तकें

१. महाभारत कथा
२. उपनिषद्
३. भगवद्गीता
४. वेदान्त
५. आत्म-चिंतन
६. शिशु-पालन

दो रुपया